गोचर फलदर्पण

(एक आधुनिक और वैज्ञानिक अध्ययन)

कर्नल अशोक कुमार गौड़

अनुवाद डा० उदय कांत मिश्र

गोचर फल दर्पण

(एक आधुनिक और वैज्ञानिक अध्ययन)

लेखक

(कर्नल) अशोक कुमार गौड़

अनुवादक एवं परिवर्द्धन

डॉ. उदयकान्त मिश्र

एल्फ़ा पब्लिकेशन

2640, रोशनपुरा, नई सड़क, दिल्ली-110 006

प्रकाशक
ए.एल. जैन
एल्फ़ा पब्लिकेशन
2640, रोशनपुरा,
नई सड़क, दिल्ली-110 006
दूरभाष : 011-23275468

© सर्वाधिकार लेखकाधीन

संस्करण : 2017

मूल्य : 200.00

टाइप सेटिंग
शारदा कम्प्यूटर्स
दयालपुर दिल्ली-110094

प्राक्कथन

कर्नल गौड़ में एक अद्भुत प्रतिभा है। वे ज्योतिष शास्त्र के अत्यन्त पुराने सिद्धान्तों को भी, जो हमें ऋषियों से परम्परा के रूप में प्राप्त हुए हैं और जिनके बारे में एक निश्चित सोच-सी बन गई है, नए सिरे से देखते और परखते हैं तथा उनमें अपनी मौलिक सोच से कुछ नई व्याख्या ढूँढ़ निकालते हैं।

मेरे मार्ग निर्देशन तथा सम्पादन में सन् 1991 में प्रकाशित 'एडवान्स टेकनीक्स ऑफ एस्ट्रोलॉजिकल प्रिडिक्शन्स' में पहली बार एक सुन्दर आलेख लिख कर उन्होंने अपनी मौलिक प्रतिभा का प्रदर्शन किया था। बाद में, व्यवसाय पर उनकी पुस्तक आई जिसमें उन्होंने ढेर सारी बहुआयामी तकनीकों का प्रयोग किया था।

इस पुस्तक में गोचर की व्याख्या के बारे में उनके मौलिक सिद्धान्त उभर कर सामने आए हैं। ज्योतिष शास्त्र के विद्यार्थियों को इस पुस्तक में अनुसन्धान के लिए नई राहें मिलेंगी। इस पुस्तक से दिशा-निर्देश लेकर उन्हें गंभीरता से अपने अनुसन्धान के पथ पर आगे बढ़ना होगा।

अब तक की गई व्याख्याओं से परे, आने वाले वर्षों में गोचर की विशद और विशेष व्याख्या करने की आवश्यकता है।

—के. एन. राव

दो शब्द

गोचर ज्योतिष का एक उपेक्षित अंग है। कुछ भ्रान्तिवश, कुछ अज्ञानवश इस विधा का ठीक-ठीक निरूपण नहीं हो पाया। गोचर का ज्ञान फलादेश के लिए आवश्यक है। उदाहरण के लिए, किसी कुंडली में उत्थान के राजयोग स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे हैं। दशा-अन्तर्दशा भी ठीक है फिर भी फल अपेक्षा के अनुसार नहीं प्राप्त हो रहे। इसके क्या कारण हो सकते हैं? इसका उत्तर गोचर में है। दो लंकेशों की कहानी तो सर्वविदित है ही। एक लंकेश थे—रावण और दूसरे थे—विभीषण। तुलसीदास जी के शब्दों में,

जो सम्पति सिव रावनहि, दीन्हि दिएँ दस माथ।
सोई सम्पदा विभीषनहिं, सकुचि दीन्हि रघुनाथ।।

इन दोनों लंकेशों की कुंडलियों में राजा बनने के योग थे। दशा और गोचर के कारण एक को राजा बनने के लिए दस सिरों का बलिदान करना पड़ा; जबकि दूसरे को विधाता ने बिना परिश्रम के सारा राजपाट दे दिया। गोचर ज्ञान ज्योतिष के सैकड़ों रास्तों में से सबसे आसान और छोटा रास्ता पता करने में मदद करता है।

गोचर की पुस्तक मूल रूप से मैंने अंग्रेजी में लिखी। उसका हिन्दी अनुवाद किया है—डॉ. उदयकान्त मिश्र ने। उदय एक ऐसे ज्योतिषी हैं, जो विज्ञ हैं। संस्कार और परम्परा से जुड़े, धर्म में आस्था की नींव पर आधुनिक शिक्षा द्वारा परिमार्जित विचारों को ज्योतिष जैसे विषय में समाहित कर लेना उनकी विज्ञता का लक्षण है। उनके अनुवाद से हिन्दी पाठकों को यह पुस्तक प्राप्त हुई है। उदय प्रशंसा के पात्र हैं।

श्री जैन ने इस पुस्तक को कम समय में, मेहनत से आकर्षक रूप से छाप कर चार चाँद लगा दिए हैं।

ज्योतिष के विद्यार्थियों और पाठकों के लिए यह हिन्दी अनुवाद 'बिनु प्रयास सागर तरिहि' के मंत्र के रूप में काम करेगा। इस पुस्तक के बारे में अपने विचार अवश्य दें ताकि इसका परिमार्जन कर इसे अच्छे-से-अच्छा बनाया जाए।

–(कर्नल) अशोक कुमार गौड़

चतुर्थ संस्करण की भूमिका

विघ्ननाशक श्री गणेश की कृपा से इस पुस्तक का चतुर्थ संस्करण इतनी जल्दी अपने पाठकों के आगे प्रस्तुत करते हुए हम उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता अनुभव करते हैं।

भारतीय विद्या भवन में मेदिनी ज्योतिष की शिक्षा का आधार गोचर ही होता है। गोचर का प्रयोग विभिन्न चक्रों पर किया जाता रहा था परन्तु हमें ये सभी चक्र एक स्थान पर उपलब्ध नहीं हुए। विद्यार्थियों के सतत् अनुरोध पर प्रायः हर उपलब्ध चक्र को सम्भवतः पहली बार एक ही स्थान पर संकलित किया गया है; आशा है कि हमारे इस प्रयास से पाठकों की दीर्घकाल से लम्बित इच्छा का, किंचित् मात्र में ही सही, परिपोषण हो सकेगा।

पिछले संस्करणों के सभी उदाहरणों को इस संस्करण में समसामयिक बनाया गया है तथा पौराणिक कथाओं को यहाँ से हटा कर 'ज्योतिष प्रवेशिका' नाम की पुस्तक में डाल दिया गया है। माँ सरस्वती की कृपा के कारण हुए हमारे इस प्रयास से सुधी पाठकों को थोड़ा भी लाभ पहुँचेगा तो हम अपने परिश्रम को सफल मानेंगे।

—अमृत लाल जैन

लेखक एवं अनुवादक के बारे में

लखनऊ के एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में कर्नल अशोक कुमार गौड़ का जन्म 9 मार्च, 1938 को हुआ। राष्ट्रीय रक्षा अकादमी तथा भारतीय मिलिट्री अकादमी से दीक्षित कर्नल गौड़ भारतीय सेना में मात्र 19 वर्ष की आयु में सम्मिलित हुए। 34 वर्षों की अबाध सेवा के उपरान्त कर्नल गौड़ ने भारतीय सेना से स्वेच्छा से निवृत्ति ले ली। धर्म और ईश्वर में आस्था तथा जीवन की शाश्वतता का पाठ उनकी माँ ने मानो उन्हें घुट्टी में ही पिला दिया था। इसलिए सेना के दुरूह अभियानों में भी, जहाँ कर्नल गौड़ सदैव आगे रहते थे, इसी आस्था और विश्वास ने उन्हें सबकी आँखों का तारा बना दिया था। तभी उन्हें जीवन और मृत्यु की निरन्तरता का ज्ञान हुआ।

उसी आस्था और विश्वास के साथ चरम सत्य की तलाश में कर्नल गौड़ श्री के.एन. राव के सम्पर्क में वर्ष 1989 में भारतीय विद्या भवन में आए और तब से यहीं के होकर रह गए। श्री राव के बाद भारतीय विद्या भवन के ज्योतिष संस्थान के वरिष्ठतम सदस्य हैं–कर्नल गौड़।

अनेक विद्वतापूर्ण तथा शोधपरक लेखों के अलावा गोचर की इस पुस्तक से पहले कर्नल गौड़ एक पुस्तक 'व्यवसाय' पर भी लिख चुके हैं जो इस विधा की पहली पुस्तक है। व्यवसाय पर यह पुस्तक आज तक बेजोड़ मानी जाती है। कर्नल एक जन्मजात प्रशिक्षक हैं। फौज में भी प्रशिक्षण देते रहे और भारतीय विद्या भवन के तो अकल्पनीय रूप से लोकप्रिय शिक्षक हैं ही। दुरूह से दुरूह विषयों और घोर परम्परागत सिद्धान्तों को सहज बनाते हुए आधुनिक परिप्रेक्ष्य में समझाने की उनकी प्रतिभा स्पृहणीय है और अनुकरणीय भी, जिसके आधार में है–कर्नल गौड़ का अनुभव और मौलिक चिन्तन।

गोचर पर यह पुस्तक कई कारणों से अद्वितीय है। सबसे पहले तो कर्नल साहब ने इस पुस्तक को विभिन्न अध्यायों में इस प्रकार बाँटा है कि कोई भी पाठक इसे पढ़कर क्रमवार ढंग से गोचर को अच्छी तरह से समझ सकता है। इसका प्रत्येक अध्याय अपने आप में मील का पत्थर है जहाँ तक उदाहरणों के माध्यम से पहुँचने में पाठकों को कोई असुविधा नहीं होगी। साथ ही, प्रत्येक अध्याय अपने आप में सम्पूर्ण भी है। अर्थात् सुधी पाठकों के लिए यह आवश्यक नहीं कि गोचर पर आधारित सामान्य व्याख्या के लिए उन्हें पूरी पुस्तक ही पढ़नी पड़े। दूसरी बात, प्रारम्भ के तीन अध्यायों में आर्ष साहित्य में जो उपलब्ध है उसे नए चश्मे से देखने का अभ्यास कराने के साथ-साथ पाठकों के मन में उठने वाली सम्भावित समस्याओं का समाधान भी कर्नल गौड़ करते आए हैं। इससे जहाँ एक ओर पाठकों के मन में आत्म-विश्वास का संचार होता है वहीं गोचर जैसा असाधारण विषय भी सहज लगने लगता है।

अनुवादक : डॉ. उदय कान्त मिश्र—जन्म 7 अक्टूबर, 1949, शिक्षा : परिवार में 9 वर्ष की आयु से। इंडियन काउंसिल ऑफ एस्ट्रोलॉजिकल साइन्सज़, मद्रास से ज्योतिष विशारद, भारतीय विद्या भवन से ज्योतिष आचार्य। सन् 1995 से भारतीय विद्या भवन में ज्योतिष के अवैतनिक शिक्षक। हिन्दी, उर्दू, बांग्ला, संस्कृत और अंग्रेजी सहित कई भाषाओं का ज्ञान। सन् 1976 की अखिल भारतीय इंजीनियरिंग सेवा में अपने विभाग में प्रथम स्थान। तब से कई वरिष्ठ पदों पर कार्य। सिविल इंजीनियरिंग में पी-एच.डी. की उपाधि। सम्प्रति दूर संचार विभाग के उपक्रम सी-डॉट में महाप्रबन्धक तथा अभियन्ता प्रमुख। बिहार सरकार के तकनीकी सलाहकार के पद पर प्रतिनियुक्ति, अभिरुचि—योग, प्राणायाम, आर्ट ऑफ लिविंग के शिक्षक, दुर्लभ पेड़-पौधों का प्रबन्धन आदि।

—अमृत लाल जैन

अनुवादक की ओर से

गोचर के सही स्वाद से मेरे गुरु के रूप में कर्नल गौड़ ने मुझे तब परिचित कराया जब मैं भारतीय विद्या भवन में ज्योतिष का विद्यार्थी था। आज उनकी आज्ञा से उन्हीं की पुस्तक का अनुवाद आपके सामने रखते हुए मुझे अपनी सीमाओं का आभास हो रहां है। मूल पुस्तक की भाषा की समृद्धता देखते हुए अनुवाद में मैंने मात्र भावों की ओर ध्यान दिया है, अक्षरशः अनुवाद के झमेले में मैं पड़ा ही नहीं ज्योतिष शास्त्र के हिन्दी के पाठकों की अपेक्षाएँ अंग्रेजी के पाठकों से भिन्न होती हैं। मेरी ऐसी समझ भारतीय विद्या भवन में प्रायः पिछले पाँच वर्षों में पढ़ाने से बनी है। उनकी रुचि को देखते हुए इस पुस्तक में कर्नल साहब की आज्ञा के उपरान्त कई छोटे-मोटे परिवर्तन भी किए गए हैं।

पाठकों का ध्यान एक विशेष बात की ओर आकृष्ट कराने की मेरी अदम्य इच्छा है। हम अयनांश के बारे में बार-बार शंकाएँ उठाते रहे हैं। वे आधारहीन नहीं हैं परन्तु एक बात सर्वमान्य होनी चाहिए कि अयनांशों के चयन में अन्तर होने के कारण दशा, अन्तर्दशा या प्रत्यन्तर्दशा में तो फर्क पड़ सकता है किन्तु अयनांश के अन्तर के कारण गोचर, प्रश्नकुण्डली तथा वर्षफल में, जो एक प्रकार के गोचर ही हैं, कोई अन्तर नहीं आएगा। इसे उदाहरण से समझने में आसानी होगी। जन्म कुण्डली यदि चित्रपक्ष अयनांशों पर बनी हो और आज के गोचर के लिए भी चित्रपक्ष के अयनांशों का प्रयोग किया जाए तो जन्म कुण्डली के ग्रहों के सापेक्ष में गोचर के ग्रहों की एक प्रकार की स्थिति बनेगी। अब किसी भी अन्य अयनांश के आधार पर जन्म कुण्डली बना लीजिए। सम्भव है कि यह कुण्डली चित्रपक्ष के अयनांशों पर आधारित कुण्डली जैसी ही हो (हाँ, वर्गों में इनमें अन्तर की सम्भावना काफी बढ़ जाती है)। अब इसी अयनांश पर आज का गोचर बना लीजिए। सम्भव है कि यह गोचर चित्रपक्षीय अयनांश पर आधारित गोचर से

भिन्न आए। किन्तु एक बात आप अवश्य पाएँगे कि दोनों परिस्थितियों में जन्मकुण्डली और गोचर के ग्रहों की सापेक्षिक स्थिति एक जैसी रहेगी। ऐसा ही वर्ग कुण्डली और प्रश्न कुण्डली में होता है। हम जानते हैं कि गोचर फल जन्म कुण्डली के ग्रहों के सापेक्ष में कहे जाते हैं। इसलिए गोचर के आधार पर क़ी गई भविष्यवाणियों में भूल होने की सम्भावना सबसे कम होगी।

मैं अपने परम पूज्य माता-पिता, गुरु, जगत-जननी माँ जगदम्बा, चाचा स्व. गोपाल कृष्ण मिश्र, श्री भागवत झा आजाद, अग्रज श्री कैलास गुप्ता, अभिन्न सखा और हिन्दी के प्रख्यात लेखक श्याम नारायण और परिवार के सभी सदस्यों का विभिन्न कारणों से आभारी हूँ। उन्हें हार्दिक साधुवाद। अनुज श्री राजीव कान्त मिश्र, ज्योतिषाचार्य, भारतीय विद्या भवन तथा श्री उपेन्द्र मोहन ने प्रूफ पढ़ने का दुष्कर कार्य बहुत मनोयोग से किया है, उन्हें अशेष आशीर्वाद।

वसन्त पंचमी, 2056 **–डॉ. उदयकान्त मिश्र**

4.15

अनुक्रम

1.	**अध्याय-एक**	गोचर-अलौकिक सन्देशवाहक	**1**
2.	**अध्याय-दो**	शास्त्रों में चन्द्रमा का महत्व	**6**
3.	**अध्याय-तीन**	चन्द्रमा से गोचर के फल	**13**
4.	**अध्याय-चार**	गोचर और पुराण	**27**
5.	**अध्याय-पाँच**	गोचर पर अन्य प्रभाव	**36**
6.	**अध्याय-छह**	भाव सिद्धि काल—फल प्राप्ति के समय की सम्भावना	**57**
7.	**अध्याय-सात**	अष्टक वर्ग	**87**
8.	**अध्याय-आठ**	कुछ अप्रचलित गोचर सिद्धान्त	**126**
9.	**अध्याय-नौ**	वर्ग कुंडलियों में गोचर *(i)*	**133**
10.	**अध्याय-दस**	वर्ग कुंडलियों में गोचर *(ii)*	**151**
11.	**अध्याय-ग्यारह**	विशिष्ट गोचर	**158**
12.	**अध्याय-बारह**	सर्वतोभद्र चक्र	**167**
13.	**अध्याय-तेरह**	कतिपय दुलर्भ किन्तु उपयोगी चक्र	**179**
	परिशिष्ट-I	दशावतार तथा नवग्रहों की पौराणिक कथाएँ	**217**
	परिशिष्ट-II	जन्म काल शुद्धिकरण	**242**
	सारिणी परिशिष्ट-II-I		**250**

अध्याय-एक

गोचर–अलौकिक सन्देशवाहक

'मुण्डकोपनिषद्' के प्रथम मुण्डक के प्रथम खंड में ही कहा गया है कि जिस विद्या से ब्रह्म के परा और अपरा–दोनों स्वरूपों का पूर्णतया ज्ञान हो उसे ब्रह्म विद्या कहते हैं। 'मुण्डकोपनिषद्' में शौनिक मुनि से महर्षि अंगिरा बताते हैं कि मनुष्य के जानने योग्य दो विद्याएँ हैं–एक तो परा और दूसरी अपरा। वे कहते हैं–

> *''तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वः शिक्षा कल्पोव्याकरणंनिरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति। अथ परा यया तदक्षरमधिगमस्ते।''*

अर्थात् विद्याओं में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद (चार वेद) और शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द तथा ज्योतिष (छह वेदांग) अपरा विद्याएँ हैं। जिससे अविनाशी तत्व (परब्रह्म) जाना जाता है वह परा विद्या है।

ज्योतिष शास्त्र है तो अपरा विद्याओं में से एक किन्तु इसे अपरा तथा परा विद्याओं को जोड़ने वाला पुल भी कहा जाता है क्योंकि जो सामान्यतः इन्द्रियों के ज्ञान से परे है, उसका भी बोध ज्योतिष शास्त्र के माध्यम से हो सकता है।

हम जानते हैं कि जातक की जन्म कुण्डली में ग्रहों की स्थिति नियत रहती है, वह बदलती नहीं। ग्रहों की इन स्थितियों से कई प्रकार के योग बनते हैं। हम यह भी जानते हैं कि पूर्व जन्मों के कर्मों का लेखा-जोखा कुण्डली के योगों के रूप में पता चलता है। यही योग इस जन्म में फल प्राप्ति की सम्भावनाओं के बारे में बताते हैं। ये फल कब मिलेंगे, इसकी जानकारी हमें दशाओं से मिलती है।

उन्नीसवीं सदी के मध्य में रतलाम में एक महान ज्योतिषी हुए—श्री महादेव। उनकी पुस्तक 'जातक तत्व' के 'दशा तत्व खंड' का प्रथम श्लोक है—

"ग्रहो भावराशिदृग्योगजीविकादिफलं स्वदशाअन्तर्दशायांददाति।"

अर्थात् ग्रहों के फल उनकी दशा/अन्तर्दशा में प्राप्त होते हैं और ये फल इनं बातों पर निर्भर करते हैं कि

(i) यह ग्रह किस भाव में तथा किस राशि में बैठा है

(ii) इस पर किस ग्रह/गहों की दृष्टि है तथा

(iii) यह ग्रह किन ग्रहों के साथ बैठा है।

भारतीय विद्या भवन में ज्योतिष शास्त्र के परम गुरु श्री के. एन. राव इसे PAC सिद्धान्त कहते हैं।

P—Posited अर्थात् कहाँ बैठा है।

A—Aspects अर्थात् कौन से ग्रहों की दृष्टि के प्रभाव पड़ रहे हैं तथा

C—Conjunct अर्थात् किन ग्रहों के साथ बैठा है। इन्हें हम क्रमशः स्थिति, दृष्टि और युति (सिदृयु) कहेंगे और आगे भी सिदृयु का व्यवहार PAC के लिए करेंगे।

यानी यह तो तय हो गया कि दशा आने पर योगों द्वारा बनाई गई कर्मफल की पोटली जातक के सामने खुलेगी पर यह पोटली लाएगा कौन? शास्त्रों में कहा गया है कि पोटली लाने का काम करता है अलौकिक सन्देशवाहक **गोचर**।

संस्कृत में एक ही शब्द के प्रायः कई अर्थ होते हैं। **गोचर** के भी कई अर्थ हैं परन्तु ज्योतिष की दुनिया में जो अर्थ सही लगते हैं, वे हैं **बार-बार जाने वाला और बार-बार मँडराने वाला**। ठीक ही तो हैं ये अर्थ क्योंकि एक ओर जहाँ चन्द्रमा पूरी कुण्डली की परिक्रमा प्रायः माह में एक बार कर ही लेता है वहीं शनि महाराज यही परिक्रमा धीरे-धीरे 30 वर्षों में करते हैं। बार-बार ये ग्रह आते-जाते हैं, मँडराते हैं और हमारे जीवन को प्रभावित करते हैं।

अर्थात् दशा क्रम में जो फल प्राप्त होने वाले हैं उन्हें लेकर बार-बार गोचर ही हमारे पास आएँगे। गोचर का काम बड़ा साधारण है; योगों ने पोटली में फल भरे, दशा ने उचित समय आने पर पोटली बाँध कर 'गोचर' को पकड़ा दिया और 'गोचर' आपके पास पोटली लेकर उपस्थित हो गया। गोचर न तो पोटली में पड़े फलों को बदल सकता है और न ही उनके फलित होने के समय में। परन्तु एक बात तो तय है कि यदि गोचर शुभ हो तो चाहे फल कैसे भी हों, वही पोटली

सजी-सँवरी, खुशबुओं से भरी, शुभ सन्देशों वाली लगने लगती है। दूसरी ओर, यदि गोचर गन्दे कपड़ों में, लापरवाह किस्म का, उचक्का सन्देशवाहक लगे जो मुड़ी-तुड़ी सी, गन्दी और भद्दी पोटली लेकर आया हो तो उसे खोलने में बुरा अवश्य लगेगा, चाहे उसमें जवाहरात ही क्यों न भरे हों।

एक बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है जिसे हम इस पुस्तक में बार-बार दुहराएँगे कि भाग्यफल में न तो 'गोचर' अपनी ओर से कुछ जोड़ सकता है और न ही उसमें कुछ कमी ला सकता है। 'गोचर' उचित दशा आने के पहले भी फल नहीं दे सकता और दशा बीत जाने के बाद सुन्दर से सुन्दर गोचर निष्फल हो जाते हैं। फिर भी, 'गोचर' ही सन्देशवाहक है इसलिए वह कैसा है, यह बात भी फल को प्रभावित करती है। दुष्ट गोचर यदि पोटली दे ही नहीं तो हम तकदीर को कोसने के अलावा कर ही क्या सकते हैं? जीवन में बहुत बार ऐसा हुआ करता है कि अच्छे योग देने वाले ग्रहों की दशा आने पर भी सही गोचर के अभाव में प्राप्त फल पूर्णरूप से सन्तोष नहीं देते—लगता रहता है कि कहीं कोई कमी अवश्य रह गई है। यह असन्तोष अनुकूल गोचर के नहीं होने का ही परिणाम है, चाहे योग और दशा बिल्कुल ठीक रहे हों।

आइए, अब यह समझने का प्रयास किया जाए कि यह गोचर नाम का सन्देशवाहक अपना काम करता कैसे है? जन्म कुण्डली तथा वर्ग कुण्डलियों के 'योग' फलों की पोटली बनाते हैं। दशा ही उन्हें बाँधकर 'गोचर' को पकड़ा देती है तथा भिन्न-भिन्न 'गोचर' महाशय नित नई पोटली लेकर आपका दरवाजा खटखटाते रहते हैं। इसलिए कभी दरवेश जैसा 'गोचर' दिखता है तो, कभी औघड़दानी, कभी फक्कड़ और मदमस्त और कभी-कभी तो पूरा चार सौ बीस!

जन्मकुण्डली—(1.1)

गोचर कुण्डली—(1.2)
दिनांक—3.10.1999

आइए, एक उदाहरण के माध्यम से अब यह समझने का प्रयास करें कि कुण्डली में 'गोचर' का असर कैसे देखते हैं? यहाँ हम मिथुन लगन की एक कुण्डली दे रहे हैं जिस पर दिनांक 3 अक्टूबर, 1999 (शारदीय नवरात्रों की प्रतिपदा) का गोचर समझना है।

सबसे पहले 3 अक्टूबर, 1999 के ग्रहों की स्थिति पंचांग से देखते हैं। ये 'गोचर' के ग्रह हैं। वैसे तो प्रत्येक दिन बारह के बारह लग्न उदित होते हैं पर दिनांक 3.10.1999 की एक ऐसी काल्पनिक कुण्डली बनाइए जिसका लग्न भी जातक की जन्म कुण्डली का ही लग्न हो, अर्थात् मिथुन। दिल्ली में मिथुन लग्न उस दिन प्रायः रात के पौने दस बजे के आसपास शुरू होकर आधी रात तक था। अब हमारे पास दो कुण्डलियाँ हो गई हैं। कुण्डली संख्या 1.1 जिसे हम 'जन्म कुण्डली' कहते हैं तथा कुण्डली संख्या 1.2, जिसे हम 'गोचर' कुण्डली कहेंगे।

दोनों कुण्डलियों की तुलना कीजिए। जन्म कुण्डली का लग्नेश बुध जन्म कुण्डली में सिंह राशि का होकर तृतीय भाव में बैठा है। वहीं बुध गोचर कुण्डली में तुला राशि का होकर पंचम भाव से गोचर कर रहा है। इसे कुछ यूँ कहा जाएगा, "लग्नेश बुध गोचर में तुला राशि का होकर जन्म कुण्डली के पंचम भाव से गुजर रहा है (गोचर कर रहा है)।" इसी प्रकार द्वितीयेश चन्द्रमा गोचर में कर्क राशि का होकर जन्म कुण्डली के द्वितीय भाव से गुजर रहा है। अर्थात् ग्रहों की स्थितियों से गोचर समझने के लिए कुण्डली 1.1 तथा 1.2 की तुलना करते हुए उन्हें देखिए। इसी प्रकार जन्म कुण्डली का तृतीयेश सूर्य गोचर में कन्या राशि का होकर जन्म कुण्डली के पंचमेश तथा द्वादशेश शुक्र के ऊपर से चतुर्थ भाव में गोचर कर रहा है। जन्म कुण्डली का पंचमेश और द्वादशेश शुक्र गोचर में सिंह राशि का होकर तृतीय भाव में जन्म कुण्डली के लग्नेश तथा चतुर्थेश बुध और तृतीयेश सूर्य के ऊपर से गोचर कर रहा है। जन्म कुण्डली का सप्तमेश तथा दशमेश गुरु गोचर में वक्री होकर मेष राशि में एकादश भाव में गोचर कर रहा है। जन्म कुण्डली का षष्ठेश और एकादशेश मंगल स्वराशि वृश्चिक का होकर षष्ठम भाव में केतु के ऊपर से गोचर कर रहा है। जन्म कुण्डली का अष्टमेश और नवमेश शनि गोचर में वक्री होकर मेष राशि में एकादश भाव से गोचर कर रहा है। इसी प्रकार द्वादश भावस्थ जन्मकालीन राहु गोचर में कर्क राशि का होकर द्वितीय भाव से गोचर कर रहा है तथा षष्ठम भावस्थ जन्मकालीन केतु मकर राशि का होकर अष्टम भाव में द्वितीयेश चन्द्रमा के ऊपर से गोचर कर रहा है। इस प्रकार के गोचरों का जातक के जीवन क्रम पर क्या प्रभाव होगा, इसकी चर्चा आगे के अंध्यायों में की जाएगी।

एक बात फिर से याद रखने की है कि जैसे बढ़िया बीज अच्छी से अच्छी मिट्टी में बोने के बावजूद सही समय पर उचित मात्रा में पानी नहीं मिलने के कारण ठीक से फल नहीं दे पाता, सारा आयोजन धरा का धरा रह जाता है, उसी प्रकार अच्छा से अच्छा योग सुन्दर से सुन्दर दशा पर भी तब तक पूरी तरह फल नहीं दे पाता जब तक उचित गोचर न हो। उचित गोचर के अभाव में सारा गुड़ गोबर या मिट्टी ही जानिए।

दूसरी न भूलने वाली बात यह है कि गोचर अपने आप तब तक कुछ दे ही नहीं सकता है जब तक योग और दशाएँ उसे आपकी पोटली बाँध कर सौंप न दें। अच्छा हरकारा (सन्देश-वाहक) बुरी से बुरी पोटली को सहने के योग्य बना सकता है, पर अगर पोटली ही तैयार न हों तो बेचारा हरकारा करे क्या?

❑

अध्याय-दो

शास्त्रों में चन्द्रमा का महत्व

यजुर्वेद ज्योतिष के चौथे श्लोक में कहा गया है–

"यथाशिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा।
तद्वद्वेदांगशास्त्राणां ज्योतिषं मूर्धनि स्थितम्।।"

अर्थात् जैसे मोरों में शिखा और सर्पों में मणि है उसी प्रकार वेदांग शास्त्रों में ज्योतिष शास्त्र सबसे ऊपर है।

इस शास्त्र का अमृत घट लेकर महर्षि पराशर आए। जातक के जीवन क्रम के फलादेश कहने के लिए महर्षि पराशर द्वारा ऋषि मैत्रेय को दिए गए सम्यक ज्ञान को वर्तमान काल में ज्योतिषियों ने एकत्रित करके एक पुस्तक का रूप दिया है जिसे हम *वृहद् पराशर होराशास्त्र* के नाम से भी जानते हैं। इस पुस्तक के उपसंहाराध्याय में वे कहते हैं–

"यच्छात्रं ब्रह्माणा प्रोक्तं नारदाय महात्मने।
तदेव शौनकादिभ्यो नारदः प्राह सादरम्।।
ततो मया यथा ज्ञातं तुभ्यमुक्तं तदा द्विज।"

अर्थात् हे ब्राह्मण (मैत्रेय)! ज्योतिष शास्त्र का उपदेश ब्रह्मा जी ने देवर्षि नारद को दिया जिन्होंने इसे शौनक आदि ऋषियों को बताया। उन्हीं ऋषियों से प्राप्त यह ज्ञान मैंने आपको कहा है।

महर्षि पराशर के कुछ सूत्रों पर आधारित टीकाएँ क्रमशः लघु और मध्य पराशरी के नाम से उपलब्ध हैं। पराशर ऋषि के अतिरिक्त दैवज्ञ वराहमिहिर की कृतियाँ कालजयी मानी जाती हैं। इन दो महान ग्रंथकारों के बाद मंत्रेश्वर महाराज

की *फलदीपिका* ज्योतिष शास्त्र की वह पुस्तक है जिसका लोहा प्रायः ज्योतिष शास्त्र का प्रत्येक गम्भीर विधार्थी मानता है। आश्चर्य की बात है कि ज्योतिष शास्त्र के दो पुरोधाओं अर्थात् ऋषि पराशर और दैवज्ञ वराहमिहिर ने *जातक स्कन्ध* में गोचर की चर्चा क्यों नहीं की है? *फलदीपिका* फलित ज्योतिष की अनूठी रचना इसलिए भी मानी गई है कि इस ग्रन्थ में 'गोचर' *जातक स्कन्ध* का ही हिस्सा है। इन बातों पर इस पुस्तक के अध्याय चार में प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है। फिलहाल हम देखते हैं कि मंत्रेश्वर महाराज फलदीपिका के गोचर फलम् अध्याय की शुरुआत में क्या कहते हैं? गोचर फलम् अध्याय का पहला श्लोक है–

"सर्वेषुलग्नेस्वपि सत्सु चन्द्र लग्नं प्रधानं खलु गोचरेषु।
तस्मात् दृक्षादपि वर्तमान ग्रहेन्द्र चारैः कथयेत्फलानि।।"

अर्थात् यद्यपि सभी लग्न उपलब्ध हैं फिर भी गोचर के फल कहने के लिए चन्द्र लग्न को प्रधान मानकर यह देखना चाहिए कि चन्द्र लग्न से वर्तमान में ग्रह कहाँ-कहाँ गोचर कर रहे हैं?

यहाँ मंत्रेश्वर गोचर की विवेचना करने के लिए जन्म लग्न की अपेक्षा चन्द्र लग्न को अधिक महत्व दे रहे हैं। चन्द्र लग्न से तात्पर्य है–जातक की जन्म राशि। अर्थात् जन्म कुण्डली में चन्द्रमा जिस राशि में बैठा है उसे हम चन्द्र लग्न कहेंगे। अध्याय एक में दी गई कुण्डली 1.1 देखें। यहाँ चन्द्रमा मकर राशि में है। अतः जातक का चन्द्र लग्न मकर होगा; जबकि जातक का जन्म लग्न है–मिथुन। अब स्वाभाविक प्रश्न है कि जब प्रायः सभी ज्योतिषीय भविष्यवाणियाँ जन्म लग्न को आधार मानकर की जाती हैं तो चन्द्र लग्न की क्या आवश्यकता है?

आइए, हम देखें कि इस विषय पर मनीषियों के क्या विचार हैं? महर्षि पराशर *सुदर्शन चक्र फलाध्याय* के सातवें श्लोक में कहते हैं–

"अत्र तु प्रथमो भावो लग्नेन्दुरविभिर्युतः।
तं प्रकल्प्य तनुंत्वग्रे ज्ञेया भावा धनादयः।।"

इसका भावानुवाद कुछ इस प्रकार होगा कि लग्न, चन्द्रमा तथा सूर्य को प्रथम भाव मानें तथा उससे आगे अन्य भावों को धन आदि भाव मानें।

पराशर ऋषि का कथन स्पष्ट है–सही फलादेश के लिए कुण्डली की विवेचना सिर्फ लग्न से करने से काम नहीं चलेगा। लग्न के समान ही चन्द्र और सूर्य लग्न महत्वपूर्ण हैं और इन दोनों लग्नों से विवेचना किए बिना फल कहना उचित नहीं है। एक बात और देखने में आती है। कई बार पाया गया है कि यदि लग्नेश और लग्न की तुलना में चन्द्रमा और चन्द्र लग्न बली हो तो चन्द्र लग्न से की

गई भविष्यवाणियाँ जन्म लग्न के आधार पर की गई भविष्यवाणियों की तुलना में ज्यादा सटीक/सही उतरती हैं। जन्म काल की शुद्धि के लिए भी चन्द्र लग्न को अत्यधिक महत्व दिया गया है। हमने भी इसे स्पष्ट करने की दिशा में एक छोटा-सा प्रयास इस पुस्तक के परिशिष्ट–II में किया है।

आगे देखिये 'वृहज्जातक' के 'ग्रहयोनि प्रभेदाध्याय' के प्रथम श्लोक में दैवज्ञ 'वराहमिहिर' कहते हैं–

"कालात्मा दिन कृन्मश्च हिमंगुः सत्वं कुजो ज्ञ वचो,
जीवो ज्ञान सुखे सितश्च मदनो दुःखं दिनेशात्मजः।"

अर्थात् काल की आत्मा सूर्य, मन चन्द्रमा, शक्ति मंगल, वचन बुध, ज्ञान गुरु, सुख शुक्र तथा दुःख सूर्य का पुत्र (शनि) हैं।

इन सूत्रों से चन्द्रमा और चन्द्र लग्न के महत्व का पता चलता है।

ये तो हुए चन्द्रमा की प्रशंसा में बाबा आदम के जमाने के विचार, जो आज सही हैं। थोड़ी बाद की पीढ़ी ने 'मानसागरी' नामक ग्रन्थ को भी ज्योतिष शास्त्र के रत्नों के रूप में सम्मान दिया है। मानसागरी के 'चन्द्रकुण्डली विचार' खंड का पहला श्लोक है–

"देहो लग्नं वर्ग षट्कोडुकानि प्राणश्चन्द्रो धातवोऽन्ये ग्रहेन्दाः।
प्राणेनष्टे देहाधात्वङ्गनाशो, यस्मात्तस्मा चन्द्रवीर्यः प्रधानम्।।"

इस श्लोक का भावार्थ कुछ ऐसा है कि लग्न, षड्वर्ग आदि शरीर तथा अन्य ग्रह शक्ति हैं किन्तु चन्द्रमा प्राण है। प्राण नष्ट होते ही शरीर तथा शक्ति का नाश हो जाता है। इसी कारण चन्द्रमा का बल प्रधान है।

'मानसागरी' के उसी अध्याय के तीसरे श्लोक में कहा गया है–

"चन्द्रसर्वत्र बीजाभो लग्नश्च कुसुमप्रभम्।
फलेन सदृशोऽशंश्च भावः स्वाादु रसः स्मृतः।।"

यहाँ लेखक कहते हैं कि चन्द्रमा को बीज समझो; जबकि लग्न फूल, नवांश फल और भाव को स्वाद तथा रस के समान मानो।

कहने का मतलव यह कि फूल, फल, फल के स्वाद तथा रस का कोई मतलब ही नहीं होगा जब तक बीज से पेड़ पैदा न हो। अर्थात् ज्योतिष शास्त्र में चन्द्रमा का अद्वितीय स्थान तो है ही, चन्द्रमा के बारे में कुछ और बातों पर दोबारा ध्यान देना अच्छा होगा।

(i) हम पहले कह आए हैं कि फलों की पोटली बनाने का काम, अर्थात् उसमें क्या रखा जाएगा, यह तो योग तय करते हैं; योगों में चन्द्रमा

का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है। चन्द्रमा को आधार मानकर प्राचीन साहित्य में बहुत से योगों की चर्चा है जिनमें अधिकांश योग बहुत शुभ कहे गए हैं। अर्थात् योगों के निर्माण में भी चन्द्रमा बहुत महत्व रखता है।

(ii) यह पोटली तैयार कब होगी, यह बात दशाएँ तय करती हैं। महर्षि पराशर दशाध्याय में 42 दशाओं के नाम गिनाते हुए कहते हैं, **"दशा बहुविधास्तासु मुख्या विंशोत्तरी मता"** *अर्थात् दशाएँ तो बहुत हैं किन्तु उनमें मुख्य विंशोत्तरी माननी चाहिए।* विंशोत्तरी दशा पूर्णतः जन्म कुण्डली में चन्द्रमा की स्थिति पर आधारित है। अतः जन्म कुण्डली में चन्द्रमा जिस नक्षत्र में बैठा है, उसी के आधार पर दशा की गणना प्रारम्भ होती है।

'मानसागरी' के पंचम अध्याय में तो इससे भी एक कदम आगे जाकर कहा गया है,

"कृते नैसर्गिकायुः स्यात् त्रोतायां पैण्डमेव च।
अंशायुद्वापिरे प्रोक्तं नक्षत्रायुः कलौ युगे।।"

कृत (सत्य) युग में नैसर्गिक आयु, त्रेता में पिंडायु, द्वापर में अंशायु तथा कलियुग में नक्षत्रायु से फल बताने चाहिए। अर्थात् चारों युगों के लिए आयु निर्धारण के अलग-अलग आधार बताए गए हैं और कलियुग के लिए, जो अभी चल रहा है, नक्षत्र को प्रधानता दी गई है।

हमने देखा कि योग के लिए चन्द्रमा, दशा के लिए चन्द्रमा और आयु निर्णय के लिए भी नक्षत्र (चन्द्रमा) तो गोचर के लिए चन्द्रमा क्यों नहीं?

हम पहले कह चुके हैं कि चन्द्रमा मन का कारक है। अच्छे-बुरे का बोध हमें मन से ही होता है। अतः योग के फलों की पोटली का असर, जो दशाओं के कारण गोचर हमारे पास लाकर खोलता है, हमारे मन की स्थिति के अनुरूप, या यों कहिए कि जन्म कुण्डली में चन्द्रमा के बल के अनुसार, होता है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए दो व्यक्तियों को एक जैसी नौकरी एक ही दिन मिली है। दोनों को यह समाचार विभिन्न प्रकार से प्रभावित कर सकता है। किसी को यह समाचार खुशी से नाचने पर मजबूर कर देगा कि उसे आर्थिक रूप से मजबूत आधार मिल गया है, वहीं दूसरे के लिए यह नौकरी की खबर परिजनों से बिछुड़ने का कष्टदायी कारण लगेगी।

तो यह बात पक्की हुई कि हम किसी फल से कैसे और किस हद तक प्रभावित होते हैं, यह सब जन्म कुण्डली में चन्द्रमा की स्थिति और शक्ति से पता

चलता है और उसकी शक्ति निर्भर करती है कि वह (चन्द्रमा) किन स्थान/ग्रहों से सिदृयु (PAC) है।

(iii) अब एक तीसरी बात देखिए। सभी नौ ग्रहों में चन्द्रमा सबसे तेज चलता है। इसी कारण से वह प्रत्येक दिन एक नक्षत्र को भोगता है तथा प्रायः ढाई दिनों में एक राशि को पार कर जाता है। अतः जीवन में होने वाले परिवर्तनों पर चन्द्रमा का प्रभाव सबसे अधिक होना ही चाहिए।

(iv) एक चौथा आयाम भी महत्वपूर्ण है; भारतीय नव वर्ष का प्रारम्भ चैत्र शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से होता है। मतलब यह कि चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा (पहली तिथि) में चन्द्र प्रवेश से नए वर्ष का अभिवादन करते हैं हम! इसी वर्ष प्रवेश कुण्डली के आधार पर ही पूरे वर्ष का लेखा-जोखा किया जाता है।

आइए, एक बार फिर से मंत्रेश्वर महाराज के कथन **सर्वेषुलग्नेस्वपि सस्तु** पर विचार करें। मंत्रेश्वर जी का तात्पर्य क्या हो सकता है जब वे सभी लग्नों के होने के बारे में कहते हैं? ज्योतिष शास्त्र के गम्भीर विद्यार्थी जन्म, चन्द्र, सूर्य लग्न के अलावा भी घटिका लग्न और होरा लग्न आदि से जातक की कुण्डली की विवेचना पराशरीय सिद्धान्तों के आधार पर करते रहे हैं। इन्दु लग्न का उचित प्रयोग करके जातक की आर्थिक अवस्था के बारे में सही-सही अनुमान लगाया जा सकता है। फिर जब हम दशाओं के फल की चर्चा करते हैं तो दशा नाथ को लग्न मान कर विभिन्न भावों में बैठे अन्तर दशा/प्रत्यन्तर दशा नाथ के आधार पर कुण्डली की विवेचना भी करते हैं। विशेष फल प्राप्ति के लिए कारक जिस भाव में बैठा हो उसे लग्न मानकर भी कुण्डली देखी जाती है। अतः मंत्रेश्वर महाराज का यह कथन कि "सभी लग्न हैं..." विवादों से परे है परन्तु चन्द्र लग्न को प्रधानता देकर गोचर की विवेचना करने में जो व्यावहारिक कठिनाइयाँ आती हैं उनको हम एक उदाहरण के माध्यम से समझेंगे। आगे दो कुण्डलियाँ दी गई हैं जो क्रमशः दिनांक 2 मई, 1997 सुबह 9:00 बजे तथा उसी तारीख को संध्या 4:00 बजे की दिल्ली के लिए हैं।

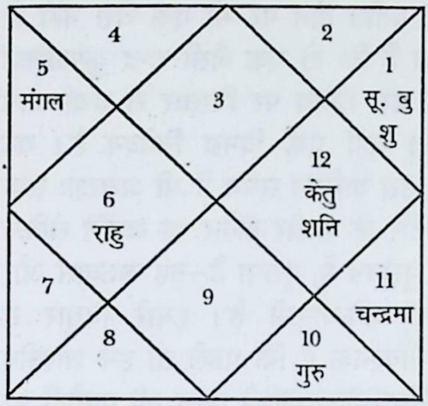

जन्मकुण्डली–(2.1)

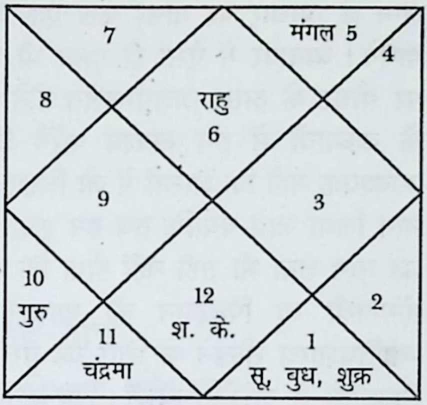

गोचर कुण्डली–(2.2)

दोनों कुण्डलियों में चन्द्र लग्न एक ही है अर्थात्–कुंभ। बाकी ग्रह भी दोनों कुण्डलियों में समान राशियों में हैं अर्थात् ग्रहों की स्थितियों में भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। इस प्रकार चन्द्र लग्न को आधार मानकर आज की तारीख में, दोनों कुण्डलियों में गोचर की विवेचना की जाए तो दोनों स्थितियों में गोचर के फल एक जैसे आने चाहिए। लेकिन वास्तव में क्या दोनों कुण्डलियां एक जैसी हैं? लग्न परिवर्तन होने के कारण भावेश बदल गए। यद्यपि दोनों कुण्डलियों में लग्नेश बुध ही है परन्तु चन्द्रमा को देखिए। कुण्डली संख्या 2.1 में जहाँ चन्द्रमा द्वितीयेश होकर नवम भाव में बैठा है वहीं कुण्डली संख्या 2.2 में चन्द्रमा एकादशेश होकर षष्ठम भाव में बैठ गया है। और तो और, सात घंटों में चन्द्रमा आगे भी बढ़ गया है और जातकों की जन्मकालिक दशाएँ भी बदल गई हैं। अर्थात् फल प्राप्ति के काल बदल गए हैं। मानसागरी के श्लोक की चर्चा हम पहले ही कर चुके हैं। मानसागरी के श्लोक **चन्द्र सर्वत्र बीजाभो...** के हिसाब से इन दो कुण्डलियों को देखें तो बड़ी दुविधापूर्ण स्थिति बन गई है क्योंकि चन्द्रमा, जो बीज है, वह तो एक ही रह गया है किन्तु पुष्परूपी लग्न, फलरूपी नवांश और स्वादु रसरूपी भाव–सभी बदल गए हैं मानो एक ही प्रकार के बीज से दो भिन्न प्रकार के वृक्ष उत्पन्न हो गए हैं!

लेकिन यह मान लेना कि मंत्रेश्वर जी के कथन में कोई गलती है अथवा मानसागरी में असत्य लिखा गया है, उचित नहीं होगा। क्योंकि गोचर अपने आप तो फल दे नहीं सकते, वे कुण्डली के योगों तथा दशाओं के आधार पर ही फल हम तक पहुँचाते हैं। ध्यान से देखने पर पता चलेगा कि भाव बदलने के कारण दोनों कुण्डलियों में योग बदल गए हैं। दशाएँ भी बदल गई हैं। इस प्रकार चन्द्र

लग्न के आधार पर गोचर फल एक जैसे प्रतीत होने पर भी एक जैसे नहीं हो पाएँगे। व्यवहार में ऐसा ही पाया भी गया है कि दो एक जैसी चन्द्र कुण्डलियों पर गोचर के असर अलग-अलग होते हैं। इस विषय पर विस्तार से चर्चा आगे के अध्यायों में हम अवश्य करेंगे किन्तु यहाँ एक विनम्र निवेदन है। यह आवश्यक नहीं कि शास्त्रों में जो लिखा है, उसे वर्तमान समय में भी अक्षरशः सत्य मान लिया जाए क्योंकि तब हम शुद्ध लकीर के फकीर होकर रह जाएँगे लेकिन यह मान लेना भी सही नहीं होगा कि जो पुरातन है, पुराना है—वह बकवास और पोंगापंथी या पिछड़ेपन की पहचान है, दकियानूसी है। हमारे विचार से ज्योतिषशास्त्र सीखने के लिए यह परम आवश्यक है कि पहले तो हम शास्त्रीय सिद्धान्तों से परिचित हो लें। फिर उन्हें समसामयिक यानी आज की कसौटी पर भली-भांति परखें तथा पूरी तरह सन्तुष्ट होने के बाद ही व्यवहार में लाएँ। हमारा पूरा प्रयास है कि इस पुस्तक में हम शास्त्रीय सिद्धान्तों को नए जमाने के चश्मे से देखें, वैज्ञानिकता की कसौटी पर परखें और फिर उनका प्रयोग करें। यह हम आगे के अध्यायों में उदाहरणों के माध्यम से स्पष्ट करेंगे।

❑

अध्याय-तीन

चन्द्रमा से गोचर के फल

जैसा कि हमने पिछले अध्याय के अन्त में कहा है, यह आवश्यक है कि हम पहले शास्त्रीय सिद्धान्तों को समझ लें। आइए, देखते हैं कि उपलब्ध आर्ष, अर्थात् पुराने, साहित्य में चन्द्रमा को आधार मानकर गोचर के विषय पर क्या कहा गया है।

फल दीपिका में मंत्रेश्वर महाराज चन्द्र लग्न से विभिन्न भावों में गोचर कर रहे विभिन्न ग्रहों के फल बताते हैं। इसी प्रकार *जातकाभरणम्* नामक ग्रन्थ के विद्वान रचयिता दैवज्ञ **ढुंढिराज** ने गोचर फलम् की चर्चा की है। विभिन्न शास्त्रीय स्रोतों पर आधारित गोचर के फल नीचे लिखे गए हैं। यह बात याद रखने की है कि ये फल सामान्य हैं जिनका प्रयोग बहुत सावधानी से किया जाना चाहिए। ये मात्र मार्गदर्शन के लिए हैं क्योंकि गोचर में अपने आप फल देने की शक्ति नहीं होती। हाँ, योग और दशा के फलों को गोचर अवश्य प्रभावित करते हैं।

1.0 सूर्य—चन्द्र लग्न से 3, 6, 10 तथा 11वें भाव में गोचर करने पर सूर्य शुभ फल देता है।

सारिणी—3.1

प्रथम भाव	जन्म कुण्डली में स्थित चन्द्रमा के साथ गोचरवश आए सूर्य का फल अच्छा नहीं होता। अकारण यात्रा, थकान, चिड़चिड़ाहट, रोग आदि इसके फल जानिए।
द्वितीय भाव	धन का नाश, भय, जिद्दी प्रवृत्ति, पारिवारिक कलह तथा नेत्र दोष की सम्भावना जैसे बुरे फल कहे गए हैं।

तृतीय भाव	स्थान प्राप्ति, सम्पत्ति लाभ के कारण हर्ष, सम्मान में वृद्धि, शत्रुओं पर जय, भाइयों से विछोह, थोड़ा अहंकार अर्थात् काफी कुछ अच्छा, पर थोड़ा बुरा भी।
चतुर्थ भाव	रोग, व्यसन, सुख कार्यों में बाधा, परिवार में कलहं, सुख शान्ति में कमी, अर्थात् अच्छे फल नहीं।
पंचम भाव	चित्त क्षोभ, रोग, मोह के कारण मन में बेचैनी, दीनता, असहाय होने की व्याकुलता अर्थात् अच्छे फल नहीं।
षष्ठम् भाव	रोग नाश, शत्रुओं पर विजय, चित्त में प्रसन्नता, पंचम भावस्थ गोचर के सूर्य के अशुभ फलों का नाश, प्रतियोगिता तथा सभी कार्यों में सफलता अर्थात् कुछ भी बुरा नहीं!
सप्तम भाव	यात्रा, पेट तथा गुदामार्ग में रोग की सम्भावना, दीनता का भाव, सम्मान हानि अर्थात् कुछ भी अच्छा नहीं।
अष्टम भाव	पीड़ा, राजा से भय, कलह, चिड़चिड़ाहट आदि सारे अशुभ फल।
नवम भाव	कान्ति हानि, परिजनों से विछोह, प्रयासों में असफलता, दुर्भाग्य की भावना अर्थात् सुख का अभाव, मन में हारने जैसा भाव हताशा-निराशा।
दशम भाव	अभीष्ट सिद्धि, बड़े कार्यों में सफलता, प्रायः चहुँमुखी प्रसन्नता, नवम् भाव के बुरे गोचर के बाद अच्छे काल की सुखद भावना।
एकादश भाव	अधिक लाभ, स्थान, मान, वैभव, रोग नाश आदि शुभ फल।
द्वादश भाव	अधिक खर्च, क्लेश, मित्रों से कलह, ज्वर आदि फिर से बुरा समय, कुछ भी अच्छा नहीं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्ष भर में सूर्य के गोचर के कारण वे तीन लगातार माह बुरे सिद्ध होने चाहिए जब सूर्य चन्द्र लग्न से क्रमशः द्वादश, प्रथम और द्वितीय भाव से गोचर कर रहा है (शनि की साढ़े साती की तरह)। बाद का एक माह अच्छा, दो माह खराब, एक माह फिर अच्छा, बाद के तीन माह बुरे और फिर दो माह अच्छे होने की सम्भावनाएँ प्रतीत होती हैं।

2.0 चन्द्रमा–आश्चर्य है कि मंत्रेश्वर महाराज चन्द्रमा के गोचर को बहुत संक्षेप में लिख गए हैं। शायद कारण हो कि ये फल अधिक से अधिक दो दिनों से ढाई दिनों तक रहते हैं जब तक चन्द्रमा एक राशि में रहता है। 27 दिनों बाद चन्द्रमा के उसी राशि में पुनः लौट आने से फिर वही फल मिलते हैं–अर्थात् ये फल सम्भवतः जीवन में स्थायी परिवर्तन तब तक नहीं ला सकते जब तक अन्य प्रकार से फल प्राप्ति की सम्भावना बहुत पक्की न हो। चन्द्रमा के गोचर का प्रभाव क्रमशः इस प्रकार है।

चन्द्र लग्न से गोचर का चन्द्रमा क्रमशः 1, 3, 6, 7, 10 तथा 11वें भाव में शुभ फल देता है।

सारिणी–3.2

प्रथम भाव	भाग्योदय (किसी पुस्तक में भोगोदय भी कहा गया है), रोग मुक्ति, सुख, आनन्द, सत्कार आदि अच्छे फल।
द्वितीय भाव	धनहानि, मानसिक असन्तोष, नेत्र रोग आदि बुरे फल।
तृतीय भाव	जय, धन, लाभ, वस्त्रादि का सुख, प्रसन्नता, आरोग्य, धैर्य जैसे अच्छे फल।
चतुर्थ भाव	भय, उदर पीड़ा, स्वजनों से झगड़ा, चित्त में चंचलता, कार्य में हानि, भोजन और निद्रा में असुविधा तथा जल से भय आदि बुरे फल।
पंचम भाव	शोक (कृष्ण पक्ष में कार्य हानि), मार्ग में विघ्न, अशान्ति, आसक्ति, गठिया का प्रकोप सम्भव।
षष्ठ भाव	रोग मुक्ति, शत्रुनाश, लाभ, स्वास्थ्य, धनागम, यश, आनन्द, अपने घर में निवास।
सप्तम भाव	सुख, धनागम, वाहन, ख्याति, स्वास्थ्य, शान्ति, भोजन तथा स्त्री सुख आदि।
अष्टम भाव	बुरे फल, रोग, भय, अपच, न खाने योग्य भोजन से पीड़ा, झगड़ा, चिन्ता, सर्प भय (विष का भय)।
नवम भाव	रोग, (कृष्ण पक्ष में राज भय), पुत्रों से मतभेद, देशत्याग, व्यवसाय में हानि।

दशम भाव	इष्ट सिद्धि, सुख, कार्य में सफलता, अच्छा स्वास्थ्य।
एकादश भाव	प्रसन्नता, धन लाभ, सुख, रिश्तेदारों का आगमन, भोजन, द्रव्य आदि की प्राप्ति।
द्वादश भाव	व्यय, शोक, मानसिक तथा शारीरिक व्यथा, मान की तथा कार्य और द्रव्य की हानि, रिश्तेदारों से घृणा मिलने की सम्भावना।

3.0 मंगल—चन्द्र लग्न से तृतीय, षष्ठम् तथा एकादश भाव में गोचर का मंगल अच्छे फल देता है। सत्य तो यह है कि इन भावों में गोचर का मंगल इन्हीं भावों में गोचर के सूर्य जैसे शुभ फल ही देता है। उसी प्रकार द्वितीय, चतुर्थ, पंचम, सप्तम तथा नवम् में गोचर का मंगल सूर्य की भांति ही अनिष्टकारी होता है। किन्तु चन्द्र लग्न से दशम में गोचर का सूर्य जहाँ अत्यन्त शुभ होता है वहीं चन्द्र लग्न से दशम में गोचर का मंगल विपरीत फल देता है।

जातकादेश मार्ग, गोचर फल प्रकरण, श्लोक-2 में यही बात कही गई है—

"आय भ्रातृद्विषदुपगतौ, स्थानमानादि लाभं,
वित्तेवित्तक्रयमथ सुहृत् पुत्रगौ क्लेश भीतिम्।
कामे रोगान्व्यसनमतुलं धर्मगौ सूर्य भौमौ,
भौमौ भंग दिशति दशमें कर्म सिद्धिं दिनेशः।।

इस श्लोक में जहाँ चन्द्र लग्न से गोचर करते हुए 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 11 तथा बारहवें भाव में सूर्य और मंगल के एक जैसे फल कहे गए हैं वहीं यह भी कहा गया है कि मंगल तो दशम भाव में गोचर करते समय भंग (विघ्न, असफलता आदि) देता है पर सूर्य कर्म सिद्धि देता है।

चन्द्र लग्न से गोचर का मंगल क्रमशः 3.6 तथा एकादश भाव में अच्छे फल देता है।

सारिणी—3.3

प्रथम भाव	अन्तः शोक, भय, आत्मीय जनों से विछोह, रक्त दोष के कारण बीमारी, दुर्जनों से कष्ट।

द्वितीय भाव	भय, क्षति, धन हानि, कठोर वाणी के कारण झगड़ा आदि, दुर्जनों की संगति, राजा, चोर, अग्नि, पित्तरोग आदि से भय।
तृतीय भाव	सफलता, प्रमोद, धन, भोजन, वस्त्र, आरोग्य, शत्रुओं पर जय आदि शुभ फल।
चतुर्थ भाव	स्थान भ्रष्ट (स्थान परिवर्तन अथवा नौकरी छूटना आदि), शत्रु वृद्धि, धन में कमी, बन्धुओं से दुःख, अशुभ कार्यों में मन लगना, रक्त विकार, उदर रोग आदि।
पंचम भाव	ज्वर, अकारण चिन्ता, स्वजनों से झगड़ा, पुत्र के कारण दुःख, धन नाश, शत्रुओं से पीड़ा आदि अशुभ फल।
षष्ठ भाव	शत्रुओं से कलह की निवृत्ति, धनागम, ख्याति लाभ, आनन्द, शुभ विचारों का उदय—अर्थात् मंगल पंचम भाव में जो कष्ट दे रहे थे, वे सभी मंगल के षष्ठम में आने से ठीक हो गए।
सप्तम भाव	स्वजन नाश, अपनी स्त्री से कलह, नेत्र-उदर रोग, भाई-सन्तान के क्रोध से दुःख जैसे कष्ट।
अष्टम भाव	ज्वर, चोट-घाटा से पीड़ा, धन नाश, मान नाश, शस्त्रप्रियता, परदेश-वास, पदच्युति, ऋण आदि।
नवम भाव	दीनता, पराजय, अर्थनाश, शरीर में निर्बलता, अशक्तता के लक्षण, अनादर, धातु क्षय से निर्बलता, उष्णता या गर्मी लगना तथा रोजी-रोजगार के स्थान से हटना पड़ सकता है।
दशम भाव	कार्य में असफलता, विघ्न, परिश्रम, दुश्चेष्टा, रोग भय, अपौष्टिक पदार्थों का भोजन (किन्तु *वाराही संहिता* के अनुसार धन की प्राप्ति होती है)।
एकादश भाव	द्रव्य लाभ, आरोग्य, जमीन-जायदाद में लाभ, आनन्द और कार्य में सफलता जैसे शुभ फल।
द्वादश भाव	धन नाश, उष्णता या ताप से रोग, चिन्ता, उद्वेग, नेत्र रोग, कुटुम्बियों से अनबन।

4.0 बुध—जन्म कालीन चन्द्र लग्न से बुध 2, 4, 6, 8, 10 तथा 11वें भाव में गोचर वश अच्छे फल देता है। मंत्रेश्वर महाराज बुध के गोचर पर भी काफी

कंजूसी-सी करते हुए संक्षेप में ही फल की चर्चा कर देते हैं। बुध और चन्द्र में पुत्र और पिता के विचित्र रिश्ते की चर्चा *आर्ष साहित्य* में की गई है, जिस पर हमने भी परिशिष्ट-I में चर्चा की है। बहरहाल, पहले बुध के गोचर के फल देखते हैं।

सारिणी–3.4

प्रथम भाव	धन हानि, बन्धन, चुगलखोरी, कुटुम्बियों में विरोध, झगड़ा, कुसमय का भोजन, दुर्जनों की संगति।
द्वितीय भाव	धन लाभ, सर्वथा आनन्द, अच्छे लोगों की संगति आदि अर्थात् प्रथम भाव के विपरीत अच्छे फल।
तृतीय भाव	शत्रुओं से भय, कुटुम्बियों से झगड़ा, धन की हानि। *वाराही संहिता* के अनुसार मित्र प्राप्ति, भय से जातक दुश्चरित्रता को छोड़ता है। *वाराही संहिता* में यह एक अच्छी बात कही गई है कि चाहे भय से ही सही, दुश्चरित्रता छूटती तो है!
चतुर्थ भाव	धन प्राप्ति, माता और कुटुम्ब को सुख अर्थात् सब कुछ अच्छा।
पंचम भाव	स्त्री, पुत्रों से कलह पीड़ा, आकस्मिक झगड़ा, मृत्यु का भय, गर्मी के कारण शरीर में शिथिलता।
षष्ठ भाव	विजय, स्थिरता, धन, अन्न एवं वस्त्रादि की प्राप्ति, उत्तम पुस्तकादि पढ़ने का सुख।
सप्तम भाव	विरोध-झगड़ा, पीड़ा, सुख की हानि, द्रव्य की कमी, राज भय, निस्तेज शरीर आदि अशुभ फल।
अष्टम भाव	पुत्र से सुख, धन लाभ, बुद्धि विकास, अशान्त चित्त, भोजन में अरुचि और मिथ्या वचन जैसे बुरे फल।
नवम भाव	विघ्न, शोक, खेद, अपवाद, दूसरों का उत्पीड़न, कुत्सित भोजन और पित्त से पीड़ा।
दशम भाव	सब प्रकार के सुख, नए पद की प्राप्ति, वाक्य में चतुराई, शत्रुओं पर विजय से सुख आदि।

एकादश भाव	धन वृद्धि, स्वास्थ्य लाभ, सुख-यश-धनागम, कुटुम्बियों से मित्रता जैसे अच्छे फल।
द्वादश भाव	पराजय-दीनता, धन-सुख में हानि, चित्त में सन्ताप, भोजन में अरुचि, झगड़ा आदि जैसे बुरे फल।

बुध के गोचर को गौर से देखिए। बुध सूर्य के साथ ही प्रायः रहता है इसलिए बुध के गोचर को सूर्य के गोचर के साथ देखने में कभी-कभी विरोधाभास प्रतीत होता है यदि वे एक ही राशि में हों। बुध प्रायः एक माह छोड़कर अगले माह अच्छे फल देगा। 6, 10 और 11 वें घर में बुध के गोचर को सूर्य के गोचर की तरह शुभ फलदायक कहा गया है वहीं पंचम, सप्तम, नवम, बारहवें और पहले भाव में बुध के गोचर को सूर्य के गोचर की तरह अशुभ कहा गया है। विसंगति वाले भाव चन्द्र लग्न से 2, 3, 4 और 8 हो जाते हैं जहाँ से यदि बुध और सूर्य साथ-साथ गोचर करें तो मंत्रेश्वर महाराज के अनुसार, इन गोचरों के विपरीत फल प्राप्त होंगे। जिन भावों में बुध के गोचर के फल शुभ कहे गए हैं उन्हीं भावों में सूर्य के गोचर के फल अशुभ बताए गए हैं।

5.0 गुरु—चन्द्र लग्न से 2, 5, 7, 9 और 11वें भाव में गोचर वश गुरु शुभ फलदायक होता है।

सारिणी—3.5

प्रथम भाव	परदेश गमन, अपव्यय या धन का नाश, शत्रुता, भय, मानहानि, राजभय, मानसिक कष्ट, रोजगार में झगड़ा।
द्वितीय भाव	मंत्रेश्वर ने बहुत सुन्दर उपमा दी है—**'स्ववाचां फलम्'** *अर्थात् "जो कह दिया वही सत्य हो जाए"*। बृहस्पति में वाक् भाव में आकर वाक् को चमत्कारी शक्ति प्रदान करने की शक्ति तो है ही। धन प्राप्ति, कुटुम्ब सुख, ख्याति, उन्नति, शत्रुहीनता तथा दानादि में रुचि गुरु के चन्द्र लग्न से द्वितीय भाव से गोचर के शुभ फल हैं।
तृतीय भाव	इष्टजनों से वियोग, कार्य में विघ्न, रोग, रोजगार में झंझट आदि अशुभ फल।

चतुर्थ भाव	बन्धु क्लेश, चौपहियों (गाड़ी या वाहन) से भय, धन एवं कान्ति की हानि, शत्रु वृद्धि, देश त्याग जैसे बुरे फल।
पंचम भाव	पुत्र जन्म, पुत्र से सुख, सज्जनों का समागम, राजा की कृपा, सुख, उन्नति, धनागम, कार्य में सफलता, कुटुम्बियों से आनन्द और पद की प्राप्ति।
षष्ठ भाव	अपने रिश्तेदारों तथा शत्रुओं से पीड़ा, रोग, शोक, चोर, अग्नि-राज भय, हर प्रकार से उदासी।
सप्तम भाव	शुभ कार्य के लिए यात्रा, स्त्री तथा सन्तान से सुख, राजा से आदर, बुद्धि में चमत्कार आदि शुभ फल।
अष्टम भाव	मार्ग क्लेश, व्यर्थ यात्रा से परिश्रम, धन नाश, अनेक कष्ट, बन्धन शोक, रोग, चोर, अग्नि, राजा से भय, क्रोध की वृद्धि, वाक्य में कठोरता, कान्ति में हानि, पदच्युति जैसे अशुभ फल।
नवम भाव	सर्व सौभाग्य, सिद्धि, भाग्योदय, कार्य में सफलता, धन प्राप्ति, सुख, उत्तम भोजन, पुत्र से सुख, विचारशीलता आदि शुभ फल।
दशम भाव	धन-स्थान कष्ट, सन्तान पीड़ा, दीनता, स्वजनों, से मनमुटाव, भ्रमण आदि।
एकादश भाव	पुत्र तथा स्थान लाभ, सम्मान में वृद्धि, कान्ति और बल में बढ़ोत्तरी, शत्रुओं की हानि जैसे शुभ फल।
द्वादश भाव	द्रव्य सम्बन्धी दुख, भय, चिन्ता, उद्वेग, दरिद्रता का दुःख, विश्वासपात्रों से कलंक, निवास स्थान का त्याग, शुभ कार्य में धन का व्यय और मुकदमेबाजी।

6.0 शुक्र—चन्द्र लग्न से 1, 2, 3, 4, 5, 8, 9, 11 तथा 12वें भावों में गोचर का शुक्र शुभफल-प्रद है। मंत्रेश्वर महाराज शुक्र के गोचर के बारे में भी बड़ा संक्षिप्त वर्णन करते हैं।

सारिणी—3.6

प्रथम भाव	सब प्रकार के भोग, सुख, धन की प्राप्ति, शत्रु का नाश, परन्तु जातक दुराचारी हो सकता है।
द्वितीय भाव	धनागम, स्त्री से सुख, मान की वृद्धि, शरीर में आरोग्य, वस्त्रादि की प्राप्ति।
तृतीय भाव	धन वृद्धि, सुन्दर उपकरण आदि का लाभ।
चतुर्थ भाव	सुख, मित्रों में वृद्धि, स्त्री का सुख आदि।
पंचम भाव	पुत्र, कुटुम्ब से प्रीति, नौकरों की वृद्धि, लाभ, अन्न और धन की प्राप्ति।
षष्ठ भाव	विपत्ति, शत्रु वृद्धि, पंचम भाव के सभी फलों के विपरीत कष्ट।
सप्तम भाव	स्त्री के कारण पीड़ा अथवा स्त्री को पीड़ा, शोक, परिश्रम से जीविका निर्वाह, जननेंद्रिय रोग का भय।
अष्टम भाव	सम्पत्ति, सुख में वृद्धि, दुःख नाश आदि अच्छे फल।
नवम भाव	सुख प्राप्ति, वस्त्र लाभ, इच्छित पदार्थों की प्राप्ति, स्वास्थ्य लाभ जैसे सुख।
दशम भाव	कलह, पीड़ा, मानसिक व्यथा, धन की हानि, शत्रुओं से भय, निर्बलता, स्त्रियों से दुःख जैसे फल।
एकादश भाव	अभय, धन की वृद्धि, प्रताप, कार्य में सफलता, उत्तम भोजनादि।
द्वादश भाव	धन प्राप्ति, वस्त्रादि, लाभ जैसे शुभ फल।

शुक्र का गोचर चन्द्र लग्न से देखने पर अग्रलिखित बातें स्पष्ट होती हैं। अन्य ग्रहों के विपरीत शुक्र अपने गोचरवश लगातार शुभ फल की प्राप्ति में सहायक होता है। चन्द्र लग्न से 11वें भाव में आने के बाद से पंचम भाव छोड़ने तक यानी लगातार सात भावों से शुक्र का गोचर लाभप्रद है। बाद के दो भाव अर्थात् छठे और सातवें भावों से गोचर में जहाँ शुक्र अच्छे फल नहीं दे पाता वहीं बाद के दो भावों में गोचर के फल फिर से अच्छे हो जाते हैं। गुरु की तरह चन्द्र

लग्न से दशम भाव में गोचर करता हुआ शुक्र अच्छे फल देने में सहायक नहीं हो पाता है।

7.0 शनि—चन्द्र लग्न से 3, 6 तथा 11वें भावों में गोचर का शनि शुभ फल देता है।

सारिणी—3.7

प्रथम भाव	रोग, मृत्यु के कारण अशौच, बुद्धिभ्रंश, निस्तेज शरीर, मानसिक/शारीरिक पीड़ा, आदि;
द्वितीय भाव	सन्तान कष्ट, धन नाश, क्लेश, अकारण झगड़ा, स्वजनों से वैर, कार्य में असफलता।
तृतीय भाव	स्थान लाभ (नई जगह या नौकरी प्राप्ति), धन लाभ, आरोग्य, सुख, कार्यों में सफलता, (दुराचरण भी)।
चतुर्थ भाव	स्त्री नाश या स्त्री से कलह, बन्धुओं से या उनके कारण कष्ट, वियोग, धन नाश आदि बुरे फल।
पंचम भाव	धन की कमी, बच्चों को कष्ट, बुद्धि-नाश, अशांति, दुष्टाओं का संग आदि बुरे फल।
षष्ठ भाव	सब प्रकार के सुख, शत्रुओं पर विजय, मकान बनाने का सौभाग्य।
सप्तम भाव	स्त्री को या स्त्री से कष्ट, कलह, भय, व्यर्थ की कष्टप्रद यात्राएँ, मानसिक व्यथा, परदेश वास।
अष्टम भाव	पूर्ण अशुभ—सन्तान नाश या सन्तान से/को कष्ट, पशु, धन, मित्र आदि की हानि, कार्य में निष्फलता।
नवम भाव	दरिद्रता, धर्म कार्य में विघ्न, पितातुल्य व्यक्ति को मृत्युतुल्य कष्ट, शत्रु वृद्धि, स्त्री और सन्तान से कभी सुख तथा कभी दुःख की प्राप्ति।
दशम भाव	सम्मान को ठेस, पीड़ा कारक रोग (शायद हृदय रोग), व्यापार में घाटा, दुष्ट कर्मों के कारण अप्रतिष्ठा, निर्धनता आदि अशुभ फल।

एकादश भाव	दशम के फल के विपरीत शुभ फल, उत्कृष्ट कीर्ति, वैभव आदि।
द्वादश भाव	व्यर्थ परिश्रम, शत्रुओं द्वारा धन नाश, स्त्री और सन्तान को रोंग/पीड़ा, झगड़ा, दरिद्रता आदि। शनि के चन्द्र लग्न से द्वादश भाव में आते ही साढ़े साती प्रारम्भ होती है। इस पर विशेष चर्चा अलग से आगे की गई है।

8.0 राहु तथा केतु—मंत्रेश्वर महाराज केतु के गोचर की अलग से चर्चा नहीं करते। किन्तु कहा गया है **'यथा राहु तथा केतुः'**। *राहु केतु गोचर में सूर्य के समान ही फल देते हैं।* मंत्रेश्वर महाराज राहु के गोचर की चर्चा में भी कंजूसी से काम ले गए हैं।

राहु के चन्द्र लग्न से गोचर में 3, 6, 10 तथा 11 भावों में होने से शुभ फल प्राप्त होते हैं।

सारिणी—3.8

प्रथम भाव	हानि, बीमारी, शारीरिक शक्ति का क्षय
द्वितीय भाव	धन नाश
तृतीय भाव	सुख, धन-लाभ
चतुर्थ भाव	दुःख, वैर
पंचम भाव	धन हानि
षष्ठ भाव	सुख, धन-लाभ
सप्तम भाव	नाश, कलह
अष्टम भाव	मृत्युतुल्य कष्ट, पीड़ा
नवम भाव	हानि, पाप कर्म में वृद्धि
दशम भाव	लाभ, कभी-कभी वैर भी
एकादश भाव	सौभाग्य, सुख
द्वादश भाव	व्यय

मतान्तर से ऐसा भी कहा गया है कि राहु और केतु सामान्यतः गोचर में उस ग्रह के फल देते हैं जिनके स्वामियों की राशि में वे जन्म कुण्डली में बैठे होते हैं। यथा मीन में बैठा राहु गुरु जैसे तथा कन्या में बैठा केतु बुध जैसे फल गोचर में देगा।

मंत्रेश्वर महाराज आगे कहते हैं कि गोचर के सूर्य और मंगल, जो अग्नि तत्व के क्रूर ग्रह हैं, किसी राशि में प्रवेश होते ही अपना प्रभाव दिखाते हैं। पहले 10 अंशों तक इनका अधिक जोर रहता है; जबकि गुरु और शुक्र राशि के मध्य भाग (10^0-20^0) अथवा द्वितीय द्रेष्कोण में गोचर के कारण फल प्राप्ति में विशेष सहायक होते हैं। चन्द्र तथा शनि किसी राशि में 20^0 से 30^0 तक विशेष फल दिखाते हैं। बुध और राहु (तथा केतु) पूरे 30^0 तक अपने फल दिखाते ही रहते हैं अर्थात् इनके गोचर के कारण फल प्राप्ति की सम्भावना पूरी राशि में गोचर होने तक बनी रहती है। अनुभव से पाया गया है कि वक्री ग्रहों के गोचर के फल विपरीत होते हैं अर्थात् वक्री शनि पहले 10^0 तक तथा वक्री मंगल 20^0 से 30^0 तक गोचर के फल देंगे।

यहाँ विशेष ध्यान देने की बात है कि मंत्रेश्वर महाराज ने जो गोचर के फल बताए हैं उन्हें पत्थर की लकीर नहीं मानना चाहिए। हाँ, बताए गए प्रभाव देखने में प्रायः आते हैं। परन्तु फल प्राप्ति तो योग, दशा, ग्रहों के स्वामित्व, भावों की मजबूती तथा जातक की आयु, देश, काल, पात्र जैसी बातों पर निर्भर करती है। अर्थात् उपर्युक्त कारणों से मंत्रेश्वर महाराज के कहे गए फलों में परिवर्तन होने की सम्भावना बराबर बनी रहती है। इसे समझाने के लिए शनि के गोचर फल में आने वाले परिवर्तनों एवं उनके कारणों के बारे में चर्चा आगे भी की जाएगी।

ऊपर वर्णित गोचर फलों की बारीकी से जाँच की जाए तो कुछ बातें सामने आती हैं। मंगल और शनि गोचर में 12 भावों की परिक्रमा के क्रम में मात्र तीन भावों से ही गुजरते हुए शुभ फल दे पाते हैं, शेष 9 भावों में इनके गोचरवश फल कष्टकारी ही होते हैं। स्वाभाविक ही है कि इन्हें सर्वाधिक कष्टदायक माना गया है। एक बात और भी है, गोचर में मंगल तथा शनि जब चन्द्रमा से त्रिषडाय (3, 6, 11) घरों में आते हैं तब शुभ फलदायक होते हैं। यह भी अनुभव सिद्ध बात है कि गोचर के मंगल और शनि किसी भी भाव में गोचर करते हुए चन्द्र लग्न से इन भावों को देखते भी हैं तो उन अशुभ भावों के बुरे फलों में थोड़ी कमी आ जाती है। जातक की कुण्डली की विवेचना में भी त्रिषडाय घरों में बैठे दुष्ट ग्रहों के शुभ फल देने की बात कही गई है।

अब अन्य पापी/क्रूर ग्रहों पर भी एक दृष्टि डाली जाए तो लगेगा कि सूर्य, राहु तथा केतु 12 में से 4 घरों में गोचरवश अच्छे फल दे जाते हैं (3, 6, 10, 11) इन भावों को उपचय स्थान कहते हैं–**उपचयः** अर्थात् वृद्धि, समृद्धि, अभिवृद्धि आदि।

आइए, अब शुभ ग्रहों को भी इसी चश्मे से देख लिया जाए। चन्द्रमा तथा बुध ठीक-ठीक शुभ ग्रह नहीं कहे जाते। चन्द्रमा में पक्ष बल (अष्टमी शुक्ल पक्ष से कृष्ण पक्ष सप्तमी तक) न हो तो चन्द्रमा शत-प्रतिशत फल देने में असमर्थ रहता है। दूसरी ओर, बुध के बारे में तो कहा ही गया है कि 'गंगा गए तो गंगादास, यमुना गए तो यमुनादास'–यानी साहज्य (जिसके साथ बैठा हो) के अनुसार फल देता है बुध। अतः बुध पर अशुभ प्रभाव न हो तो वह गोचरवश अवश्य अच्छे फल देने में सहायक हो सकता है। चन्द्रमा और बुध 12 में से 6 घरों में अच्छे फलदायक कहे गए हैं।

अब शेष बचे–देव गुरु बृहस्पति तथा राक्षसों के गुरु शुक्र–दोनों का तुलनात्मक अध्ययन बड़ा रोचक है। शुक्र 12 में से 9 स्थानों में शुभ फलदायक हैं। यदि किसी जातक की कुण्डली में शुक्र प्रबल हो तथा उसे सही आयु में उचित दशा मिलती जाए तो गोचर का शुक्र उसे हर प्रकार के सुख, वैभव और शान्ति प्रदान करेगा ही। देवगुरु बृहस्पति यद्यपि मात्र पाँच स्थानों में सुखद फल देते हैं परन्तु बृहस्पति महाराज को दो विशेष दृष्टियाँ प्राप्त हैं–इस प्रकार गोचर में बृहस्पति कुण्डली के प्रायः प्रत्येक भाव की रक्षा येन-केन-प्रकारेण कर ही देते हैं।

अब एक और बात गौर करने की है। 9 ग्रहों और 12 भावों से गोचर की $12 \times 9 = 108$ सम्भावनाएँ बनती हैं–इन्हें देखने से एक बात उभर कर आती है कि सूर्य, राहु और केतु क्रमशः चार भावों में, मंगल और शनि क्रमशः 3 भावों में, बुध और मंगल 6 भावों में, शुक्र 9 भावों में, तथा गुरु 5 भावों में शुभ हैं। इनका योग देखें ता $(4 + 4 + 4 + 3 + 3 + 6 + 6 + 9 + 5 = 44)$ पता चलता है कि 108 सम्भावनाओं में मात्र 44 गोचर सम्भावनाएँ ही शुभ हैं अर्थात् मात्र 40%। शेष 60% गोचर सम्भावनाएँ अशुभ हैं। जीवन के ज्वार-भाटे में प्रायः यही स्थिति देखी भी जाती है।

ये सामान्य फल जन्म चन्द्र लग्न से ग्रहों के गोचर के कारण हैं किन्तु मंत्रेश्वर महाराज भी कहते हैं कि गोचर के अध्ययन के लिए सभी लग्न उपलब्ध हैं। इसलिए गोचर अध्ययन के लिए हम सारे दरवाजे खुले रखेंगे। जन्म कुण्डली में स्थित ग्रहों से गोचर फल की जांच से एक स्थिति बनती है। आगे सारिणी 3.9 में जन्म कुण्डली में स्थित ग्रहों से उन भावों के बारे में बताया गया है जहाँ

वे ग्रह गोचर में आकर बुरे फल देते हैं। शनि गोचरवश जब अपनी जन्म कुण्डली स्थित भाव से गुजरेगा तो बुरे फल देगा। इसी प्रकार जन्म कुण्डली में राहु जहाँ है, गोचरवश जब वहाँ से नवम् भाव में आएगा तब बुरे फल देगा। बाकी ग्रह भी इसी प्रकार गोचरवश जन्म कुण्डली में अपनी स्थिति से विभिन्न विशेष भावों में आने पर बुरे फलदायक कहे गए हैं। गोचर में जितने भी अधिक ग्रह अपनी जन्म कुण्डली की स्थिति से इन भावों में आएँगे, गोचर का फल उतना ही कष्टकारी होगा।

सारिणी–3.9

शनि	प्रथम भाव	शुक्र	षष्ठम भाव
केतु	द्वितीय भव	मंगल	सप्तम भाव
गुरु	तृतीय भाव	चन्द्र	अष्टम भाव
बुध	चतुर्थ भाव	राहु	नवम भाव
सूर्य	पंचम भाव		

❑

अध्याय-4

गोचर और पुराण

विष्णु पुराण के तीसरे अंग के षष्ठम खंड में श्लोक 28/29 में विद्याओं का वर्णन इस प्रकार किया गया है–

अंगानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्याय विस्तरः।
पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्या ह्येता चतुर्दश।।

आयुर्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वश्चैव तेत्रयः।
अर्थशास्त्रं चतुर्थं तु विद्या ह्यष्टादशैव ताः।।

अर्थात् छह वेदांग, चार वेद, मीमांसा, न्याय, पुराण तथा धर्मशास्त्र मिलकर चौदह विद्याएँ हैं। आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्व और चौथा अर्थशास्त्र जोड़ने से अठारह विद्याएँ होती हैं।

जिसे जितनी अधिक विद्याएँ आती हों वह उतना ही बड़ा विद्वान। हमारी संस्कृति में पुराणों का बड़ा महत्व है तथा उनमें भी अठारह पुराणों को महापुराण कहा गया है। यद्यपि *विष्णु पुराण* में महर्षि पराशर तथा मैत्रेय के संवाद के द्वारा खगोल शास्त्र सहित ज्योतिष शास्त्र सम्बन्धी बहुत सारी जानकारियाँ है फिर भी *विष्णु पुराण* को महापुराण नहीं माना गया है। हाँ, अठारह महापुराणों में ब्रह्म, पद्म, वैष्णव, शैव तथा भागवत पुराणों के *नारददीय पुराण* का स्थान आता हैं। (अन्य बारह महापुराण क्रमशः मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, लिंग, वराह, स्कन्ध, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़ और ब्रह्मांड हैं।)

नारदीय पुराण के पूर्व भाग द्वितीय पाद में प्रजापति ब्रह्मा के मानस पुत्र श्री सनन्दन नारद मुनि से ज्योतिष वेदांग की चर्चा करते हुए कहते हैं–

"ज्योतिषांग प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ब्रह्मणा पुरा।
यस्य विज्ञान मात्रेण धर्म सिद्धिर्भवे नृणाम्।।
त्रिस्कन्धं ज्योतिषंशास्त्रं चतुर्लक्षमुदा हृतम्।
गणितं जातकं विप्र संहिता स्कन्ध संज्ञितम्।।"

अर्थात् अब मैं ज्योतिष नाम के वेदांग को बताता हूँ जिसका पूर्व काल में साक्षात् ब्रह्माजी ने उपदेश दिया था तथा जिसके विज्ञान मात्र से ही मनुष्यों को धर्म सिद्धि हो जाती है। ज्योतिष शास्त्र में चार लाख श्लोक बताए गए हैं। ज्योतिष शास्त्र के तीन स्कन्ध (खण्ड) क्रमशः गणित (सिद्धांत) जातक (होरा) तथा संहिता हैं।

आगे सनन्दन संहिता को शास्त्र की संज्ञा देते हुए बताते हैं–

"संहिता शास्त्र रुपंच ग्रहचारोऽब्द लक्षणम्।"

अर्थात् ग्रह के चार (गोचर) एवं वर्ष लक्षण आदि संहिताशास्त्र में कहे गए हैं।

यहाँ थोड़ा रुक कर ध्यान देने की बात है कि आखिर गोचर फल को संहिता स्कन्ध में डालने की क्या आवश्यकता पड़ी; जबकि सनन्दन ऋषि कहते हैं कि जातक के जीवन-मरण पूर्व जन्म आदि सभी बातों का *विचार जातक* (होरा) स्कन्ध में किया गया है। पराशर की अमर कृति को भी होरा शास्त्र के नाम से जाना जाता है। कुछ स्थानों पर इसे *वृहत्पराशर होरा शास्त्र* भी कहते हैं। वराहमिहिर की अद्वितीय रचना जिसमें जातक के जीवन में आने वाले उतार-चढ़ाव की चर्चा है, उसका भी नाम है–*वृहज्जातक*। इन दोनों पुस्तकों में गोचर का अलग से वर्णन नहीं है। वराहमिहिर गोचर की चर्चा *वृहत् संहिता* में करते हैं, *वृहज्जातक* में नहीं। जातक खण्ड में गोचर की सीधी चर्चा पौराणिक काल के बाद ही मिलती है, ऐसा क्यों है?

एक सम्भावना प्रतीत होती है कि सही गोचर फल जानने के लिए कई तथ्यों पर एक साथ विचार करना आवश्यक हो जाता है। पहली बात, गोचर में एक साथ नौ ग्रह विचरण कर रहे हैं। प्रत्येक ग्रह का चन्द्र-लग्न से अलग-अलग भावों में होने के कारण अलग-अलग फल हैं। प्रत्येक ग्रह के जन्म कुण्डली में अपनी राशि से विभिन्न भावों में होने के कारण भी अलग प्रकार के फल हैं। फिर गोचर में स्थित ग्रह आपस में युति, दृष्टि या आपसी मित्रता आदि से कैसे जुड़े हैं, इसका भी फल पर असर पड़ता है। इसे समझने के लिए मान लीजिए कि किसी व्यक्ति की राशि कुंभ है यानी जन्म कालीन चन्द्रमा कुंभ में बैठा है। जन्म कालीन शनि यदि मेष में हो तथा गोचरवश भी शनि में आ जाए तो सारणी 3.7 के अनुसार चन्द्रमा से तृतीय होने के कारण शुभ तथा सारणी 3.9 के अनुसार शनि

से प्रथम होने के कारण गोचर के शनि का फल अशुभ माना जाएगा। शनि चन्द्रमा को नैसर्गिक रूप से शत्रु मानता है परन्तु कुण्डली में उससे तृतीय भाव में होने से तात्कालिक मित्र होकर पंचधा मैत्री के आधार पर सम है। अतः शनि के फल चन्द्रमा की दिशा में सम होंगे। अब आप ही बताइए कि यह गोचर शुभ फलदायक है या अशुभ फलदायक? है न बहुत उलझनों वाली बात।

दूसरी बात याद रखने की है कि गोचर के ग्रह भाव मध्य से कितनी दूरी पर हैं क्योंकि ये बातें भी गोचर फल को प्रभावित करती हैं। ग्रहों के भाव मध्य आदि से दूरियों पर अध्याय-6 में भावों में गोचर के लिए संवेदनशील और महत्वपूर्ण क्षेत्र के अन्तर्गत विशेष रूप से चर्चा की गई है। गोचर की असर विभिन्न वर्ग कुण्डलियों पर भी पड़ता है। इतने सारे तथ्यों का समन्वय करके किसी नतीजे पर पहुँच पाना सहज नहीं है। इसलिए पराशर आदि ऋषियों ने गोचर के समस्या का निदान *जातक स्कन्ध* में सभी ग्रहों के गोचर को एक साथ लेकर *अष्टकवर्ग* से किया है। *अष्टकवर्ग* पर विशेष और विस्तृत चर्चा हम आगे करेंगे। पहले तो पुराणों में उपलब्ध गोचर पर एक नजर डाली जाए। देखते हैं, सनन्दन ऋषि गोचर फल में और क्या बताते हैं?

वेध–इस पुस्तक के पिछले ही अध्याय में चन्द्र लग्न से विभिन्न भावों में विभिन्न ग्रहों के गोचरफल की चर्चा की गई है। वहाँ यह भी कहा गया है कि ये फल शत-प्रतिशत फलित नहीं हो पाते। कई कारण हैं जिनसे गोचर फलों में अन्तर आते हैं। *नारद पुराण* में एक ऐसा ही कारण बताया गया है–**'वेध'**, जिससे गोचर के शुभ फल नहीं मिल पाते। **वेध** का शाब्दिक अर्थ है–देखना, घायल करना, छेद करना आदि। इसे एक उदाहरण से समझिए। मान लीजिए, चन्द्र लग्न से गोचर का मंगल तृतीय भाव में आ गया। इसके फल शुभ कहे गए हैं। किन्तु *नारद पुराण* में बताया गया है कि यदि उसी समय गोचर का कोई अन्य ग्रह चन्द्र लग्न से बारहवें भाव में आ जाए तो हम कहेंगे कि यह ग्रह गोचर के मंगल का वेध कर रहा है। ऐसी परिस्थिति में वेध हो जाने के कारण मंगल के सारे शुभ फल धरे के धरे रह जाएँगे और कुछ नहीं मिलेगा। यह कुछ ऐसा ही हुआ कि शुभफलों के सन्देशवाहक के हाथ-पाँव बाँध दिए गए हैं, वह बेचारा चाह कर भी कुछ नहीं कर पाएगा। *नारद पुराण* में वर्णित प्रत्येक ग्रह के शुभ फलदायी गोचर एवं उन भावों के वेध भाव आगे दिए गए हैं। यह बात याद रखना आवश्यक है कि ये भाव चन्द्र लग्न से देखे जाने हैं।

सारिणी 4.1

गोचर के ग्रह	चन्द्र लग्न से शुभ फलदायी भाव / चन्द्र लग्न से इन शुभ फलदायी भावों के वेध स्थान	अपवाद
सूर्य	3/9 6/12 10/4 11/5	वेध स्थान में शनि आने से वेध नहीं होता
चन्द्रमा	1/5 3/9 6/12 7/2 10/4 11/5	वेध स्थान में बुध आने से वेध नहीं होता
मंगल	3/12 6/9 11/5	
बुध	2/5 4/3 6/9 8/7 10/8 11/12	चन्द्रमा से वेध नहीं
गुरु	2/12 5/4 7/3 9/10 11/8	
शुक्र	1/8 2/7 3/1 4/10 5/9 8/5 9/11 11/3 12/6	
शनि	3/12 6/9 11/5	सूर्य से वेध नहीं

राहु और केतु गोचर में सूर्य की भाँति ही फल देते हैं इसलिए उनके वेध स्थान भी सूर्य वाले ही हैं। उन्हें अलग से नहीं लिखा गया है। उपर्युक्त सारिणी 4.1 को समझना होगा। पहले सूर्य को देखिए। इसके आगे 3/9. 6/12. 10/4. 11/5 लिखा हुआ है। 3, 6, 10, 11 वैसे भाव हैं जहाँ चन्द्र लग्न से गोचरवश सूर्य के आने से शुभ फल मिलते हैं। किन्तु 3/9 का अर्थ है कि सूर्य के चन्द्र लग्न से तृतीय भाव में गोचरवश जाने से जो शुभ फल प्राप्त हो सकते थे, वे किसी भी ग्रह के चन्द्र लग्न से नवें भाव में आने से नष्ट हो जाएँगे। अपवाद सिर्फ शनि है। यहाँ दो बातें सामने आती हैं। पहली तो यह कि तृतीय भाव में गोचर से गए सूर्य के शुभ फल तभी विपरीत रूप से प्रभावित होंगे जब नवम भाव में शनि के अलावा कोई अन्य ग्रह गोचरवश जाएगा। ऐसी स्थिति में अन्य ग्रह यदि चन्द्र लग्न से बारहवें, चौथे या पाँचवें भावों में बैठ भी जाएँ तो सूर्य का वेध नहीं होगा क्योंकि ये भाव सूर्य के चन्द्र लग्न से क्रमशः 6ठे, 10वें तथा 11वें भावों में जाने पर वेधकारी हो जाते हैं। उसी प्रकार चन्द्र लग्न से एकादश भाव में गोचरवश आए गुरु के फल तब शुभ नहीं रह जाएँगे जब कोई ग्रह गोचरवश चन्द्र लग्न से अष्टम भाव में आ जाएगा।

दूसरी बात अपवादों की है। वेध के चार अपवाद कहे गए। सूर्य और शनि में परस्पर वेध नहीं होता क्योंकि शनि को सूर्य का पुत्र कहा गया है। उसी प्रकार बुध और चन्द्रमा आपस में वेध नहीं करते क्योंकि इनमें भी पिता-पुत्र के सम्बन्ध हैं। चन्द्रमा बुध के पिता माने गए हैं। (इनके बारे में सुन्दर आख्यान इसी पुस्तक के परिशिष्ट-I में दिए गए हैं।) इन बातों को हम निम्नांकित गोचर कुण्डली 4.1 ले समझेंगे।

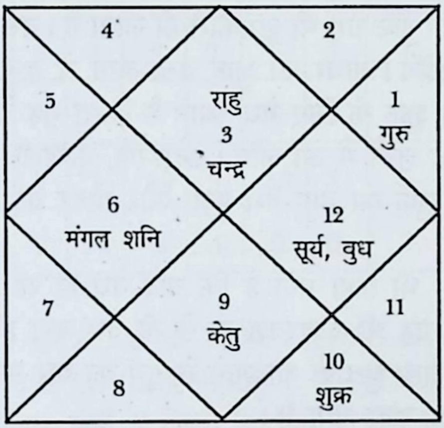

कुण्डली–4.1 (गोचर कुण्डली)

कुण्डली संख्या 4.1 में चन्द्रलग्न मिथुन है। गोचर वश चन्द्रमा भी मिथुन में आ गया है। शेष आठ ग्रह गोचर में जहाँ हैं उन्हें इसी कुण्डली में दिखाया गया है। चन्द्र लग्न से दशम भाव में गोचरवश सूर्य शुभ फल देते हैं। उसके लिए वेध स्थान है—चतुर्थ। यहाँ गोचर वश चतुर्थ भाव में शनि आकर भी सूर्य के शुभ फलों का वेध नहीं कर रहे क्योंकि शनि सूर्य के पुत्र हैं। हाँ, मंगल के कारण सूर्य का वेध हो रहा है। किन्तु चन्द्र लग्न में एकादश के गुरु तब तक शुभ फल देने में असमर्थ रहेंगे जब तक गोचर के शुक्र महाराज अष्टम से टल नहीं जाते। यद्यपि गुरु के लिए वेध स्थान दशम भी लिखा गया है लेकिन वह नवम के गुरु के लिए है, एकादश के गुरु के लिए नहीं। इसलिए सूर्य से गुरु का वेध नहीं हो रहा।

उपर्युक्त विवेचना से एक बात समझ में आती है। पिछले अध्याय में चर्चा की जा चुकी है कि 108 में 44 सभावनाएँ ही शुभ गोचर की बनती हैं। उस पर ये 44 वेध और आ टपके हैं। नीम चढ़े करेले का स्वाद ही वेध से मिलेगा अर्थात्

गोचर के ग्रह शुभ फल कम और अशुभ फल अधिक देने को तत्पर प्रतीत होते हैं। यह बात ध्यान रखने की है।

वाम वेध—*नारद पुराण* के पूर्व भाव द्वितीय पाठ के 278—79 श्लोकों में वाम वेध की चर्चा हुई है। यह भी बड़ी मनोरंजक बात है। यदि कोई ग्रह अपने शुभ स्थान में गोचरवश आ जाए तो अच्छे फल देता है। किन्तु वही ग्रह अपने वेध स्थान में चला जाए तो क्या हो? नारद पुराण में कहा गया कि यदि ग्रह अपने वेध स्थान में हो तथा जिस शुभ स्थान के लिए वह भाव वेधकारक है वहाँ कोई अन्य ग्रह आ जाए तो दुष्ट ग्रह भी शुभकारी हो जाता है। उसे हम पिछले उदाहरण कुण्डली 4.1 से समझेंगे। गोचर का शुक्र चन्द्र लग्न से अष्टम भाव में है। चन्द्र लग्न से अष्टम भाव शुक्र के लिए वेध स्थान है किन्तु यह वेध स्थान तब है जब शुक्र गोचर वश चन्द्र लग्न में आ जाए। उदाहरण, कुण्डली में चन्द्र लग्न में राहु बैठा है। अतः यहाँ शुक्र का वाम वेध हुआ और गोचर का शुक्र शुभ फलदायक हो गया है।

मतान्तर से यह भी कहा गया है कि यदि वेध हो रहा हो किन्तु बिद्ध ग्रह के साथ कोई अन्य ग्रह भी गोचरवश हो ले तो वेध नष्ट हो जाता है। इस मत के अनुसार सूर्य के साथ बुध के आ जाने से सूर्य का वेध नष्ट हो गया, यह वाम वेध का दूसरा प्रकार कहा गया है।

वेध प्रकार में ही अब एक अन्य विवाद की चर्चा आवश्यक प्रतीत होती है जिसका जिक्र न तो नारद पुराण में है, न ही सम्भवतः किसी संहिता में, परन्तु इसके बारे में *जातक परिजात* के तेरहवें अध्याय के 60वें श्लोक में वर्णन आया है,

"नवमादष्टमाधीशो नवमात्खरपोऽथवा।
शनिर्वेधेषु यः क्रूरः सम्भवेत् पितृमृत्युदः।।"

अर्थात् नवम भाव से अष्टम (चतुर्थ भाव) का अथवा 22वें द्रेष्कोण का स्वामी शनि हो तो (गोचर में) क्रूर ग्रह शनि द्वारा बिद्ध होने पर पिता की मृत्यु हो सकती है।

तत्पश्चात् ज्योतिषशास्त्र के विद्वान् तथा *जातक परिजात* के व्याख्याकार पंडित गोपेश कुमार ओझा ने वेध स्थान बोध चक्र बताया है। इसका स्रोत सम्भवतः काल प्रकाशिका है। यह बोध चक्र आगे दिया जा रहा है। चन्द्र लग्न से विभिन्न भाव I, II. III आदि से अंकित किए गए हैं।

सारिणी–4.2

गोचर के ग्रह	I	II	III	IV	V	VI	VII	VIII	IX	X	XI	XII
सूर्य (राहु, केतु)	1	2	9	3	6	12	7	8	10	4	5	11
चन्द्र	5	1	9	3	6	12	2	7	10	4	5	11
मंगल	1	2	12	3	4	9	6	7	8	10	5	11
बुध	2	5	4	3	7	9	6	7	8	8	12	11
गुरु	1	12	2	5	4	6	3	7	10	9	8	11
शुक्र	8	7	1	10	9	12	2	5	11	4	3	6
शनि	1	2	12	3	4	9	6	7	8	10	5	11

यदि सारिणी 4.2 समझनी हो तो उदाहरण कुण्डली 4.1 में बुध को देखिए। वह गोचर में चन्द्र लग्न से दशम भाव में आने से शुभ फलदायक है। अब सारिणी 4.2 में दशम भाव देखिए, जहाँ X लिखा है। वहाँ से नीचे चलिए। बुध के स्थान में वहाँ 8 लिखा है। अर्थात् चन्द्र लग्न से अष्टम भाव में गोचरवश आया कोई भी ग्रह गोचर के इस बुध के लिए वेधकारी होगा और गोचर के बुध के शुभ फल नहीं मिलेंगे। यहाँ गोचरवश शुक्र उपस्थित है। बुध के लिए अपवाद चन्द्रमा है कोई अन्य ग्रह नहीं। अतः बुध का वेध शुक्र द्वारा इस सारिणी के अनुसार हो गया। *नारद पुराण* के अनुसार भी दशम के बुध के लिए अष्टम में गोचर वाले ग्रह वेधकारी होते थे। इस सारिणी में प्रत्येक ग्रह के लिए चन्द्र लग्न से प्रत्येक भाव में एक वेध स्थान बता दिया गया है, अर्थात् 108 वेध स्थान हो गए हैं। उपर्युक्त सारिणी में राहु-केतु को सूर्य के तुल्य मान लिया गया है क्योंकि मंत्रेश्वरजी की भी यही उक्ति है। मूल सारणी में मात्र राहु को मंगल तथा शनि के साथ दिखाया गया था, केतु की चर्चा ही नहीं है वहाँ। हमारे विचार से केतु को भी उसी श्रेणी में रखने से **'शनिवत राहु, कुजवत केतु'** की उक्ति सही होगी। सारिणी में एक बात स्पष्ट है कि वेध के वही भाव लिए गए हैं जो *नारदीय पुराण* में वर्णित हैं किन्तु वाम वेध के भाव वही नहीं है। एक बार इसे फिर से समझें। वाम भेद की चर्चा में हमने कहा था कि अष्टम में गोचरवश आए शुक्र के अशुभ फल को चन्द्र लग्न में गोचर के राहु ने वाम वेध के कारण खत्म कर

दिया है परन्तु 4.2 सारिणी के अनुसार अष्टम में गोचर के शुक्र का वाम वेध पंचम में गोचरवश आए किसी अन्य ग्रह से होगा।

विपरीत वेध—वाम वेध से मिलती-जुलती बात है—विपरीत वेध। इसकी चर्चा *मुहूर्त चिन्तामणि* में की गई है। ऋषि काश्यप के हवाले से *मुहूर्त चिन्तामणि* में विपरीत वेध के लिए गोचर के ग्रहों के स्थान नियत किए गए हैं जहाँ किसी अन्य ग्रह के आ जाने से विपरीत वेध की स्थिति बनती है। यह स्थिति वेध के विपरीत फल अर्थात् अच्छे फलदायक कही गई है। इसे सारिणी 4.3 में बताया गया है। आइए, पहले सारिणी देख लें। फिर इस पर चर्चा की जाएगी।

सारिणी—4.3

क्रम संख्या		कहाँ से देखें	भाव
1	गोचर का सूर्य किन भावों में हो विपरीत वेध के भाव	 चन्द्र लग्न से गोचर के सूर्य से	 4, 5, 9, 11 3, 6, 10, 11
2	गोचर का चन्द्र किन भावों में हो विपरीत वेध के भाव	 चन्द्र लग्न से गोचर के चन्द्र से	 1, 4, 5, 8, 9, 12 2, 3, 6, 7, 10, 11
3	गोचर का मंगल किन भावों में हो विपरीत वेध के भाव	 चन्द्र लग्न से गोचर के मंगल से	 5, 9, 12 3, 6, 11
4	गोचर का बुध किन भावों में हो विपरीत वेध के भाव	 चन्द्र लग्न से गोचर के बुध से	 3, 6, 7, 9, 12 2, 5, 8, 10, 11
5	गोचर के गुरु किन भावों में हो विपरीत वेध के भाव	 चन्द्र लग्न से गोचर के गुरु से	 3, 4, 10, 12 2, 5, 9, 11
6	गोचर के शुक्र किन भावों में हो विपरीत वेध के भाव	 चन्द्र लग्न से गोचर के शुक्र से	 6, 7, 10 2, 5, 9

	गोचर के शनि किन भावों में हों विपरीत वेध के भाव	चन्द्र लग्न से गोचर के शनि से	5, 9, 12 3, 6, 11
8	राहु-केतु किन भावों में हों विपरीत वेध के भाव	चन्द्र लग्न से गोचर के राहु से	4, 5, 9, 11 3, 6, 10, 11

आइए, इस सारिणी को सूर्य के सन्दर्भ में समझें। गोचर के सूर्य को जन्म कुण्डली के चन्द्र लग्न से देखिए। वहाँ वेध के भाव 4, 5, 9 तथा 11 बताए गए हैं। यद्यपि सारिणी 4.1 में सूर्य के लिए वेध के भाव 4, 5, 9 तथा 12 कहे गए हैं। ऐसे अन्तर सभी ग्रहों में आप देख सकते हैं। गोचर वश सूर्य जब जन्म कुण्डली के चन्द्रमा से चौथे भाव में आ जाए तो इस सारिणी के अनुसार वह वेध भाव होगा परन्तु उसी समय गोचरवश कोई अन्य ग्रह गोचर के सूर्य से तीसरे भाव में पहुँच जाए तो विपरीत वेध की स्थिति बन जाएगी जो शुभ फलदायक होगी। विपरीत वेध को पौराणिक मान्यता प्राप्त नहीं; जबकि वाम वेध को है। इसलिए विपरीत वेध का प्रयोग बेहद सावधानी से तथा अच्छी तरह परखने के बाद ही करना उचित होगा।

❑

अध्याय-5

गोचर पर अन्य प्रभाव

कई बार एक संशय उठाया जाता है कि *नारद पुराण* के कहे गए गोचर के फल पूर्णतः सही क्यों नहीं उतरते हैं? दरअसल, गोचर को ठीक से समझने के लिए हमें उन तत्वों को जानना होगा जिनके कारण गोचर के फल प्रभावित होकर परिवर्तित हो जाते हैं। इनमें कुछ पर पहले मोटे तौर से चर्चा की जा रही है। बाद के अध्यायों में इसी बात पर और विस्तार से चर्चा की जाएगी। सच तो यह है, जो सन्देशवाहक अपनी पोटली लेकर चला है उसे रास्ते में कौन मिला, कब मिला, कैसे मिला और क्यों मिला—सब कुछ उसे तो प्रभावित करेंगे ही। आइए, उन तत्वों को समझें जिनमें गोचर के फलों को प्रभावित करने की क्षमता है।

1. लग्न, 2. मूर्ति निर्णय 3. नक्षत्र 4. अष्टक वर्ग तथा 5. दशा—ये पाँच ऐसे तत्व हैं जो गोचर के फल को सीधे प्रभावित करते हैं। इस अध्याय में हम इन तत्वों के अलावा गोचर से सम्बन्धित कई ऐसी बातों की भी चर्चा करेंगे जिनके बारे में सन्देह अधिक हैं और स्पष्टता कम, जिससे जातक के लिए अकारण भय पैदा होते हैं। किन्तु इन तत्वों पर चर्चा करने से पहले हम एक विशिष्ट गोचर को समझना चाहेंगे, वह है—जन्म कुण्डली के चन्द्रमा पर शनि का गोचर। शनि का यूँ भी पूरा नाम है—शनैश्चरः अर्थात् जो धीमे-धीमे चले। तीव्र गति से चलने वाले ग्रहों का गोचर के कारण पड़ने वाला प्रभाव इतने कम समय का होता है कि जैसे कोई सपना देखा हो कि आँख खुलने के पहले ही गायब! पर शनि के प्रभाव को छोटे-छोटे टुकड़ों में, धीमी गति से चलने वाली फिल्म की तरह समझा जा सकता है। शनि महाराज एक राशि में ढाई वर्ष रहते हैं। मतलब हुआ कि साढ़े सात वर्षों में शनि तीन राशियों को गोचरवश भोगेगा। शनि महाराज जन्म कुण्डली के चन्द्रमा से बारहवें भाव में गोचर में प्रवेश करके मानो दस्तक

देकर अपने आने की सूचना देते हैं। कहते हैं कि तुम्हारी साढ़े साती शुरू हो गई। अर्थात् जन्म चन्द्रमा से बारहवें भाव में शनि के आते ही साढ़े साती प्रारम्भ होती है। चन्द्रमा से बारहवें भाव में शनि के आने के समय से शुरू होकर चन्द्रमा से द्वितीय भाव में शनि के रहने तक का काल प्रायः साढ़े सात वर्ष या तीन राशियों से गुजरने का होता है। सामान्य जन 'साढ़े साती' का नाम सुनकर हीं घबराते हैं। लेकिन साढ़े साती का असर वैसा बुरा होता नहीं जैसे हमें डराया जाता रहा है। इसके असर कई बार बहुत हितकारी भी पाए जाते हैं। पहले साढ़े साती को हम एक उदाहरण द्वारा समझेंगे।

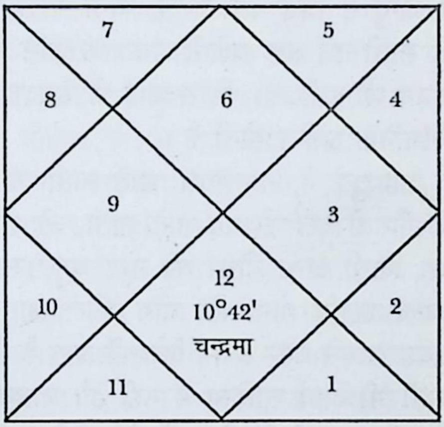

उदाहरण कुण्डली–5.1

ऊपर दी गई कुण्डली 5.1 में जातक का जन्मकालीन चन्द्रमा 10^0 42, पर मीन राशि में है। शनि के कुंभ राशि में प्रवेश करते ही जातक के लिए साढ़े साती प्रारम्भ हुई। यह तब खत्म होगी जब चन्द्रमा से दूसरी राशि, अर्थात् मेष राशि को गोचर के शनि पार करके वृषभ में प्रवेश करेंगे। इसी प्रकार यदि किसी व्यक्ति की राशि मेष रही हो तो शनि के मीन में प्रवेश करते ही उसके लिए साढ़े साती प्रारम्भ हो जाएगी और वह तब तक चलेगी जब तक शनि मिथुन में प्रवेश न कर जाए। यह साढ़े साती के बारे में एक सामान्य तौर से स्वीकृत मत है। इस पूरी प्रक्रिया में शनि को कुल मिलाकर 90^0 चलना पड़ता है। अब सोचने की बात है कि यदि किसी व्यक्ति की कुण्डली में मीन में चन्द्रमा 1^0 का हो तथा किसी अन्य व्यक्ति की कुण्डली में भी मीन का ही चन्द्रमा 28^0 का हो तो क्या दोनों स्थितियों में साढ़े साती के फल एक जैसे ही होंगे? अनुभव से देखा गया है कि साढ़े साती के असर दोनों परिस्थितियों में अलग-अलग हुए हैं।

वर्तमान काल में एक सुप्रसिद्ध ज्योतिषी हुए—श्री काटवे। उनके मतानुसार, गोचर के शनि को जन्मकालीन चन्द्रमा के सापेक्ष में ही 90^0 चलना चाहिए तभी साढ़े साती को पूरा माना जाएगा। वे साढ़े साती को राशि की बजाय चन्द्रमा के रेखांश पर आधारित मानते हैं। अर्थात् चन्द्रमा से 45^0 पहले शनि के आते ही साढ़े साती प्रारम्भ होनी चाहिए न कि एक राशि पहले आने से। यह साढ़े साती तब तक चलेगी जब तक शनि जन्म के चन्द्रमा से 45^0 आगे न निकल जाए। इसे उदाहरण से समझें। उपर्युक्त कुण्डली में चन्द्रमा मीन राशि में $10^0\ 42'$ पर है। इसे साढ़े साती का मध्य बिन्दु कहा जा सकता है। साढ़े साती प्रारम्भ तब होगी जब शनि इस बिन्दु से ठीक 45^0 पहले, यानी मकर राशि में $25^0\ 42'$ पर आए होंगे। यह साढ़े साती तब तक चलेगी जब तक शनि मेष राशि में $25^0\ 42'$ तक न पहुँच जाएँ। हम भी इसी मत को सच्चाई के ज्यादा करीब पाते हैं क्योंकि यह सोच अधिक वैज्ञानिक प्रतीत होती है।

जैसा हम पहले कह चुके हैं, सामान्यतः साढ़े साती का नाम सुनकर ही भय होता है। किन्तु यदि गौर से देखें तो यह साढ़े साती, जो शनि के गोचर का एक तकनीकी नाम भर है, किसी अन्य गोचर की तरह बहुत सहजता से लिया जाना चाहिए। हमें फिर याद रखना होगा कि योग और दशा के अभाव में गोचर शक्तिहीन होते हैं। यह जानने और ध्यान देने की बात है कि साढ़े साती नामक बीमारी की चर्चा किसी भी आर्ष साहित्य में नहीं है। *जातकाभरणम्*, *फलदीपिका* या *जातकादेश मार्ग* आदि पुस्तकों में भी जहाँ गोचर की चर्चा भी की गई है, साढ़े साती का नाम तक नहीं है। संहिता में तो है ही नहीं। यह बात तो तय है कि साढ़े साती का यह मसला बहुत पुराना नहीं है और कुछ निश्चित कारणों से जिनके पीछे एक स्पष्ट सोच है, शनि के गोचर के प्रति आजकल जागरूकता बढ़ी है। फिर भी, अधिकतर लोगों ने इसे अच्छा नहीं माना है।

आइए अब विचार करें कि शनि के चन्द्रमा पर गोचर को इतना बुरा क्यों माना गया? दरअसल, चन्द्रमा है मन का प्रतीक और शनि महाराज यूँ भी भय, अपमान, खिन्नता, तन्द्रा (आलस्यवश कुछ न करने की इच्छा) आदि नकारात्मक भावनाओं के कारक हैं। शनि विच्छेदकारक हैं तथा मानसिक अवसाद (डिप्रेशन जैसी मनोवैज्ञानिक बीमारियाँ) के कारक भी। जब मन (चन्द्रमा) पर एक साथ ऐसे असर होने लगे तो स्वाभाविक है कि जातक परेशानी का अनुभव करेगा। फिर शनि तो बड़े सख्त मिजाज, सिद्धान्तवादी, अनुशासन-प्रिय हैं तथा ठोक बजाकर, रगड़-रगड़ कर, पूरी परेशानी झिलवाने के बाद ही फल देते हैं। यानी जब तक फल हाथ आए तब तक वह बेस्वाद हो चुका होता है। एक बात और, तृतीय

अध्याय में दिए गए शनि के गोचर फल देखेंगे तो पता चलेगा कि साढ़े साती शुरू होने से पहले चन्द्रमा से एकादश भाव में जब शनि आए तो उन्होंने बड़ी मौज करवाई–हर प्रकार के सुख दिए और द्वादश में आते ही एकदम से तोता चश्म हो गए। कहाँ तो बिरयानी खाने को भी तबीयत नहीं होती थी और अब खिचड़ी के भी लाले पड़वा दिए और वह भी पूरे साढ़े सात वर्षों के लिए, क्योंकि चन्द्रमा से द्वादश भाव, चन्द्रलग्न और चन्द्रलग्न से द्वितीय भाव में गोचरवश शनि के आने के फल अच्छे नहीं बताए गए हैं। सच्चाई ऐसी है नहीं। सच तो यह है कि साढ़े साती में मानसिक कष्ट अनुभव होने की सम्भावना ही अधिक होती है, यह मन तो अनुभव ही कर सकता है। किन्तु आगे के उदाहरणों से स्पष्ट होगा कि कई बार इसी साढ़े साती ने रंक को राजा बना दिया है। सुख, समृद्धि, सम्पदा, राज्य सम्मान, उच्च पद आदि सब कुछ देकर ईर्ष्या का पात्र भी साथ-साथ ही बना सकती है साढ़े साती! भौतिक रूप से चाहे साढ़े साती कितनी भी उन्नति दे जाए पर उन दिनों जातक के मन पर क्या बीती होगी, यह उसे ही पता होगा। अनुभव से पता चलता है कि साढ़े साती के दिनों जातक को मानसिक अशांति रहती है। पर याद रखिए, गोचर को फलीभूत होने के लिए सही योग तथा सही दशा–दोनों आवश्यक हैं। इसलिए दशा और योग के बिना साढ़े साती बहुत असरकारी नहीं होगी। हमने गोचर के फल को प्रभावित करने वाले पाँच तत्वों की चर्चा पहले की है, जिनमें सबसे पहला है–लग्न। आइए, अब देखते हैं साढ़े साती के फल को लग्न कैसे प्रभावित करते हैं?

1. साढ़े साती पर लग्न का प्रभाव

पराशर ऋषि योग कारकाध्याय में कहते हैं–

''शुभदाश्च त्रिकोणयाः'' *अर्थात् त्रिकोण (लग्न, पंचम तथा नवम भाव) के स्वामी हमेशा शुभ फल देते हैं। फिर कहते हैं–*

''लग्न केन्द्र त्रिकोणत्वाद् विशेषेण शुभ प्रदम्'' *अर्थात् केन्द्र और त्रिकोण–दोनों कहलाने से लग्न विशेष रूप से शुभ फलदायक है।* किसी जातक की कुण्डली में चन्द्रमा अथवा शनि किसी भी त्रिकोण के स्वामी हो जाएँ तो वे अवश्य शुभ फलदायक होंगे–कहने का अर्थ यह कि इन दोनों ग्रहों में से किसी एक के लग्नेश या त्रिकोणेश होने से ये अपनी दशाओं में शुभ फलदायक तो होंगे ही, इनका गोचर भी कष्टकारी नहीं होगा। आइए, अब देखते हैं कि कौन से लग्न के लिए शनि तथा चन्द्रमा क्रमशः लग्नेश तथा त्रिकोणों के स्वामी होते हैं?

सारिणी–5.1

लग्न	शनि के स्वामित्व के भाव	चन्द्र के स्वामित्व के भाव	निष्कर्ष
मेष	**10 तथा 11**	**4**	**कोई त्रिकोणेश नहीं**
वृषभ	9 तथा 10	3	शनि नवमेश
मिथुन	8 तथा 9	2	शनि नवमेश
कर्क	7 तथा 8	1	चन्द्र लग्नेश
सिंह	**6 तथा 7**	**12**	**कोई त्रिकोणेश नहीं**
कन्या	5 तथा 6	11	शनि पंचमेश
तुला	4 तथा 5	10	शनि पंचमेश
वृश्चिक	3 तथा 4	9	चन्द्र नवमेश
धनु	**2 तथा 3**	**8**	**कोई त्रिकोणेश नहीं**
मकर	1 तथा 2	7	शनि लग्नेश
कुम्भ	12 तथा 1	6	शनि लग्नेश
मीन	**11 तथा 12**	**5**	**चन्द्र त्रिकोणेश**

उपर्युक्त सारिणी 5.1 से निम्नांकित तीन निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं–

(1) मेष, सिंह तथा धनु–ये तीन जो अग्नि तत्व की राशियाँ हैं, के लग्न में होने से शनि अथवा चन्द्रमा कोई भी त्रिकोणेश नहीं होते।

(2) अन्य सभी नौ लग्नों के लिए शनि अथवा चन्द्रमा त्रिकोणेश हैं।

(3) वृषभ और तुला लग्नों पर तो शनि विशेष कृपालु हैं क्योंकि इन लग्नों के लिए शनि त्रिकोणेश के अतिरिक्त केन्द्रेश भी होकर विशेष फलदायक हो जाते हैं।

सम्भवतः ऐसा मानने में कोई बड़ी भूल नहीं होगी कि बुरी दशा आने पर अग्नि तत्वों के लग्नों के लिए साढ़े साती अप्रिय अनुभव लेकर आएगी–अन्य नौ लग्नों पर शनि महाराज या चन्द्रमा की दया दृष्टि से साढ़े साती के असर स्पष्ट रूप से हानिकारक नहीं होंगे। इनमें से कई मामलों में तो साढ़े साती सुखकारी

और अन्य में अप्रत्याशित रूप से शुभ-फलप्रद अर्थात् छप्पर फाड़ कर घर भरने वाली सिद्ध होगी। हाँ, साढ़े साती में बाहर से जो भी ठाट-बाट दिखे, मन में शान्ति रहने के आसार तब तक नहीं होते जब तक जन्मकालीन चन्द्रमा बहुत बलशाली न हो। अर्थात् यदि जन्म कुण्डली में चन्द्रमा पक्ष बली हो, शुभ ग्रहों से दृष्ट हो, उसे अशुभ ग्रहों से कुछ लेना-देना न हो, पापकर्तरी अथवा केमद्रुम योग में न पड़ा हो, और शुभ भाव का स्वामी होकर शुभ स्थान में बैठ जाए तो गोचर के दौरान शनि महाराज उसी से प्रभावित होकर कुछ अच्छा ही दे जाएँगे।

आइए, अब कुण्डली 5.1 को थोड़े विस्तार से कुण्डली 5.2 में देखते हैं। इस बार हमने इस कुण्डली में शनि को भी दिखाया है।

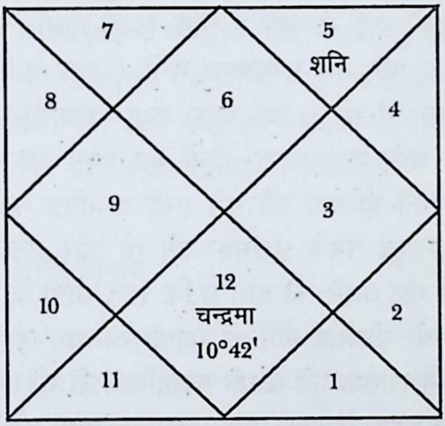

कुण्डली–5.2

सारिणी–5.2

स्थान	शनि		चन्द्रमा	
	स्वामित्व	कहाँ बैठा है	स्वामित्व	कहाँ बैठा है
लग्न से	5 तथा 6	12	11	7
चन्द्र से	11 तथा 12	6	5	लग्न

सारिणी 5.2 देखने से पता चलेगा कि शनि लग्न से 5वें तथा 6ठे भाव के स्वामी होकर 12वें भाव में तथा चन्द्र लग्न से 12वें भाव के स्वामी होकर 6ठे भाव में बैठे हैं अर्थात् शनि दोनों लग्नों से 6ठे तथा 12वां भाव प्रभावित करते हैं।

दूसरी तरफ चन्द्रमा लग्न से 11वें भाव के स्वामी होकर सप्तम भाव में बैठे हैं तथा चन्द्र लग्न से उनका 5वें भाव का स्वामित्व है। शनि महाराज भी लग्न से पंचमेश हैं तथा चन्द्र लग्न से 11वें भाव के स्वामी भी। इस प्रकार चन्द्र और शनि का मिला-जुला असर पंचम तथा एकादश भाव पर भी है। शनि का पूरा प्रभाव 6/12 पर तो है ही। फलित ज्योतिष के स्थापित सिद्धान्तों के आधार पर हम कह सकते हैं कि 6/12 का प्रभाव यात्रा, कुछ मुकदमेबाजी, अस्पताल आदि के रूप में प्रकट होना चाहिए तथा 5/11 का असर सन्तान को कष्ट तथा मित्रों द्वारा धोखे के रूप में मिलना चाहिए। 11वाँ भाव चतुर्थ (मित्र स्थान) से अष्टम जो है।

जातक के साथ शनि की साढ़े साती में क्या हुआ, यह जानने से बात समझ में आएगी। उनके बच्चे कई मामलों में फँसे (5वां भाव), स्वयं मुकदमे में फँस गए (6ठा भाव), जेल जाने की सम्भावना बनी (12वां भाव), पद से च्युत हुए (12वां भाव), अस्पताल में रहे (12वां भाव) तथा विश्वासी मित्रों ने धोखा दिया (11वां भाव) किन्तु शनि तथा चन्द्र—दोनों का जन्म लग्न या चन्द्र लग्न से पंचमेश होना जातक की प्रतिष्ठा को पूरी तरह प्रभावित नहीं कर पाया।

बुरे समय के बावजूद उनके प्रशंसक बने रहे और उनके सम्मान में विशेष कमी नहीं आई। यहाँ गौर करने की बात है कि साढ़े साती के सम्भावित बुरे असर पर शनि तथा चन्द्र के पंचमेश होने से काफी अन्तर पड़ा। अपनी स्थिति के कारण तो दोनों ग्रहों ने जातक को काफी पटखनियाँ दी थीं। एक बात याद रखने की है कि हमने उदाहरण में मात्र शनि तथा चन्द्रमा की स्थिति तथा उनके स्वामित्व को देखा है—अर्थात् वे कहाँ बैठे हैं तथा किन-किन भावों के स्वामी हैं। परन्तु फलित ज्योतिष में ग्रहों के स्वामित्व तथा स्थिति के अलावा भी दृष्टि, युति (सिदृयु या PAC) तथा ग्रह की जन्म कुण्डली में अवस्था आदि जैसे अनेक अन्य कारण हैं जो फल को प्रभावित करते हैं। हमने सिर्फ दो तत्वों को लेकर गोचर की विवेचना द्वारा यह बतलाने की चेष्टा की है कि लग्न के कारण साढ़े साती को लेकर बहुत परेशान होने की आवश्यकता नहीं है।

कालचक्र तो चलता ही रहता है। ग्रहों का गोचर भी चलायमान है। दशाएँ भी निर्बाध गति से बदलती रहती हैं। शनि अपने गोचर में 4 मई, 2000 को पहुँचे मेष के $25^0 42'$ पर। आप जानते हैं कि गोचर दशा के द्वारा तैयार की गई पोटली को जो कुण्डली के कर्मफलों द्वारा बनाई गई है, आकर आप तक पहुँचा भर देने का काम करता है। जातक की दशाएँ उसे एक कटघरे में ले गईं जहाँ उसे तीन बरस की सजा सुनाई गई। याद रहे, मेष जातक का आठवाँ घर है।

जातक जेल जाते-जाते बचा। जातक ने उच्च न्यायालय में अपील की जब शनि वृषभ में गया।

यह जातक का नौवाँ घर है, प्रारब्ध का यहीं से संचालन होता है। फरवरी 2002 में जातक को उच्च न्यायालय ने सम्मान सहित बरी कर दिया। कर्मों की गति न्यारी होती है। शनि चन्द्रमा से तीसरे घर के गोचरवश अच्छे नतीजे ही देता है और वृषभ जातक के चन्द्र से तीसरे घर की राशि है। इस प्रकार, दशा को गोचर का साथ मिलने से जीवन में कितने ही उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। यहाँ गोचर पहले क्रूरता और उद्दंडता का प्रतीक बन कर आया और बाद में शान्त सौम्य रक्षक होकर।

श्री के. एन. राव के संरक्षण में भारतीय विद्या भवन के ज्योतिष संस्थान द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'द जनरल ऑफ एस्ट्रोलॉजी' के अंकों में भी कई सुरुचिपूर्ण शोधपरक आलेख उपलब्ध हैं जिनसे साढ़े साती सम्बन्धी कई भ्रान्तियाँ दूर होती हैं। पाठकों को उनसे भी कई अच्छी जानकारी मिलेगी।

2. साढ़े साती तथा मूर्ति निर्णय

ज्योतिष शास्त्र की एक विशेषता है कि किसी एक समय में ग्रहों में हो रहे परिवर्तनों पर कई प्रकार से समग्र विचार करके विभिन्न रास्तों से एक ही मंजिल पर पहुँचा जा सकता है। मूर्ति निर्णय भी ज्योतिष शास्त्र का एक ऐसा ही औजार है जो दो चन्द्रमाओं के माध्यम से गोचर समझाता है।

विवेचना के लिए हमारे पास दो चन्द्रमा हो गए। एक तो जन्मकालीन चन्द्रमा तथा दूसरा गोचर का चन्द्रमा। मूर्ति निर्णय से तात्पर्य है कि जब कोई ग्रह नई राशि में प्रवेश करता है तो उस समय के गोचर के चन्द्रमा की स्थिति की तुलना सारिणी 5.3 के अनुसार जन्मकालीन चन्द्रमा से की जाती है और उसके आधार पर फलादेश कहे जाते हैं कि जब तक वह ग्रह उस राशि से गुजरता रहेगा तब तक गोचर के सामान्य फल कैसे होंगे। जन्म चन्द्रमा और किसी राशि में किसी भी ग्रह के प्रवेश के समय गोचर के चन्द्रमा के तुलनात्मक अध्ययन के लिए मूर्ति का प्रयोग किया जाता है।

मूर्तियाँ चार प्रकार की कही गई हैं—स्वर्ण, रजत, ताम्र तथा लौह—प्रायः ओलम्पिक के मेडलों की तरह। सबसे बढ़िया स्वर्ण और सबसे घटिया लौह मूर्ति कही गई है।

सारिणी–5.3

मूर्ति	किसी ग्रह के नई राशि में प्रवेश के समय गोचर का चन्द्रमा जन्मकालीन चन्द्रमा से किस भाव में हैं।	फल
स्वर्ण	1 6 11	श्रेष्ठ
रजत	2 5 9	उत्तम
ताम्र	3 7 10	मध्यम
लौह	4 8 12	निकृष्ट

इसको एक उदाहरण से समझें। कुण्डली 5.1 के जातक की कुण्डली में चन्द्रमा मीन राशि में है। शनि 2 जून, 1998 को मीन राशि में सुबह 10:32 पर प्रविष्ट हुआ। उस समय गोचर का चन्द्रमा मिथुन राशि में था। अर्थात् जन्मकालीन चन्द्रमा से गोचर का चन्द्रमा चौथे भाव में आया क्योंकि मीन को एक मान लें तो मिथुन चौथा भाव पड़ेगा। अब ऊपर की सारिणी 5.3 में देखें तो पता चलेगा जन्मकालीन चन्द्र से राशि प्रवेश के समय यदि गोचर का चन्द्र चतुर्थ हो तो मूर्ति निर्णय के अनुसार यह मूर्ति लौह हुई। यह निकृष्टतम या सबसे घटिया मूर्ति है। इसके फल अच्छे होने की सम्भावना नहीं है। अर्थात् मीन में शनि का प्रवेश जातक के लिए साढ़े साती के फलों में शुभता लाने की बजाय कष्टकारी ही होना चाहिए था। ऐसा ही हुआ भी, जातक को इस दौरान कष्ट का अनुभव हुआ। एक बात हमेशा ध्यान देने की है। मूर्ति निर्णय आदि किसी भी पुरातन पुस्तकों में वर्णित नहीं है। फिर भी इनका प्रचार/प्रसार देखते हुए इनकी चर्चा कर दी गई है। इनके फलादेश में भी **'मुंडे मुंडे मति भिन्नाः'** की उक्ति चरितार्थ होती है। फलित ज्योतिष में यूँ भी अलग-अलग लोगों के भिन्न-भिन्न विचार सदा ही रहे हैं तथा मतैक्य की सम्भावना कम ही रही है। हमने यहाँ अपने अनुभवों को बताया है। यह तो हुई मूर्ति निर्णय पर चर्चा परन्तु नक्षत्र गोचर शास्त्रसम्मत हैं। वेदों में नक्षत्रों तथा ग्रहों की चर्चा ही है, राशियों की नहीं। 'महाभारत' में भी नक्षत्रों से ग्रहों के गोचर फल की चर्चा की गई है। नक्षत्रों से शनि के गोचर की चर्चा आगे की जा रही है।

3.0 साढ़े साती तथा नक्षत्र गोचर

जन्मकालीन चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है उसके महत्व से इनकार नहीं किया जा सकता। अधिकांश दशाओं का निर्धारण जन्म-नक्षत्र के चन्द्रमा से ही होता है। शास्त्रों में इसे कहा गया—**'जन्म-नक्षत्र'**। उदाहरण की जन्म कुण्डली 5.2 में चन्द्रमा मीन राशि में 10^0 42′ पर अवस्थित है। अर्थात् उत्तर भाद्रपद जातक का **जन्म-नक्षत्र** हुआ। इसके बाद वाले नक्षत्र को **'सम्पत'** कहते हैं। **'सम्पत'** शब्द का अर्थ है—समृद्धि, धन की वृद्धि, सफलता, प्राचुर्य, बहुलता आदि। जातक के जन्म-नक्षत्र से दूसरा नक्षत्र है—रेवती। अर्थात् जातक के लिए रेवती **'सम्पत'** कहा जाएगा। जन्म नक्षत्र से तीसरे नक्षत्र को शास्त्र में **'विपत्'** कहा गया है। **'विपत्'** शब्द का अर्थ अपने आप में स्पष्ट है—संकट, दुर्भाग्य, अनिष्ट आदि। जातक के लिए अश्विनी विपत् नक्षत्र कहा जाएगा। विपत् के बाद वाला यानी, जन्म-नक्षत्र से चौथा नक्षत्र, **'क्षेम'** के नाम से जाना जाता है। **क्षेम** शब्द का अर्थ है—कुशलता, स्वास्थ्य। जातक के लिए भरणी **'क्षेम'** है।

क्षेम के बाद जो नक्षत्र आए उसे **'प्रतिहारी'** कहते हैं अर्थात् पलट कर प्रहार करने वाला। **प्रतिहारी** के अन्य अर्थ हैं—द्वारपाल, ऐन्द्रजालिक आदि। हम इस जातक के लिए कृतिका नक्षत्र को प्रतिहारी पाते हैं। प्रतिहारी के बाद के नक्षत्र को **'साधक'** कहा जाता है। जातक के लिए रोहिणी नक्षत्र साधक है। **साधक** का अर्थ है पूरा करने वाला, सम्पन्न करने वाला, प्रभावशाली, कुशल, निपुण आदि। **'साधक'** के बाद वाला नक्षत्र **'निधन'** के नाम से जाना जाता है जिसका अर्थ है—गरीब, दरिद्र, ध्वंस, सर्वनाश, मरण, हानि, उपसंहार आदि। जातक के लिए मृगशिरा को **'निधन'** कहा जाएगा। निधन के बाद का नक्षत्र **'मित्र'** कहलाता है जिसका अर्थ प्रायः 'दोस्त' ही होता है परन्तु इसका अर्थ सूर्य भी कहा जाता है। जन्म नक्षत्र से नौवां नक्षत्र **'परम मित्र'** कहा जाता है। जातक के लिए आर्द्रा तथा पुनर्वसु क्रमशः मित्र और परम मित्र नक्षत्र हुए।

दसवाँ नक्षत्र, जो जन्म-नक्षत्र से पहले त्रिकोण में, पड़ता है, **'अनुजन्म नक्षत्र'** कहलाता है। **अनुजन्मन्** का अर्थ है—छोटा भाई। अर्थात् जन्म-नक्षत्र का छोटा भाई है—अनुजन्म नक्षत्र। यहाँ से नक्षत्रों की दूसरी आवृत्ति शुरू होती है जिसे दूसरा **पर्याय** कहते हैं। **पर्याय** का अर्थ है—नियमित क्रम, चक्कर आदि। इसी प्रकार तीसरा पर्याय जन्म नक्षत्र से उन्नीसवें नक्षत्र से प्रारम्भ होता है जिसे **'त्रिजन्म नक्षत्र'** कहते हैं। जैसे जन्म नक्षत्र से सम्पत, विपत् आदि का पहला चक्र परम मित्र में शेष होता है उसी प्रकार **अनुजन्म** तथा **त्रिजन्म** नक्षत्र से प्रारम्भ

होकर दूसरे तथा तीसरे पर्याय भी सम्पत, विपत आदि होते हुए परम मित्र में शेष होते हैं। यहाँ एक बात समझने की है। सम्पत, विपत आदि तीन-तीन नक्षत्र होंगे जो आपस में त्रिकोण में होंगे। जैसे, अश्विनी, मघा तथा मूला विपत होंगे तो रोहिणी, हस्ता, तथा श्रवण साधक। जैसा हम पहले कह चुके हैं, जातक का जन्म नक्षत्र उत्तर भाद्रपद है। आइए, इसे हम सारिणी 5.4 में रखकर नक्षत्रों से शनि का गोचर देखते हैं।

सारिणी-5.4

	साधक	निधन	मित्र	परम मित्र	जन्म	सम्पत	विपत	क्षेम	प्रतिहारी
नक्षत्र	श्रवण	घनिष्ठा	शतभिषा	पू.भा.प.	उ.भा.प.	रेवती	अश्विनी	भरणी	कृतिका
नक्षत्र स्वामी	(चन्द्रमा)	(मंगल)	(राहु)	(गुरु)	(शनि)	(बुध)	(केतु)	(शुक्र)	(सूर्य)

अब यहाँ साढ़े साती समझें। जातक का चन्द्रमा मीन राशि में 10^0 42' पर है–अर्थात् शनि के नक्षत्र में है। अब इससे 45^0 पहले चलें यानी मकर राशि में 25^0 40' पर शनि के आते ही साढ़े साती प्रारम्भ होती है। यह धनिष्ठा नक्षत्र का क्षेत्र है जो जातक के लिए निधन नक्षत्र है–(सारिणी 5.4 देखें।) अब मीन राशि स्थित चन्द्रमा से 45^0 आगे चलें। यहाँ अर्थात् मेष राशि में 25^0 40' पर पहुँच कर साढ़े साती शेष हो जाएगी जहाँ नक्षत्र स्वामी भरणी है अर्थात् धनिष्ठा से भरणी नक्षत्र तक शनि के गुजरने को हम साढ़े साती कहेंगे। शनि जब इन नक्षत्रों से गोचर करेंगे तो क्या फल होंगे, इसे समझने के लिए हमें जातक की कुण्डली में पंचधा मैत्री भी देखनी होगी अर्थात् शनि से इन नक्षत्रों के स्वामियों के सम्बन्ध कैसे हैं? इसके लिए हमें जातक की पूरी कुण्डली देखनी चाहिए।

[**नोट**–पंचधा मैत्री के लिए नैसर्गिक मैत्री चक्र तथा तत्कालीन मैत्री चक्र देखते हैं। शनि के नैसर्गिक मित्र क्रमशः बुध तथा शुक्र एवं नैसर्गिक शत्रु सूर्य, चन्द्रमा तथा मंगल हैं। शनि के लिए गुरु सम है। कुण्डली में शनि से तीन भाव आगे तथा तीन भाव पीछे बैठे ग्रह उसके तत्कालीन मित्र तथा शेष तत्कालीन शत्रु हैं। अर्थात् इस कुण्डली में शनि के लिए सूर्य, बुध, मंगल और राहु तत्कालीन मित्र तथा अन्य तत्कालीन शत्रु हुए।]

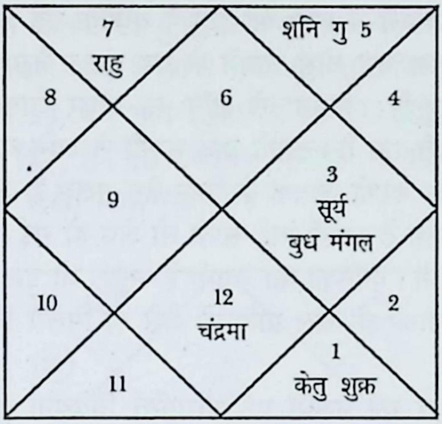

कुण्डली-5.3

कुण्डली 5.3 में शनि के लिए बुध अधिमित्र, शुक्र, मंगल, सूर्य और बुध सम, गुरु शत्रु हैं, तथा चन्द्रमा अधिशत्रु! अर्थात् शनि जव धनिष्ठा से गुजरेंगे तो निधन के फल निधन जैसे ही मिलेंगे क्योंकि धनिष्ठा का स्वामी मंगल शनि के लिए सम है। धनिष्ठा के बाद शनि शतभिषा में जाएँगे जिसका स्वामी राहु है। राहु शनि के लिए यूँ भी मित्र है क्योंकि हम **शनिवत राहु** मानते ही आए हैं और तत्कालीन रूप से भी शनि से तीन भाव आगे होने के कारण राहु शनि का मित्र है। अतः शनि के लिए अच्छे हुए। अब सारिणी 5.4 देखें। शतभिषा जातक के लिए मित्र है। इसलिए शनि का गोचर शतभिषा से प्रभावशाली होगा तथा यह काल साढ़े साती की बुरी छाया से प्रायः मुक्त रहा होगा। आगे परम मित्र नक्षत्र, अर्थात् पूर्व भाद्रपद, से शनि का गोचर कैसा होगा, अब इसे समझते हैं। नक्षत्र का स्वामी है—बृहस्पति जो शनि के लिए नैसर्गिक रूप से सम था, तात्कालिक रूप से वह साथ बैठकर शत्रु हो गया है। अतः यहाँ परम मित्र नक्षत्र पूर्व-भाद्रपद से भी गुजरने पर शनि के फल सर्वश्रेष्ठ नहीं हो पाएँगे क्योंकि वहाँ का स्वामी गुरु इस कुण्डली में शनि का शत्रु है। जन्म नक्षत्र के फल सामान्यतः न तो अच्छे होते हैं न ही बुरे। किन्तु जन्म-नक्षत्र का स्वामी स्वयं शनि है अतः वहाँ से शनि के गोचर के फल ठीक ही मिले। तत्पश्चात् शनि का प्रवेश हुआ रेवती अर्थात् सम्पत में। शनि 2 अप्रैल, 1997 को रेवती में प्रवेश करने के बाद पूरे 1997 वर्ष भर रेवती में ही रहे। रेवती का स्वामी बुध शनि का अधिमित्र है। दशा उचित मिले तो यह गोचर अच्छा रहा होगा। यह सच भी है क्योंकि रेवती से शनि का गोचर जातक के लिए थोड़ी सुविधा लाया, कष्टों में कमी आई। उसके बाद शनि का गोचर हुआ अश्विनी में, जो जातक के लिए विपत हुआ। विपत का स्वामी

है केतु—केतु इस कुण्डली में शनि का शत्रु है क्योंकि वह शनि से तीन भावों से भी आगे है तथा **कुज वत केतु** मानने से वह मंगल जैसा होकर नैसर्गिक रूप से भी शनि का शत्रु है। 'विपत' से शनि का गोचर जातक के लिए निश्चित रूप से बड़ा कष्टकारी रहा है। इसके बाद भरणी से शनि का गोचर भी सामान्य से अच्छा रहा क्योंकि भरणी जातक के लिए क्षेम नक्षत्र है और भरणी का स्वामी शुक्र शनि के लिए सम है। यहाँ साढ़े साती तो शेष हो गई। इसके बाद शनि का गोचर कृतिका में हुआ। कृतिका का स्वामी है—सूर्य, जो इस कुण्डली में शनि का सम है। अतः इस गोचर के फल प्रतिहारी जैसे ही मिलेंगे किन्तु ये फल दशाओं पर निर्भर करेंगे।

यहाँ हमने गोचर की नक्षत्रों पर आधारित विवेचना की है जहाँ गोचर के प्रभाव की गुणात्मक (Qualitative) चर्चा की गई है, अर्थात् नक्षत्रों से गोचर के फल अच्छे, सामान्य या बुरे हो सकते हैं। अब हम आगे यह समझने का प्रयास करेंगे कि आखिर अच्छे फल मिलेंगे तो कितने अच्छे और भगवान न करे, बुरे ही फल मिलने वाले हों, तो कितने बुरे? अर्थात् गुणात्मक जानकारी के अलावा अब हम फलों को संख्यात्मक (Quantatively) रूप से भी समझेंगे। यह हम अष्टक वर्ग के माध्यम से करेंगे।

4.0 साढ़े साती का गोचर और अष्टक वर्ग

गोचर के फलों पर अष्टक वर्ग के कारण बड़ा अन्तर पड़ता है। अष्टक वर्ग पर विशेप चर्चा इसी पुस्तक में आगे अध्याय—7 में की गई है। यदि अष्टक वर्ग के बारे में अधिक जानकारी लेनी है तो अच्छा हो कि पाठक पहले उस अध्याय को पढ़ लें अन्यथा यह विषय उतना रोचक नहीं लगेगा।

मोटे तौर पर गोचर के फलों में अष्टकवर्ग के कारण आने वाले परिवर्तनों की चर्चा पहले सीधे सर्वाष्टक वर्ग से की जा रही है क्योंकि सर्वाष्टक वर्ग में जातक की जन्म कुण्डली के प्रत्येक ग्रह के कारण सभी बारह भावों पर पड़ने वाले असर के बताने वाले शुभ बिन्दु सीधे उपलब्ध होते हैं। 'फल दीपिका' के अष्टक वर्ग अध्याय के श्लोक 20 में मंत्रेश्वर महाराज कहते हैं,

"अष्टाक्षसंख्याधिक विन्दवश्वेत् शुभं तदूने व्यसनं क्रमेपा।।"

अर्थात् जिस किसी भाव में 28 से अधिक बिन्दु हों उससे किसी ग्रह के गोचर करने से वह ग्रह अच्छे फल देता है।

इस सिद्धान्त को जातक की कुण्डली में लगाकर देखते हैं। दी गई कुण्डली 5.4 में जातक के प्रत्येक भाव में प्राप्त सर्वाष्टक शुभ बिन्दु लिखे गए हैं, जैसे लग्न भाव (कन्या) में 23, धन भाव (तुला) में भी 23, तृतीय भाव (वृश्चिक) में 28 आदि-आदि शुभ बिन्दु हैं। इस उदाहरण कुण्डली में ग्रह नहीं दर्शाए गए हैं। मात्र मीन में चन्द्रमा दिखा दिया गया है।

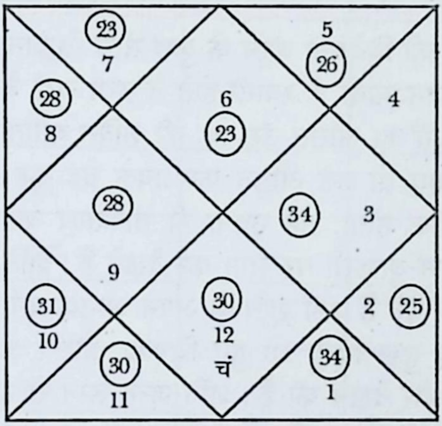

कुण्डली-5.4

साढ़े साती से प्रभावित राशियाँ हैं–कुंभ, मीन तथा मेष। यहाँ कुंभ तथा मीन राशियों में 30-30 बिन्दु हैं तथा मेष में सीधे 34। मंत्रेश्वर महाराज की उक्ति के अनुसार तो इन तीनों भावों से शनि का गोचर जातक के लिए बहुत शुभकारी होना चाहिए किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं हुआ। जातक के जीवन में इस काल में काफी उथल-पुथल मची रही। हाँ, इतना अवश्य हुआ कि जातक बहुत-से विवादों में घिरे रहने के बावजूद किसी मामले में फँसाया नहीं जा सका। थोड़ी और गहराई में जाकर हम अष्टक वर्ग की अन्य विधाओं के माध्यम से गोचर को और करीब से देखकर यह जानने का प्रयास करें कि ये अपेक्षित शुभ फल प्राप्त क्यों नहीं हुए?

आइए, अष्टक वर्ग के दूसरे हिस्से, अर्थात् भिन्नाष्टक वर्ग के सन्दर्भ में इस गोचर को देखते हैं। यहाँ साढ़े साती की चर्चा हो रही है जिसमें शनि और चन्द्रमा का योगदान होता है। इसलिए विशेष रूप से हम शनि तथा चन्द्रमा के भिन्नाष्टकों को सारिणी 5.5 में देखेंगे।

सारिणी-5.5

ग्रह	मेष	वृषभ	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन
चन्द्र	3	3	4	3	2	3 .	2	3	4	5	3	4
शनि	3	2	5	4	6	2	4	4	5	5	4	5

भिन्नाष्टक वर्ग की विवेचना करने के कुछ सीधे सिद्धान्त हैं। पहला सिद्धान्त तो यह है कि ग्रह जिन भावों के स्वामी होते हैं तथा जहाँ बैठे होते हैं, उन भावों के भिन्नाष्टक बिन्दुओं का औसत उस ग्रह की शक्ति बताता है। सामान्यतः यदि यह औसत 4 हो जाए तो उसे औसत फलदायक ग्रह कह सकते हैं। 4 से यह औसत जितना अधिक होगा, ग्रह उतना ही ताकतवर कहा जाएगा। अव इस सिद्धान्त को उदाहरण कुण्डली पर लगा कर देखते हैं। शनि, मकर और कुंभ के स्वामी होकर सिंह में बैठे हैं जहाँ शनि के अपने अष्टक वर्ग में क्रमशः 5, 3 और 2 बिन्दु हैं। अर्थात् कुल बिन्दु 10 हुए जिनका औसत 3.33 है जो 4 से भी कम है। एक वात और देखने की है। शनि जन्म लग्न से द्वादश भाव और चन्द्र लग्न से षष्ठम भाव में सिंह राशि में है जहाँ शनि को अपने प्रस्थारक में मात्र 2 बिन्दु प्राप्त हैं। कहा गया है कि त्रिक (6, 8, 12) भावों में कमजोर ग्रहों के फल अच्छे नहीं मिलते। इसी प्रकार चन्द्रमा कर्क का स्वामी होकर मीन में बैठा है। सारिणी 5.5 में कर्क और मीन में चन्द्र के भिन्नाष्टक वर्ग में क्रमशः 5 और 4 बिन्दु हैं जिनका औसत 4.5 है। यह सामान्य से थोड़ा ही वेहतर है। इस प्रकार हम देखते हैं कि साढ़े साती के दोनों ग्रह कमजोर हैं। शायद यह भी एक कारण हो कि इन ग्रहों की कमजोरी की वजह से बलवान भावों से भी शनि के गुजरने के फल वहुत अच्छे तो क्या, अच्छे भी नहीं मिले।

अष्टक वर्ग के आधार पर फल प्राप्ति का समय भी निकाला जा सकता है। इसके वारे में हम अष्टम वर्ग के तीसरे हिस्से अर्थात् प्रस्थारक अष्टक वर्ग पर विचार करेंगे। दरअसल, हम जन्म चन्द्रमा से एक राशि पहले से लेकर एक राशि वाद तक शनि के गोचर का विचार कर रहे हैं इसलिए हम जातक की जन्म कुण्डली के चन्द्रमा के प्रस्थारक में कुंभ, मीन तथा मेष तक ही अपनी विवेचना सीमित रखेंगे। चन्द्रमा के प्रस्थारक का गोचर फल समझने के लिए आवश्यक अंश को सारिणी 5.6 में दिखाया गया है।

सारिणी-5.6

	↓ कक्ष्या/राशि →	कुंभ	मीन	मेष
शनि	3^0 45′	–	–	–
गुरु	7^0 30′	0	0	–
मंगल	11^0 15′	0	0	0
सूर्य	15^0 00′	–	0	0
शुक्र	18^0 45′	0	–	–
बुध	22^0 30′	–	0	–
चन्द्र	26^0 15′	–	0	0
लग्न	30^0 00′	0	–	–
योग		4	5	3

प्रस्थारक भिन्नाष्टक का ही विस्तृत रूप है। चन्द्रमा के प्रस्थारक में कुंभ में 4, मीन में 5 तथा मेष में 3 बिन्दु हैं। ऊपर की सारिणी 5.6 से स्पष्ट है कि इन राशियों में ये बिन्दु किन ग्रहों ने दिए हैं। उदाहरण के लिए, कुंभ राशि के चार बिन्दु क्रमशः गुरु, मंगल, शुक्र और लग्न ने दिए हैं। उसी प्रकार, मीन राशि के पाँच बिन्दु क्रमशः गुरु, मंगल सूर्य, बुध और चन्द्रमा से प्राप्त हुए हैं।

सारिणी 5.6 से पता चलेगा कि हरेक राशि आठ कक्ष्याओं में बाँटी गई है जिनमें प्रत्येक का विस्तार क्षेत्र 3^0 45′ का होता है। गोचरवश कोई भी ग्रह जब किसी भी राशि में ऐसी कक्ष्या से गुजरता है जहाँ शुभ बिन्दु हो तो उस काल में शुभ फल प्राप्त होने की सम्भावना अधिक होती है। इस सिद्धान्त को हम अब ऊपर दिए गए प्रस्थारक पर लगा कर देखते हैं। शनि जब कुंभ राशि में 3^0 45′ पार करके गुरु की कक्ष्या में आए तो शुभ फल की सम्भावना बनी। कुंभ राशि की पहली कक्ष्या में शुभ बिन्दु नहीं हैं परन्तु दूसरी कक्ष्या, जिसका स्वामी गुरु है, में शुभ बिन्दु है। कुण्डली में गुरु चतुर्थेश तथा सप्तमेश होने के कारण भी

अच्छे फलदायक तो हैं हीं। एक बात देखने की है। हर राशि की आठ कक्ष्याओं से गुज़रने वाले शनि के साढ़े साती के दौरान तीन राशियों से गुजरने के कारण 24 भिन्न प्रकार के फल प्राप्ति की सम्भावनाएँ भी बन जाएंगी। अर्थात् देखना होगा गोचर वाले शनि को अपने गोचर के दौरान शुभ बिन्दु मिलते भी हैं या नहीं और अगर मिल भी रहे हैं तो देने वाला ग्रह किन भावों का स्वामी है तथा पंचधा मैत्री के आधार पर शनि से बिन्दु देने वाले ग्रह के सम्बन्ध कैसे हैं? जैसे कुंभ राशि में गुरु की कक्ष्या में शुभ बिन्दु तो है, पर गुरु इस कुण्डली में शनि का शत्रु हो गया है। अतः यह शुभ बिन्दु भी गोचर में बहुत अच्छा फलदायक नहीं हो सकेगा।

कुल मिलाकर सर्वाष्टक वर्ग जहाँ स्थूल रूप से गोचर के बारे में बताता है, वहीं भिन्नाष्टक तथा प्रस्थारक अष्टक वर्गों के माध्यम से गोचर की सूक्ष्मतर विवेचना की जा सकती है। मतलब यह कि ग्रहों द्वारा फलों की पोटली बनाने का सामर्थ्य भिन्नाष्टक से पता चल जाता है, साथ ही प्रस्थारक के शुभ बिन्दुओं से गोचर देखकर यह मालूम होता है कि सन्देशवाहक कब और कैसी पोटली लेकर उपस्थित होगा?

5.0 गोचर और दशा क्रम

अब तक हमने एक बात महसूस की है कि गोचर चाहे कितना भी तगड़ा क्यों न हो, वह स्वतन्त्र रूप से कोई फल नहीं दे सकता। फल प्राप्ति के लिए शुभ गोचर के अलावा यह भी आवश्यक है कि अच्छे योग भी हों तथा सही दशा भी आ गई हो। अर्थात् दशाओं ने जो पोटली बनाई होगी, वही गोचर लाकर जातक को दे सकता है। अगर उचित दशाएँ हों और साथ में गोचर भी सही मिल जाए तो फल उत्तम ही होंगे, अर्थात् सोने में सुहागा! ऐसी स्थिति में ज्यादा प्रयास करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है और शुभ फल प्राप्त होते रहते हैं। किन्तु अच्छे योग, अच्छी दशा और अच्छे गोचर का समन्वय एक साथ होना कभी-कभी ही होता है। हाँ, एक स्थिति जो हम सबों को प्रायः जीवन में देखने को मिलती रही है, वह है कि दशा तो अच्छी है पर गोचर का सहयोग नहीं मिल रहा। ऐसी अवस्था में फल मिलने में विलम्ब भी हो सकता है और कई बार अपेक्षित फल

प्राप्त ही नहीं हो पाते। अलबत्ता दशा भी बुरी हो जाए तथा गोचर भी फलदायी न रहे तो कष्ट ही कष्ट! गोचर के फल पर दशाओं के फल बहुत असरदायी होते हैं। किन्तु ये पारस्परिक सम्बन्ध एक वृहद् चर्चा का अलग से विषय बन सकते हैं। यहाँ इतना ही समझना काफी होगा कि उचित गोचर के बिना दशाएँ विधवा की माँग की तरह सूनी हैं।

अब चलते-चलते शनि के गोचर के बारे में तीन भ्रान्तियों पर, जो सामान्यतः जातक को भयभीत करती हैं, चर्चा की जा रही है।

पहली बात है **अष्टम शनि**—कृपया सारिणी 3.7 देखें। चन्द्र से गोचर का शनि अष्टम भाव में आ जाए तो कहते हैं कि जातक को कष्ट होता है लेकिन यह हर परिस्थिति में सच नहीं है। सच तो यह है कि यदि चन्द्रमा से अष्टम भाव में सर्वाष्टक वर्ग में 28 से अधिक बिन्दु हों तो शनि का उस भाव से गोचर जातक को कष्ट न देकर आकस्मिक रूप से अच्छे फल दे जाता है। श्री के. एन. राव ने श्री डी. एन. दीक्षित के बारे में अष्टम शनि को लेकर अपनी ऐसी ही भविष्यवाणी से लोगों को आश्चर्यचकित कर दिया था। श्री दीक्षित के नाम पर जब किसी प्रतिष्ठित पद के लिए विचार किया जा रहा था तो उनके जन्म चन्द्रमा से शनि महाराज अष्टम भाव से गोचर कर रहे थे। ज्योतिषियों ने इस काल में उनकी सफलता की सम्भावनाएँ प्रायः शून्य बताई थीं; किन्तु जन्म चन्द्र से अष्टम भाव में श्री दीक्षित को 36 बिन्दु थे। दशा सही थी इसलिए श्री राव की भविष्यवाणी के अनुरूप ही श्री दीक्षित अपने प्रतिस्पर्धियों पर विजय पाकर उस पद के लिए चुने गए।

ऐसी ही भ्रान्ति **कंटक शनि** के बारे में है। कंटक चतुर्थ भाव को कहते हैं; अर्थात् जन्म चन्द्र से चतुर्थ भाव में गोचर का शनि कष्टकारी कहा गया। सारिणी 3.7 देखने से ऐसा ही लगता है लेकिन अष्टम शनि की भांति ही कंटक शनि का प्रभाव सर्वाष्टक वर्ग के शुभ बिन्दुओं की संख्या से प्रभावित होता है। अर्थात् चन्द्र लग्न से चतुर्थ भाव में अगर 28 से अधिक बिन्दु हों तो गोचर बुरे फल नहीं देता।

अन्त में, एक ऐसी ही **भ्रान्ति** पर चर्चा की जाए कि **जन्म कुण्डली** के अष्टम भाव में बैठे चन्द्रमा पर शनि का गोचर अनिष्टकारी होता है। इसके फल भी कंटक शनि या अष्टम शनि की भांति अष्टकवर्ग के बिन्दुओं से प्रभावित होते

हैं। अतः यह आवश्यक है कि गोचर के फल कहने से पहले उन्हें प्रभावित करने वाले सारे पहलुओं पर विस्तार से विचार कर लिया जाए।

गोचर अपना फल कैसे दिखाते हैं तथा साढ़े साती का असर कैसा होता है, इसे हम एक अन्य उदाहरण से भी समझेंगे। इस पुरुष जातक का जन्म 12-2-1976 की सुबह 5:45 बजे केरल में हुआ।

जन्म कुण्डली

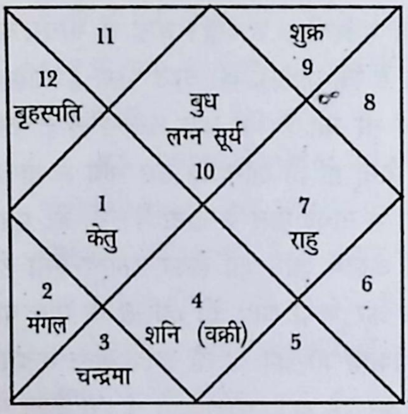

नवांश कुण्डली

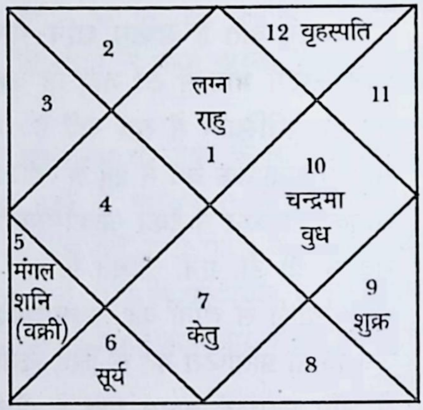

दशमांश

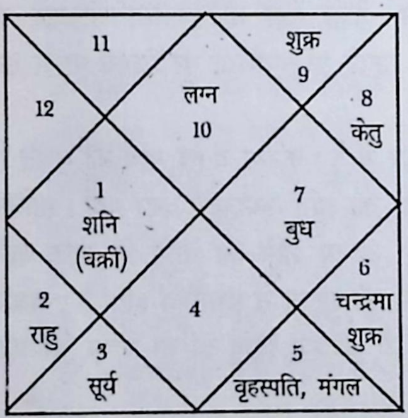

5/6/2008 का गोचर

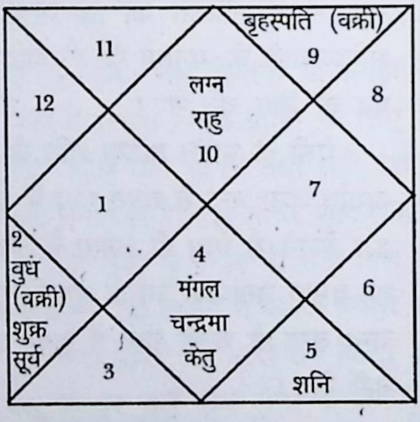

श्री काटवे के सिद्धान्त से इस जातक की साढ़े साती तब मानी जायेगी जब शनि महाराज जन्म कुण्डली के चन्द्रमा से 45 डिग्री पहले रहे होंगे। जातक की

जन्म कुण्डली में चन्द्रमा मिथुन राशि में 10°29′ पर हैं, अर्थात् जब शनि मेष राशि में 25 डिग्री 29 मिनट पर आये तब साढ़े साती प्रारंभ हुई और जब शनि कर्क राशि में 25 डिग्री 29 मिनट से आगे निकल गये तब साढ़े साती समाप्त हुई। ये काल क्रमशः 2 मई 2000 तथा 29 मई 2007 थे। आइये अब उन दिनों में जातक की दशा का क्रम समझते हैं। साढ़े साती जब प्रारंभ हुआ तब जातक की गुरु की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा तथा शनि की प्रत्यन्तर्दशा थी। मकर लग्न के लिये न तो बृहस्पति को शुभ कहा गया है, ना ही चन्द्रमा को। वक्री शनि लग्नेश होकर सप्तम भाव में बैठे हैं। गुरु सप्तम भाव को देखते हैं तथा चन्द्रमा तो सप्तमेश हैं ही। लीजिये, कामदेव का वाण चल गया क्योंकि गोचर की शनि महाराज ने मेष में आते ही लग्न तथा सप्तमेश चन्द्रमा को देखा। ठीक इसके बाद शनि वृषभ में आकर सप्तम भाव को देखते, मिथुन में आकर सप्तमेश चन्द्रमा की सवारी करते और लग्न पर दृष्टि डालते हैं। इस प्रकार साढ़े साती प्रारंभ होते ही जातक ने अपने विवाह की स्वीकृति दी तथा जातक का विवाह सम्पनन हुआ। गोचर के शनि मेष से लग्न, वृषभ से पंचम भाव (सन्तान का भाव) मिथुन से पंचमेश शुक्र तथा सन्तान के स्वाभाविक कारक गुरु के अतिरिक्त चन्द्रमा तथा कर्क में आकर लग्न, लग्नेश एवं सप्तम भाव को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार शनि की साढ़े साती में इस जातक को इहलोक सुधारने के लिये अत्यन्त सुशीला पत्नी और परलोक सुधारने के लिये एक कन्या और एक पुत्र प्राप्त हुए। सुधी पाठक ने अवश्य गौर किया होगा कि इस कुण्डली के लिये शनि स्वयं लग्नेश हैं अतः गोचर और दशा में जातक का भला करने के अतिरिक्त वे कुछ अन्यथ नहीं कर सकते। इसी जातक के जीवन में 5 जून 2008 को नाटकीय मोड़ आया। तब दशा थी शनि में बुध में केतु। केतु मंगल की राशि मेष तथा शुक्र के नक्षत्र भरणी में होने के कारण मंगल तथा शुक्र का मिला-जुला प्रभाव देंगे क्योंकि वैसे भी 'कुजवत केतु' का ही गया है। यह आश्चर्य की बात नही कि मंगल तथा शुक्र दोनों अलग-अलग प्रकार से पंचम भाव को प्रभावित करते हैं। मंगल पंचम भाव में बैठे हैं तथा शुक्र पंचमेश हैं। शुक्र तो दशमेश भी हैं अतः योगकारक हैं।

यह दशा आते ही जातक को एकाएक विदेशी कम्पनी में बहुत अच्छी नौकरी मिल गयी। गोचर के शनि जातक की कुण्डली में अष्टम भाव (दशम से एकादश-लाभ स्थान) में जो आ गये थे तथा वहाँ से दशम भाव को देख रहे थे। शनि नवांश

में दशमेश तथा एकादशेश (कार्य एवं लाभ) हैं तथा दशमांश में पुनः लग्नेश और धनेश। अगर नवांश कुण्डली में गोचर के शनि को बैठाये तो वे सिंह राशि में होने के कारण पंचमस्थ होंगे तथा वहाँ वे नवांश कुण्डली के लग्नेश मंगल एवं दशमेश/एकादशेश शनि पर से गोचर कर रहे होंगे। साथ ही उनकी तीसरी दृष्टि सप्तम भाव (दशम से दशम), एकादश भाव (लाभ स्थान) तथा द्वितीय भाव (धन स्थान) पर होगी।

आइये अब दशमांश पर भी इस शनि महाराज के गोचर का असर देखा जाये। वहाँ शनि अष्टम भाव में बैठकर दशमांश कुण्डली के एकादशेश (मंगल) तथा द्वादशेश गुरु के ऊपर से गोचर करते हुए दशम भाव, धन भाव तथा पंचम भाव को देख रहे हैं। इस प्रकार गोचर के शनि महाराज ने कर्क तक तो विवाह और सन्तान सुख दिये, सिंह में आकर ही नौकरी की सुरक्षा और लाभ के अनेक द्वारा खोल दिये। यह बात भूलने की नहीं है कि यह सब अच्छी दशा एवं उचित गोचर के कारण ही संभव हुआ अन्यथा अकेले गोचर एक सजी-संवरी पोटली जातक को थमा देते जिसमें कुछ भी नहीं होता क्योंकि दशाएँ जो भी फल देती हैं उन्हें ही पोटली बनाकर गोचर ला पाते हैं।

❑

अध्याय-6

भाव सिद्धि काल-फल प्राप्ति के समय की सम्भावना

जीवन में प्रायः देखने में आता है कि दुःख के बोझ से दबा कोई जातक किसी ज्योतिषी के आगे अपनी कुण्डली खोल कर रख देता है और ज्योतिषी जी योगों की विषद् व्याख्या करके यजमान को प्रसन्न कर देते हैं कि आपकी कुण्डली में तो राजयोग और न जाने कितने सुन्दर योग भरे पड़े हैं। अब जातक, जो चातक दृष्टि से ज्योतिषी जी को निहार रहा होता है, गद्गद होकर रुद्ध कण्ठ से पूछता है, लेकिन महाराज, यह सब होगा कब? और होगा भी तो किस मिकदार में, यानी मैं कितना बड़ा राजा बनूँगा? ये प्रश्न बड़े स्वाभाविक हैं कि सफलता मिलेगी तो सही पर कितनी और कब? ऐसे ही प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास इस अध्याय में किया गया है। इसे विस्तार से समझने के लिए हम तीन स्तर पर जाँच करने की त्रिसूत्री वैज्ञानिक पद्धति का व्यवहार करेंगे।

प्रथम सूत्र-कुण्डली कैसी है, अर्थात् इसमें फल देने की सम्भावनाएँ कैसी और कितनी हैं, इसके लिए हम भाव और भावेश की शक्ति की जाँच सिदृयु (PAC) के द्वारा करेंगे। फल मिलने की सम्भावनाएँ योगों पर निर्भर करती हैं। योग भाव तथा भावों के स्वामी की शक्ति पर निर्भर करते हैं। योग बनाने वाले ग्रहों की महादशा, अन्तर्दशा तथा प्रत्यन्तर्दशा में उनके स्वामित्वों वाले भावों के फल मिलते हैं।

दूसरा सूत्र-कुण्डली शक्तिशाली हो तो दशानाथों का सम्यक्, उचित अध्ययन भाव सिद्धिकाल की भविष्यवाणी को काफी हद तक सही बना देता है। दशानाथ ही तो फलों की पोटली बाँध कर गोचर को पकड़ाते हैं। फिर फल प्रदान

करने के लिए सन्देशवाहक गोचर का सही होना आवश्यक होता है, यह हम पहले ही जान चुके हैं।

तीसरा सूत्र—उचित गोचर के बिना भाव सिद्धि में कठिनाई अवश्यंभावी है। भाव सिद्धि के लिए पहली दो शर्तों के पूरी होने के बाद तीसरी शर्त का पूरा होना भी उतना ही आवश्यक है यानी भाव सिद्धि के लिए गोचर अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाते हैं। आइए, इन तीन सूत्रों को विस्तार से समझने की कोशिश की जाए।

पहला सूत्र—कुण्डली में सम्भावनाएँ—कुण्डली में सम्भावनाओं की विवेचना तो अपने आप में ही एक सम्पूर्ण विषय है जिस पर गोचर की पुस्तक में विस्तार से चर्चा सम्भव नहीं। फिर भी, एक शास्त्रसम्मत पद्धति बताई जा रही है जिससे आनन-फानन में भाव तथा भावेश की शक्ति का अनुमान लगाया जा सकता है। यह आकलन जिस हद तक सही होगा, उसी हद तक फल की प्राप्ति का अनुमान भी सही होगा। अर्थात् कुण्डली की उर्वरा शक्ति का सही पता चले तभी तो यह पता चलेगा कि उगने वाली फसल पुष्ट और अधिक मात्रा में होगी भी या नहीं। कुण्डली की शक्ति आँकने के लिए हम लग्न तथा चन्द्र लग्न से कहानी शुरू करते हैं, उसमें भी पहले तो लग्न से ही।

लग्न या अन्य ग्यारह भावों में से किसी भी भाव के दो मूल अंग हुए—एक तो भाव स्वयं तथा दूसरा भावेश। किसी भी कुण्डली के फलदायिनी होने के लिए आवश्यक है कि उसके अधिक से अधिक भाव तथा उन भावों के स्वामी भी शक्तिशाली हों। इस विषय पर अनेकानेक विद्वानों ने अलग-अलग तरीके बताए हैं—एक सीधा तरीका, कम से कम विवेचना शुरू करने के लिए ही सही, आपको हम बताते हैं। पहले *षट्पंचाशिका* के प्रथम अध्याय में श्लोक-3 द्वारा दिया गया एक सूत्र देखिए—

"यो यो भावः स्वामिदृष्टो युतो वा
सौम्यैर्वा स्यात्तस्य तस्यास्ति वृद्धिः।"

अर्थात् यदि किसी भाव को उसका स्वामी देखे अथवा वह अपने भाव में बैठ गया हो तो उस भाव में वृद्धि होती है—समझ लें कि उसका तो कल्याण हो गया। यही नहीं, जिस भाव में शुभ ग्रह बैठे हों अथवा शुभ ग्रहों की दृष्टि पड़ रही हो वह भाव भी बली हो जाता है।

शुभ ग्रह से तात्पर्य उन ग्रहों से है जिन्हें कुण्डली के लग्न के आधार पर शुभ

कहा गया है। (पाठकों से अनुरोध है कि इस विषय पर अधिक जानकारी के लिए बृहत् पराशर होराशास्त्र के योगकारकाध्याय का अध्ययन करें)।

भाव तब भी बली होता है जब वह *शुभकर्तरी* योग में हो अर्थात् भाव के दोनों ओर शुभ ग्रह बैठे हों। इस प्रकार भाव की शक्ति विवेचना के लिए हमें तीन बातें देखनी होंगी–

(i) क्या भाव का भावेश से सम्बन्ध है? यदि हाँ, तो हम भाव को 65% तक शक्तिशाली मान सकते हैं।

(ii) क्या भाव पर किसी शुभ ग्रह का प्रभाव है? यदि हाँ, तो भाव को 15% और शक्तिशाली मान सकते हैं।

(iii) क्या भाव *शुभकर्तरी* योग में है? यदि हाँ, तो इस मद में भाव को 20% और शक्तिशाली कहने में कोई बड़ी भूल नहीं होगी।

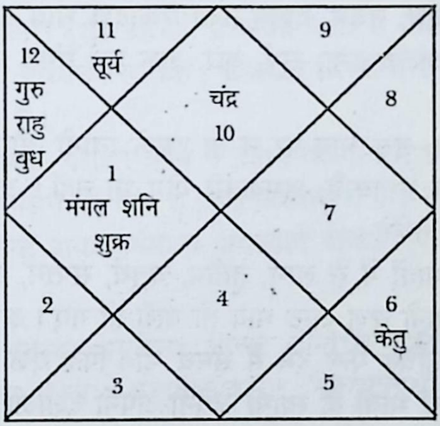

जन्म कुण्डली–6.1

इन सूत्रों को हम उदाहरण कुण्डली 6.1 के द्वारा समझेंगे जहाँ प्रत्येक भाव की चर्चा की गई है।

(i) **लग्न-लग्नेश शनि लग्न को दशम दृष्टि से देखता है**–अतः लग्न बली है।

(ii) **द्वितीय भाव**–द्वितीयेश शनि को द्वितीय भाव से कुछ भी लेना-देना नहीं, न ही कोई शुभ ग्रह इसे प्रभावित करता है। उल्टे अष्टमेश सूर्य, जो स्वयं क्रूर है, यहाँ बैठा है। द्वितीय भाव *शुभकर्तरी* योग में भी नहीं क्योंकि इसके एक ओर सप्तमेश चन्द्रमा (मारकेश) बैठा है और दूसरी ओर बैठे तीन ग्रहों में मात्र बुध को ही ठीक-ठाक कहा जा सकता है

क्योंकि वह नवमेश है परन्तु वह भी नीच का है। गुरु द्वादशेश तथा तृतीयेश होने के कारण शुभ नहीं हैं और राहु तो पाप ग्रह है ही। अतः द्वितीय भाव सुखी नहीं है। अतः इसके फल ठीक मिलने की सम्भावना क्षीण है;

(iii) **तृतीय तथा चतुर्थ भाव**—इन भावों के स्वामी क्रमशः गुरु तथा मंगल अपने-अपने भावों में बैठे हैं। अतः ये दोनों भाव बली हैं। याद रखिए, अभी हम सिर्फ भाव और भावेश में सम्बन्ध देख रहे हैं। अन्य पहलुओं पर बाद में चर्चा होगी।

(iv) **पंचम तथा षष्ठम भाव**—इन भावों पर न तो इनके स्वामियों का और न ही किसी अन्य शुभ ग्रह का प्रभाव है। ये भाव शुभकर्तरी में भी नहीं हैं अतः निर्बल हैं।

(v) **सप्तम, अष्टम, नवम, दशम तथा एकादश भाव** अपने-अपने स्वामियों अर्थात् क्रमशः चन्द्रमा, सूर्य, बुध, शुक्र एवं मंगल से दृष्ट होकर बली हो गए हैं।

(vi) **द्वादश भाव**—इस भाव पर न तो इसके स्वामी और न ही किसी अन्य शुभ ग्रह का प्रभाव है, शुभकर्तरी योग भी नहीं। अतः द्वादश भाव को हम निर्बल कहेंगे।

इस प्रकार 12 भावों में से लग्न, तृतीय, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम और एकादश भाव यानी कुल आठ भाव तो बली हो गए। अर्थात् कुण्डली काफी शक्तिशाली है और उचित फल देने में समर्थ भी। फिर एक बात और समझ में आती है कि इन आठों भावों के स्वामी अपनी-अपनी दशाओं में जहाँ बैठे हैं वहाँ के तथा जिन भावों के स्वामी हैं वहाँ के भी, फल देने में पूर्णतः सक्षम हैं। इस कुण्डली को अवश्य ही शक्तिशाली कहा जा सकता है और जातक को भाग्यशाली। यह बात स्मरण रखने की है कि किसी भी कुण्डली में चार या अधिक भाव बली हों तभी कुछ विशेष फल प्राप्ति की सम्भावना होती है अन्यथा पूरी कुण्डली कमजोर होने से उचित फल प्राप्ति की बहुत अधिक सम्भावना नहीं रहती। यदि कुण्डली में छह या अधिक भाव मजबूत हों तो कहना ही क्या! इसी अध्याय में दी गई श्रीमती इन्दिरा गांधी की कुण्डली संख्या 6.3 देखिए। इस कुण्डली में सिर्फ परिवर्तन योग के कारण छह भाव सबल हो गए थे। अन्य योगों की चर्चा करने से तो उनकी कुण्डली और भी शक्तिशाली लगती है।

भावेश की शक्ति—किसी भी भाव के स्वामी की शक्ति या शुभता कई बातों पर निर्भर करती है जिनमें से कुछ आवश्यक तत्व निम्नांकित हैं—

(i) कोई ग्रह किस भाव का स्वामी है तथा भाव मध्य से वह कितनी दूर है? जो ग्रह जितना भाव मध्य (लग्न की डिग्रियों के पास) में होगा, उतना ही बलशाली होगा। अर्थात् यदि लग्न 19^0 का हो तो कुण्डली में जितने भी ग्रह 19^0 के आस-पास होंगे, सभी में फल देने की शक्ति अधिक होगी, चाहे वह किसी भी राशि में और किसी भी भाव में क्यों न बैठे हों। शुभ भावों के स्वामी हमेशा अच्छे फलदायक होते हैं। जैसा हम पहले कह चुके हैं, लग्नेश हमेशा अच्छे फलदायक होते हैं–उसी क्रम में पंचमेश और नवमेश भी होते हैं जो सदा अच्छे फल देते हैं। ऋषि पराशर के अनुसार, त्रिकोणों में नवम तथा केन्द्रों में दशम भाव सबसे शक्तिशाली होते हैं।

(ii) **अन्य ग्रहों से सम्बन्ध**–प्रत्येक ग्रह दृष्टि तथा युति से (साथ होकर, एक ही भाव में रहकर) दूसरे ग्रह को प्रभावित करते हैं तथा उनके सम्भावित फलों में काफी परिवर्तन लाते हैं। चमत्कार चिन्तामणि में इस पर विस्तृत चर्चा की गई है।

(iii) **ग्रह की अवस्था**–पराशर ऋषि ने ग्रहावस्थाध्याय में ग्रहों के फल उनकी अवस्थावश समझने को कहा है। इस अध्याय में कई अवस्थाओं की चर्चा की गई है किन्तु प्रायः सर्वमान्य अवस्थाएँ दीप्तादि कही गई हैं। पराशर कहते हैं–

"दीप्तः स्वस्थः प्रमुदितः शान्तो दीनोऽथ दुःखितः।
विकलश्च खलः कोऽपीत्यवस्था नवधाऽपराः।।"

इन नौ अवस्थाओं को नीचे सारणी 6.1 में समझाने का प्रयास किया गया है।

सारिणी–6.1

अवस्था	ग्रह कहाँ है	पराशर ऋषि के अनुसार फल
1 दीप्त	अपने उच्च में	राज्य सम्मान, उत्साह, ऐश्वर्य, धन, वाहन की प्राप्ति, स्त्री-पुत्र, परिजनों में आदर
2 स्वस्थ	अपनी राशि में	आरोग्य, राजा से धन लाभ, विद्या, यश, प्रेम, स्त्री, पुत्र धन आदि का लाभ

3 प्रमुदित	अधिमित्र की राशि में	वस्त्र, सुगन्ध, पुत्र, धन, धैर्य, पुराण श्रवण, धर्म, सवारी आदि का लाभ
4 शान्त	मित्र की राशि में	सुख, धर्म, पुत्र, शास्त्र चिन्तन से आनन्द, सवारी, राजादि से सम्मान
5 दीन	सम की राशि में	स्थान हानि, बन्धुओं में विरोध, हीनवृति से जीविका, लोक में अनादर
6 दुःखी	शत्रु की राशि में	अनेक कष्ट, विदेश यात्रा, बन्धुजन वियोग, चोर, अग्नि, राजा से भय
7 विकल	पाप ग्रह के साथ	विकलता, मन में विकार, मित्रादि की मृत्यु, स्त्री, पुत्र, सवारी, चोर से पीड़ा
8 खल	पाप ग्रह की राशि में	कलह, परिजनों (विशेषकर पिता) से वियोग, शत्रुओं द्वारा पीड़ा
9 कोपी	सूर्य से अस्त	पापकर्म में प्रवृत्ति, विद्या, स्त्री, धन, पुत्र और बन्धुओं की हानि।

ज्योतिष शास्त्र की भिन्न-भिन्न प्राचीन पुस्तकों में दीप्तादि अवस्थाएँ अलग-अलग प्रकार से लिखी गई हैं। वे पराशर ऋषि के मत से थोड़े अलग हैं और उनमें भी आपस में समानता नहीं है। इसलिए हम ऐसी नौ अवस्थाओं को नीचे दे रहे हैं जिनमें प्रायः सभी मतों का निचोड़ है–

(i) **दीप्त**

(ii) **स्वस्थ**

(iii) **(प्र) मुदित तथा**

(iv) **शान्त**। इन चारों अवस्थाओं के फल सारिणी 6.1 वाले ही हैं।

(v) **शक्त**–एक मत से वक्री ग्रहों को शक्त कहा गया है वहीं दूसरे मत से ऐसे ग्रह जो अस्तगत थे, अभी-अभी सूर्य के प्रभाव से मुक्त होकर उदित हुए हैं, वे शक्त कहे जाते हैं। *फल–कार्य सिद्धि में समर्थ, सुखी, मान शक्तिशाली।*

(vi) **पीड़ित**–अस्त ग्रहों को पीड़ित कहा गया है जिसके *फल–रोग, कुख्याति, बुरी आदतें, प्रयासों में असफलता आदि हैं।*

(vii) **दीन**—नीच के ग्रह को दीन कहा गया। पराशर ऋषि ने अवस्थाओं में शक्त और दीन के बारे में कुछ नहीं कहा है। इनकी चर्चा उन्होंने अलग से अवश्य की है। दीन के फल—*भयभीत, शक्तिहीन, शत्रुता, विकलता, आदि।*

(viii) **विकल**—पाप ग्रहों के साथ बैठे ग्रह विकल कहे जाते हैं। फल—वही जो ऊपर विकल के लिए सारिणी 6.1 में कहे गए हैं।

(ix) **खल**—ग्रह युद्ध में हारा हुआ ग्रह खल अवस्थाओं में कहा जाता है। फल—*शत्रुता, परिवार में कलह, विदेश यात्रा, धनहीनता और क्रोध।*

वर्गोत्तम ग्रह—वर्गोत्तम उन ग्रहों को कहते हैं जो जन्म कुण्डली तथा नवांश में एक ही राशि में रहते हैं। चर, स्थिर तथा द्विस्वभाव राशियों में बैठे ग्रह क्रमशः प्रथम, पंचम तथा नवम नवांश में हों तो वर्गोत्तम हो जाते हैं। वर्गोत्तम ग्रहों को भी उतना ही शक्तिशाली माना जाता है जितना उन ग्रहों को जिनके सम्बन्ध अपने भावों से होते हैं इसलिए वर्गोत्तम ग्रह की दशा भी शुभ फलदायक होती है।

पुष्कर नवांश के ग्रह—कहा गया है कि जो ग्रह गुरु तथा शुक्र के नवांशों में पड़े, उन्हें पुष्कर जैसा पुण्यप्रदायक या शुभ फल देने वाला मानना चाहिए। मतान्तर से सूर्य, चन्द्रमा, गुरु और शुक्र के नवांश पुष्कर नवांश कहे गए हैं। अर्थात् वृषभ, कर्क, सिंह, तुला, धनु तथा मीन नवांश में जाने वाले ग्रह भी अच्छे फल देंगे।

गोचरस्थ तथा अगोचरस्थ ग्रह—पराशर ऋषि कहते हैं कि वैसे ग्रह जो अपनी उच्च, मूल त्रिकोण या स्वराशि में हों तथा अस्त न हों, साथ ही ये ग्रह यदि 6, 8 या 12 भाव में न बैठे हों तो इन्हें गोचरस्थ कहते हैं। अपनी दशा में गोचरस्थ ग्रह शुभ फलदायी होते हैं। अगोचरस्थ ग्रह वैसे ग्रह हैं जो गोचरस्थ नहीं हैं अर्थात् पहले तो सम, शत्रुक्षेत्री, नीच तथा अस्तगत ग्रहों को अगोचरस्थ कहा जाएगा फिर वैसे ग्रहों को भी अगोचरस्थ ही कहेंगे जो 6, 8 या 12 भाव में बैठे हों। सामान्यतः अगोचरस्थ ग्रह के फल अच्छे नहीं होते। मगर ऐसे अगोचरस्थ ग्रह भी अपनी दशा में तब अच्छे फल दे जाते हैं यदि ये ग्रह विपरीत राजयोग कारक हों—षष्ठेश यदि अष्टम या द्वादश में बैठे हों तो हर्ष योग, अष्टमेश यदि षष्ठम या द्वादश भाव में बैठे हों तो सरल योग तथा द्वादशेश यदि षष्ठम या अष्टम भाव में बैठे हों तो हर्ष योग बनते हैं। ये तीनों विपरीत राजयोग कहे जाते हैं। इस प्रकार जो ग्रह नीच भंग राज योग में हों, उनके फल भी अच्छे होते हैं।

भाव तथा ग्रह के कारकत्व में सम्बन्ध—यदि कोई ग्रह जिन चीजों का कारक है, वह ऐसे भाव से सम्बन्ध बना ले जो भाव भी उसी चीज का कारक हो तो ग्रह भाव को शक्ति देता है। जैसे यदि बृहस्पति द्वितीय भाव या एकादश भाव पर दृष्टि डाले या उनके स्वामियों से युति, स्थान परिवर्तन या दृष्टि का आदान-प्रदान करे तो गुरु अथवा इन भावेशों की दशा में धन प्राप्ति की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं क्योंकि गुरु धन के भी कारक हैं तथा द्वितीय और एकादश भावों के कारकत्वों में धन प्राप्ति भी है। यहाँ एक सिद्धान्त भूलना नहीं चाहिए—**'कारको भाव नाशः'** *अर्थात् किसी भाव का कारक उस भाव में अकेला बैठ जाए तो भाव का नाश करता है। किन्तु कारक के साथ कोई भी अन्य ग्रह बैठे तो भाव के फलों का नाश नहीं होता।*

योग—कुण्डली में उपस्थित योग ही अच्छे फलों की आधारशिला है। अच्छे योगों से अच्छे फल की प्राप्ति होती ही है।

वर्गों में ग्रह की अवस्था—पराशर ऋषि ने वर्गों में ग्रहों की अवस्था पर विशेष बल दिया है। यदि कोई ग्रह वर्गों में भी अच्छा हो तो निश्चय ही अच्छे फल देता है। जन्म लग्न के अतिरिक्त फलदायी ग्रह को नवांश में शक्ति अवश्य चाहिए। विशेष तौर पर दशवर्गों में ग्रहों की पारिजातांश, उत्तमांश आदि-आदि अंशों को विशेष महत्व दिया गया है। ऐसे ग्रहों की दशा आने पर उनके उत्तम फलों के बारे में पराशर ऋषि ने विस्तार से बताया है।

एक बात तो पक्की हो गई कि सबल भाव और भावेशों से ही सही फल निकल सकते हैं—अर्थात् अच्छे फलों के लिए आवश्यक है कि कुण्डली शक्तिशाली हो तथा भाव और भावेश भी मजबूत हों। किन्तु एक स्थिति देखिए, यदि सब कुछ सही होने पर भी उचित आयु में सही दशा न मिले तो लाभ क्या? एक व्यक्ति सत्तर वर्ष की आयु में बली सप्तमेश की दशा पाकर भी शायद ब्याह न कर पाए। कहा भी गया है—'का वर्षा जब कृषि सुखानी!'

दूसरा सूत्र-दशा का महत्व—हम अपनी चर्चा विंशोत्तरी दशा तक ही सीमित रख रहे हैं क्योंकि पराशर ऋषि कहते हैं कि कलियुग में यही दशा फलदायिनी होती है। सुधी पाठक श्री के. एन. राव की पुस्तक *विंशोत्तरी दशा* से भविष्यवाणियाँ पढ़कर लाभान्वित होंगे। दशा क्रम में महादशा नाथ, अन्तर्दशा नाथ तथा प्रत्यन्तर्दशा नाथ तक विचार करना ही काफी होता है। दशानाथ यदि अच्छे भाव का शक्तिशाली स्वामी हो तो वह अपने आप में बड़ी ऊर्जा रखता हैं और उसी के अनुसार जातक के लिए फलों की टोकरी तैयार करता है। दशानाथों के आपसी सम्बन्ध तथा दशानाथों के लग्नेश से सम्बन्ध फलों के लिए काफी महत्वपूर्ण होते

हैं। कहते हैं—लग्नेश, दशमेश तथा उच्च के ग्रहों की दशाएँ सामान्यतः शुभ होती हैं। यदि चल रही दशानाथों के आपसी सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण हों तो पौ बारह समझिए अर्थात् हर्रे लगे न फिटकिरी, रंग चोखो-चोखो होय!

तीसरा सूत्र—गोचर—गोचर के फल देने वाले चार-चार स्रोत होते हैं। ये हैं (i) लग्नेश (ii) उन भावों के स्वामी जिनका फल से सम्बन्ध है (iii) दशाओं के स्वामी तथा (iv) घटना विशेष का कारक जब ये चारों गोचर के फल देने वाले स्रोत गोचरवश अपना प्रभाव कुण्डली पर एक साथ डालते हैं तो फल प्राप्ति की सम्भावनाएँ काफी प्रबल हो जाती हैं।

यहाँ भावों तथा दशाओं के स्वामियों के कारक तथा कारकत्व की चर्चा करना आवश्यक इसलिए है कि उन्हें समझे बिना आगे बढ़ने में कठिनाई का अनुभव होगा। सबसे पहले हम विभिन्न भावों के कारकों की चर्चा करते हैं। पराशर ऋषि *कारकाध्याय* के 34वें श्लोक में कहते हैं—

"सूर्यो गुरुः कुजः सोमो गुरु भौमो सितः शनिः।
गुरुश्चचन्द्रसुतो जीवो मन्दश्चः भाव कारकः।।"

इस श्लोक के अर्थ को नीचे सारिणी 6.2 में लिखा गया है।

जन्म कुण्डली—6.2

भाव	लग्न	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम	षष्ठम	सप्तम	अष्टम	नवम	दशम	एकादश	द्वादश
भावों के कारक	सूर्य	गुरु	मंगल	चन्द्रमा	गुरु	मंगल	शुक्र	शनि	गुरु	बुध	गुरु	शनि

किन्तु मंत्रेश्वर महाराज *फलदीपिका* के भाव चिन्ता अध्याय के 17वें श्लोक में चतुर्थ भाव के लिए चन्द्रमा के अतिरिक्त बुध, छठे भाव के लिए मंगल के अलावा शनि, नवें भाव के लिए गुरु के अतिरिक्त सूंर्य तथा दसवें भाव के लिए बुध के अलावा सूर्य, बृहस्पति और शनि को भी कारक कहते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न भावों के लिए अलग-अलग ग्रह कारक होकर विशेष महत्वपूर्ण बन जाते हैं। उदाहरणस्वरूप, किसी जातक के धन की चर्चा करनी हो तो द्वितीयेश, द्वितीय भाव, द्वितीय भाव को देखने वाले अथवा वहाँ बैठे ग्रह तो महत्वपूर्ण होते ही हैं, बृहस्पति का महत्व अलग से बढ़ जाता है। कहने का मतलब

यह कि यदि द्वितीय भाव एवं द्वितीय भाव का स्वामी बली हो किन्तु बृहस्पति अच्छा न हो तब धन के आगमन में थोड़ी कमी अवश्य होगी।

ग्रहों तथा भावों के कारकत्व पर कालीदास रचित *उत्तर कालामृत* के *कारकखंड* में बड़ी विस्तृत चर्चा है। ये कालीदास कई बार विक्रमादित्य के दरबार के कवि कालिदास मान लिए जाते हैं जिन्होंने कुमार सम्भवम्, अभिज्ञान शाकुंतलम्, रघुवंशम्, मेघदूतम् जैसी कालजयी रचनाएँ की हैं। परन्तु हमारे कालीदास सम्भवतः सोलहवीं शताब्दी के बाद के हैं जिनका जन्म दक्षिण भारत में हुआ था। उत्तर कालामृत में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु तथा केतु के क्रमशः 70, 80, 99, 77, 84, 89, 94, 50 तथा 38 कारकत्व बताए गए हैं जिनमें कुछ अति महत्वपूर्ण कारकों की चर्चा नीचे दी गई सारिणी 6.3 में की गई है।

सारिणी-6.3

ग्रह	कारकत्व
सूर्य–	आत्मा, शक्ति, प्रभाव, धैर्य, अग्नि, उष्णता, राजकृपा, ज्ञानोदय, उत्साह, पिता, हड्डी, शौर्य, आँखें, पित्त, शरीर, मन की शुद्धता, भूमि, आकांक्षा, किला, ताँबा, क्रोध, तीक्ष्णता, भगवान शिव की आराधना, ह्रस्व (छोटे कद का), मस्तिष्क सम्बन्धी विकार, रक्त तथा रक्त वर्ण के कीमती रत्न जैसे, पन्ना, सात्विक प्रवृत्ति आदि।
चन्द्रमा–	मन, हृदय, स्त्री, बुद्धि, पुष्प, सुगन्ध, दुर्ग (किला) में जाना, सुख, माता, ब्राह्मण, आलस्य, कफ की प्रवृत्ति, मिर्गी के दौरे, चाँदी, मोती, नींद, सुख, तरल पदार्थ, तीर्थाटन, कुआँ, तालाब, चेहरे की लुनाई या चमक, नवरत्न, सुन्दर कपड़े, प्रेम, ख्याति, मछली तथा जल से प्राप्त होने वाली अन्य वस्तुएँ, गौरी पूजन आदि।
मंगल–	शौर्य, भूमि, बल, शस्त्र धारण, जनाधीश, प्रशासन, वीर्य क्षय (शक्ति में कमी), चोर, युद्ध, विरोध, क्रोध, जिद, विवाद, अग्नि तथा आग्नेयास्त्र, सेनापति, दुर्वचन, शत्रुजय, दुष्टता, तलवार, बर्छी-भाला जैसे नुकीले अस्त्र, भाई, रक्त, ख्याति, घाव, ताँबा, पित्त की चंचलता, स्वतन्त्रता, साँप, सामवेद, जंगली जानवरों को वश में करना, सुब्रह्मण्यम भगवान की पूजा आदि।

बुध–	विद्या, बुद्धि, गणित, वाक् चातुर्य, ज्योतिषशास्त्र, पैदल सेना, लिपि, नए भवन बनाने वाला (सिविल इंजीनियर), मीमांसा, शिल्प, तीर्थयात्रा, देवालय, वाणिज्य, मृदुवचन, वैराग्य, दुःस्वप्न, काँसा, हँसोड़, विद्वान, पत्रकार, रत्न पारखी, मामा, हरा रंग, मन्त्र, तन्त्र, यन्त्र आदि में प्रवीणता, पुराणादि पर अधिकार, विष्णु के पुजारी।
गुरु–	ब्राह्मण, स्वगुरु (स्वयमाचार्य, जिसे किसी बाहर के गुरु/आचार्य की आवश्यकता न हो, दक्षिण भारत में आयंगर ब्राह्मणों में स्वयमाचार्य मिलते हैं), धार्मिक, मीमांसी, धर्मज्ञ, धन, बड़ा शरीर, प्रतापी तर्कशास्त्री, ज्योतिषी, पुत्र, पौत्र, दान, वेदान्ती, राजकृपा, धर्म, तप, मंत्र, तीर्थाटन, सात्विक, समदृष्टि, लम्बा, वाक् चातुर्य, जितेन्द्रिय, ब्रह्मा की मूर्ति स्थापना करना आदि।
शुक्र–	समृद्धि, आमदनी, ब्याह-शादी, आकर्षण दाम्पत्य सुख, भोग-विलास, ख्याति, राजसिक, यौवन, गौरव, नृत्य, संगीत, नाटक, कवि/कविता, पुष्प, छोटा कद, मोती, यजुर्वेद, वैश्य, सौंदर्य, सम्मान, वाहन, सत्यवादिता, जलक्रीड़ा, गौरी तथा लक्ष्मी पूजन, मूत्र या मूत्र मार्ग आदि।
शनि–	आयु, बीमार, बुढ़ापा, दुःख, चमड़े का काम, अनुशासन, गन्दगी, रोगी मन, क्लेश, विरोध, व्याधि, चण्डाल, विकृत अंग, वनचर, वीभत्स, दानी, नपुंसक, मृत्यु, लोहा, मलिन (गन्दे) वस्त्र, नीचे देखने वाला, कृषि, अपच, तामसिक, तेल, लकड़ी, अपराध, कृष्ण (काला) वर्ण, झूठ, सख्ती, उदार, हड्डियाँ, कठोर हृदय, यम का पुजारी आदि।
राहु–	शौर्य, कुतर्क, क्रूर, छाता, राज्यप्राप्ति, क्रूर वचन, अन्त्यजा (चार वर्णों से अलग जाति में जन्म), हड्डियाँ, जुआ, विदेश, विदेश गमन, गन्दा, झूठ, नीची दृष्टि, यात्रा, बुढ़ापा, माताजी के पिता अर्थात् नाना, वायु या कफ रोग, भ्रमित, ट्यूमर, अल्सर, साँप जैसे रेंगने वाले जीव, वनदुर्गा की उपासना करने वाले, दाएँ से बाएँ (उर्दू जैसी लिपि) लिखने वाले आदि।

केतु–	चंडी, गणेशादि देवी-देवताओं का उपासक, वैद्य (डॉक्टर), मोक्ष, सारे ऐश्वर्य, ज्वर, पीड़ा, घाव, मंत्र, शास्त्र, गंगास्नान, महातप, चपल, नेत्र तथा उदर रोग, ब्रह्म ज्ञान, जानवरों के बारे में ज्ञान, वैराग्य, चेचक या ऐसे रोग, शिवोपासक आदि।

नोट

(i) ये कारकत्व सम्पूर्ण नहीं हैं।

(ii) गोचर के ग्रह जातक की आयु, दशा तथा योग के अनुरूप इनमें से उचित कारकत्व के फल देते हैं, यथा शुक्र का शुभ गोचर युवावस्था में शय्या सुख देगा तो बुढ़ापे में सत्यवादिता आदि की ओर जाने की प्रवृत्ति बढ़ाएगा।

अब हम लग्नादि बारह भावों के कारकत्व का विचार करेंगे।

उत्तर कालामृत में कालिदास नें लग्न से द्वादश भावों तक के लिए क्रमशः 33, 34, 35, 46, 41, 41, 36, 28, 28, 33, 30 तथा 30 कारकत्वों की चर्चा की है। हम नीचे दी गई सारिणी 6.4 में उनमें से कुछ विशेष की चर्चा कर रहे हैं–

सारिणी-6.4

लग्न (तनु) भाव	शरीर, बचपन, व्यक्तित्व, सुख, शक्ति, रूप, कीर्ति, बुढ़ापा, सर, स्वप्न, शान्ति, आत्मसम्मान, आजीविका, तिरस्कार का कारण, वैराग्य की प्रवृत्ति तथा मर्यादा का नाश, दूसरों के लिए जुआ खेलना आदि।
द्वितीय (धन) भाव	धन, वाक् शक्ति, आस्तिकता, अन्य परिजनों का पोषण, परिवार, नाखून, सत्य या असत्य वचन, जिह्वा, आँखें, कपड़े, हीरा तथा अन्य जवाहरात, ताँबा, विद्या, दान करने की प्रवृत्ति, मित्र, कृपणता, सीखने की प्रवृत्ति, संस्कार आदि।
तृतीय (भ्रातृ) भाव	छोटे भाई (छोटी बहन भी), ब्रह्म, धैर्य, युद्ध, कान, पाँव, सड़क, चित्तभ्रम, विक्रम, गला, सामर्थ्य, प्रतिभा, स्वप्न, दुःख देने की शक्ति, सिपाही, मित्र, घुमक्कड़पन, शक्ति, गहने, पैतृक सम्पत्ति का

	बँटवारा, विद्या, छोटी यात्रा, तीर्थाटन, स्वधर्म का पालन तथा रुचियाँ और रुझान।
चतुर्थ (सुख) भाव	सुख, माँ, वाहन, शिक्षा (प्रारंभिक), सुनाम, ख्याति, विश्वास, भूमि, सम्पत्ति, चरित्र, पैतृक सम्पत्ति, बुद्धि, राजकाज, यात्रा, मित्र, कपड़े, दूध, सुगन्ध, दिव्य औषधि, विश्वास, झूठे इल्जाम, मण्डप, विजय, उद्यान या फुलवारी, दुखदायी कार्य आदि।
पंचम (पुत्र) भाव	सन्तान, पिता के पुण्य, राजा, राजा का मंत्री, चरित्र, शिल्प, मन, विद्या, धर्म, गर्भ, विवेक, छाता-छत्र, सुकथा, धार्मिक आख्यान, ऐसे पत्र (भोजपत्र, कागज आदि) जिनमें मंगल कथा लिखी हुई हो, कामना सिद्धि के लिए मंत्र उपासना प्रयोग, पैतृक सम्पदा, दूरदर्शिता, धन, सम्पत्ति, वारांगनाओं (चरित्रहीन स्त्रियों) से सम्बन्ध, गांभीर्य, क्षेम, काव्य रचना तथा परम्परागत मंत्री पद की प्राप्ति आदि।
षष्ठम (रिपु) भाव	कारावास, अपनी बात मनवाने की शक्ति, रोग, विघ्न, वैरी, कृपणता, मामा, युद्ध, कफ, ट्यूमर, मानसिक सन्ताप, चेचक, प्रतियोगिता, कर्ज, शत्रुओं को लाभ, स्वयं की शत्रुओं पर जय, बहुजनों का द्वेष, भिक्षा, दान, मूत्र व्याधि, दास, चोर, विपदा आदि।
सप्तम (कलत्र) भाव	ब्याह, व्यभिचार, मार्गभ्रंश, सुगंध, गीत, सहभागी, व्यापार, दूरस्थान, पुष्प, यात्रा में विघ्न, पान, दही, आभूषण, वस्त्र, वीर्य, मूत्र मार्ग, गुदाद्वार, वाणिज्य, दूध, दान, शौर्य, शत्रुओं पर विजय, धन का स्थानान्तरण, दत्तक पुत्र, चोरी आदि।
अष्टम (आयु) भाव	आयु, सुख, पराजय, किसी की मृत्यु से प्राप्त धन, मृत्यु के कारण चिन्ता, कलह, भाई, स्त्री, पति आदि अथवा शत्रु के कारण चिन्ता, शत्रु का

	किला, क्लेश, राजदंड का भय, गोपनीय बात या बात गुप्त रखने की प्रवृत्ति, मिथ्या भाषण, कूटनीति, पाप, धन का नाश, अज्ञान, अंग का नाश, युद्ध, मानसिक कष्ट आदि।
नवम (धर्म) भाव	धर्म, दान, तीर्थाटन, तप, गुरु, पिता आदि के लिए सम्मान, भक्ति, श्रद्धा, विद्या के लिए श्रम, यात्रा, भाग्य, पिता, प्रताप, सुकथा श्रवण, राज्याभिषेक, पुष्टि, सज्जनों का संग, वैभव, शिव का अभिषेक, पुत्र, पुत्री, अष्ट ऐश्वर्य (अष्टलक्ष्मी) घोड़े, हाथी आदि, मन्दिर, ब्राह्मणत्व, वैदिक पाठ तथा अन्य धार्मिक कृत्य।
दशम (कर्म) भाव	कर्म, वाणिज्य, राजा से मान्यता, अश्वारोहण, दासत्व (नौकरी), कृषि, वैद्यक्रिया, कीर्त्ति, शिक्षा, धर्म, निधि, गढ़े खजाने, श्रेष्ठता, गुरु, यन्त्र मन्त्र, धार्मिक क्रिया-कलाप, तीर्थाटन, स्वाभिमान, विस्तार, पुण्य, दवाइयाँ, दत्तक पुत्र, प्रशिक्षक, गौरव आदि।
एकादश (लाभ) भाव	चारों ओर से लाभ, धन, भाग्य, बड़ा भाई, चाचा, ताऊ, ईश्वर में भक्ति, सात्विक उपासना, विद्या, पैतृक सम्पत्ति, धन आभूषण आदि के लिए लालसा, मंत्रित्व, सिद्धि, माँ की आयु, पाकशास्त्र, सर्प तथा चित्रांकन।
द्वादश (व्यय) भाव	व्यय, मोक्ष, मृत्यु, कारावास, विदेश यात्रा, शय्या सुख, भंग निद्रा, मानसिक चिन्ता, शत्रुओं से भय, बाईं आँख, कर्ज से मुक्ति, हाथी, घोड़े, पैतृक सम्पत्ति, जनता की घृणा, विवाह भंग, विद्वेष, क्रोध, सभी प्रकार के व्यय आदि।

भावों में गोचर के लिए संवेदनशील और महत्वपूर्ण क्षेत्र—अब तक तो हमने कारकत्व की विस्तृत चर्चा कर ली। ग्रहों तथा भावों के कारकत्व भी निश्चित

कर लिए और भावों के लिए विशिष्ट ग्रहों की चर्चा भी कर ली है। गोचर के ग्रह को पूरे भाव में चलना होता है। धीमी गति के ग्रह जैसे शनि जहाँ ढाई साल तक में एक भाव से गुजरते हैं, वहीं चन्द्रमा $2\frac{1}{2}$ दिनों में यह दूरी तय कर लेता है। ये ग्रह फल देने में सबसे ज्यादा कब समर्थ होंगे, यह सोचने की बात है। हमने अध्याय—तीन में *फलदीपिका* में बताई गई बातों का जिक्र किया है, जहाँ कहा गया है कि सूर्य और मंगल गोचर में किसी राशि के पहले 10^0 में फल देंगे। यह एक सामान्य सूत्र है। अब हम किसी भाव के गोचर के ग्रह से सबसे ज्यादा प्रभावित होने वाले क्षेत्र के लिए दो सूत्र बताते हैं।

इसके लिए पहला सूत्र है कि गोचर के ग्रह जब भाव मध्य में आएँगे तब वे फल देने में सबसे ज्यादा समर्थ होंगें। अब भाव मध्य है क्या? भारतीय ज्योतिष के सन्दर्भ में कहा गया है कि लग्न जिस अंश पर होता है उसे तनु भाव मध्य कहते हैं। भारतीय ज्योतिष में यह भी मानते हैं कि प्रत्येक भाव वराबर-वराबर 30 अंशों (डिग्रियों) का होता है, अर्थात् प्रत्येक भाव में वह अंश जो लग्न का है, उस भाव का मध्य कहा जाएगा। उदाहरण देखिए कि किसी कुण्डली का लग्न 25^0 का है, अर्थात् लग्न भाव का मध्य 25^0 पर हुआ। इस प्रकार प्रथम भाव से लेकर बारहवें भाव तक, प्रत्येक भाव का मध्य 25^0 पर होगा। यह बिन्दु ऐसा है जहाँ पहुँच कर गोचर का ग्रह फल देने में सबसे अधिक सक्षम होगा। यह तो हुआ भाव से फल प्राप्त होने का सुयोग। अब एक दूसरा सूत्र वताते हैं। देखिए, जन्म कुण्डली के ग्रहों के अंश गोचर को कैसे प्रभावित करते हैं। जब-जव गोचर के ग्रह उन अंशों पर पहुँचते हैं जहाँ कोई ग्रह बैठा हो और गोचर का ग्रह सिदृयु (PAC) से जन्म कुण्डली के उस ग्रह को प्रभावित करे तो उचित दशा होने पर गोचर के फल मिलने की सम्भावना बढ़ जाती है। इसे उदाहरण से समझें। मान लें, जन्म कुण्डली में गुरु 15^0 पर हैं। गोचर का कोई भी ग्रह 15^0 के आस-पास पहुँच कर जन्म कुण्डली के गुरु को दृष्टि या युति से प्रभावित करने लगे तो गुरु के फल मिलने की सम्भावना बढ़ जाएगी। गोचर का ग्रह 15^0 के जितने करीब होगा, फल उतने ही अधिक मिलने चाहिए। यही बात भाव मध्य के बारे में कही जानी चाहिए। गोचर का ग्रह भाव मध्य के जितना करीब रहेगा, फल मिलने की सम्भावना उतनी ही बढ़ जाएगी, अर्थात् गोचर के ग्रह जब भाव मध्य में पहुँचेंगे तो भाव को झकझोर कर जगा देंगे और वहाँ से फल निकालने की कोशिश करेंगे तथा जब किसी ग्रह की डिग्रियों के पास पहुँचेंगे तो उस ग्रह से सम्बन्धित फलों को दिलवाने में सहायक होंगे, बशर्ते योग और दशा सही हों।

अब इसी विषय में एक मोटा सिद्धान्त समझते हैं। *गोचर के ग्रह और जन्म कुण्डली के ग्रह जब एक ही नवांश में आ जाएँ तो फल प्राप्ति की सम्भावना बलवती हो जाती है।*

आइए, इन तीन सिद्धान्तों को हम एक जानी-पहचानी कुण्डली 6.2 पर लगाकर देखते हैं। यह कुण्डली भारतीय राजनीति के जगमगाते जवाहर पं. जवाहर लाल जी की है।

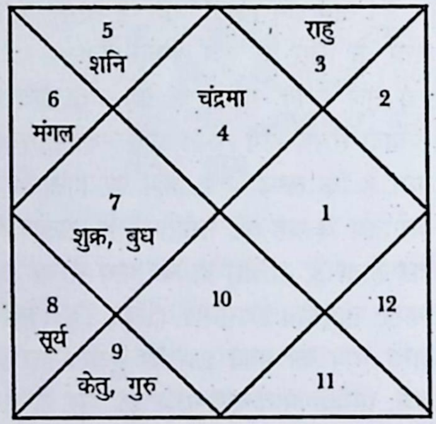

कुण्डली–6.2 जवाहरलाल जी की कुण्डली

पहला सूत्र–बली भाव तथा कुण्डली की शक्ति : पहले हम प्रत्येक भाव तथा भावेश को देखेंगे।

लग्न भाव–लग्नेश चन्द्रमा, लग्न में है तथा लग्न पर कोई दुष्ट प्रभाव भी नहीं है। लग्नेश के लग्न से सीधे सम्बन्ध होने तथा उस पर कोई अशुभ प्रभाव न होने के कारण लग्न बली है। लग्नेश भी स्वगृही होकर किसी भी अशुभ दृष्टि से वंचित है। चन्द्रमा पक्ष बली भी है। इस प्रकार लग्न और लग्नेश–दोनों में काफी बल है। आगे देखते हैं कि इस कुण्डली में और कौन-कौन सी बातें इसे बल प्रदान करती हैं?

चतुर्थ भाव का स्वामी शुक्र चतुर्थ भाव में बैठकर उसे बली बना रहा है। छठे भाव का स्वामी गुरु छठे भाव में बैठकर छठे भाव को शक्ति प्रदान कर रहा है। अब कुण्डली का एक और सशक्त पहलू देखते हैं। दशमेश मंगल तृतीय भाव में बैठकर दशम भाव को देख रहा है। तृतीय का मंगल यूँ भी शक्तिशाली होता है। दशम भाव को बली दशमेश की दृष्टि से शक्ति तो मिल ही रही है, नवमेश गुरु भी दशम भाव पर पंचम दृष्टि प्रदान कर रहे हैं। चतुर्थेश शुक्र भी स्वगृही होकर

दशम भाव को देख रहे हैं—इस प्रकार दशम भाव बहुत शक्तिशाली होकर उभरा है। नवमेश बृहस्पति जहाँ दशम भाव को मजबूत बना रहे हैं, वहीं दशमेश मंगल नवम भाव को सप्तम दृष्टि से देखकर बहुत शक्तिशाली बना रहे हैं अर्थात् नवमेश ने दशम भाव को तथा दशमेश ने नवम भाव को कृतार्थ कर रखा है। यह नवम तथा दशम भावों का परस्पर संयोग बड़ा सुन्दर राजयोग बनाता है। पंचम तथा दशम भावों के स्वामी होने के कारण कर्क लग्न के लिए मंगल यूँ भी योग कारक ग्रह होता है। अतः मंगल महाराज जिन भावों को देखते हैं वे तो शक्तिशाली हो ही गए हैं। इसी प्रकार, नवमेश गुरु का प्रभाव जिन भावों पर पड़ रहा है वे भाव अवश्य शक्तिशाली हो गए हैं क्योंकि त्रिकोण भावों में सबसे शक्तिशाली नवम भाव माना जाता है, अर्थात् नवम और दशम भाव हर प्रकार से बली हो रहे हैं और नवमेश तथा दशमेश तो वली हैं ही।

सूत्र–2 दशा क्रम

शक्तिशाली ग्रहों की दशा आने से जीवन में उथल-पुथल अवश्य आती है। हमारे जीवन में भी सही समय पर उचित आयु में सही दशा आने से श्रेष्ठ फल प्राप्त होते हैं। आइए, पंडित जवाहरलाल जी की कुण्डली पर एक बार फिर से विचार करते हैं। उनका जन्म नक्षत्र है—ज्येष्ठा, जिस कारण जीवन के प्रारम्भ के 15 वर्षों से अधिक तक उन्हें बुध की दशा मिली। 23 वर्ष की आयु तक उन्हें केतु की दशा मिली। तत्पश्चात् अगले 20 वर्षों यानी सन् 1932 तक उन्हें बलशाली शुक्र की दशा मिली। उसके बाद के 6 वर्षों यानी सन् 1938 तक उन्हें सूर्य की महादशा मिली। बाद के दस वर्ष (सन् 1948 तक) सशक्त लग्नेश चन्द्रमा की दशा उनके लिए निश्चित रूप से प्रभावशाली रही और फिर बाद के सात वर्ष योगकारक मंगल, जो दशमेश भी है, की दशा ने उनके जीवन में और उसके माध्यम से भारत के भाग्य परिवर्तन में महत्वपूर्ण योगदान किया।

सूत्र–3 गोचर–

आइए, अब उनके जीवन के कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं पर गोचर के असर की विवेचना करें। ये असर इसलिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि प्रभावशाली ग्रहों की दशा आने पर ही ये असर दिखा सके हैं। सबसे पहले देखते हैं—तारीख 19.11.1917 जब उन्हें जब कन्या रत्न की प्राप्ति हुई। आइए, समझते हैं कि उस दिन

जवाहरलाल जी के जीवन पर ग्रहों का प्रभाव कैसा था और उस समय गोचर क्या थे? संयोगवश, पिता और पुत्री–दोनों की लग्न राशि कर्क ही है। अब कुण्डलियाँ एक साथ देखिए–

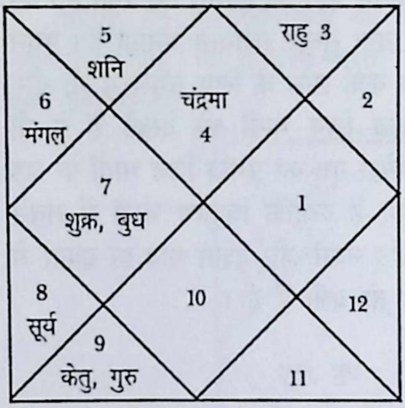

कुण्डली-6.2
जवाहरलाल जी की कुण्डली

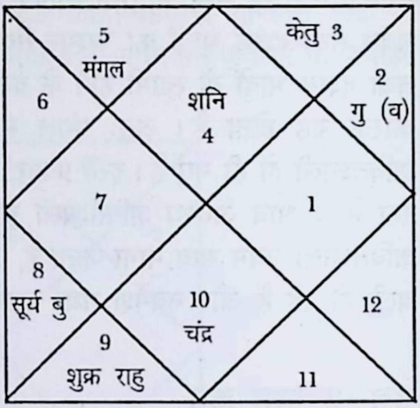

कुण्डली-6.3
(गोचर) पुत्री के जन्मकाल की कुण्डली

बच्चे के जन्म में जातक का योगदान तो सबसे महत्वपूर्ण होता ही है, इसलिए सबसे पहले हम लग्नेश की स्थिति देखते हैं। पंडित नेहरू का लग्नेश चन्द्रमा पुत्री के जन्म के समय मकर राशि में, अर्थात् सप्तम भाव में बैठकर उनकी जन्म कुण्डली के लग्न में बैठे चन्द्रमा (लग्नेश) को देख रहा है। जातक की जन्म कुण्डली का पंचमेश, (पुत्र भाव का स्वामी) मंगल सिंह राशि में गोचर करते हुए पंचम भाव को देख रहा है। सन्तान के स्वाभाविक कारक बृहस्पति हैं। हम उन्हें भी देख लें कि गोचर में वे क्या कर रहे हैं। पुत्री के जन्म के समय गोचर में गुरु वृषभ राशि में थे–यानी गुरु की पंचमेश मंगल पर पाँचवीं और पंचम भाव पर सातवीं दृष्टि थी। इस प्रकार हम देखते हैं कि गोचर के लग्नेश चन्द्रमा जन्म कुण्डली के लग्न भाव तथा लग्नेश को, गोचर के पंचमेश मंगल जन्म कुण्डली के पंचम भाव को तथा सन्तान के स्वाभाविक कारक गुरु पंचमेश तथा पंचम भाव को हर प्रकार से प्रभावित करके सन्तान प्राप्ति में सहायक हो रहे हैं। यह तो गोचर से हमने आपकी पहली मुलाकात करवाई–सजा-धजा हरकारा, सुन्दर सलोना, चुस्त और दुरुस्त! यह हरकारा (ग्रहों को देखिए, चन्द्रमा, गुरु तथा मंगल; जो क्रमशः लग्नेश, भाग्येश और योगकारक होने के साथ-साथ तीनों त्रिकोणों के स्वामी

भी हैं) सही पोटली पकड़ा गया है जो उसे दशा ने दी और योगों ने बनाई थी। आइए, जवाहरलाल जी के जीवन की एक अन्य महत्वपूर्ण घटना, जिसने भारतीय जनजीवन को नई दिशा दी, पर गोचर से विचार करते हैं। वह घटना है– भारत की स्वाधीनता का क्षण, जब जवाहरलाल जी स्वतन्त्र भारत के पहले प्रधानमन्त्री के पद पर सुशोभित होकर इस वसुंधरा की आँखों के लाल वने। तारीख थी–15 अगस्त, 1947 और समय था–मध्य रात्रि। दुनिया जब सो रही थी तब स्वतन्त्र भारत एक अंगड़ाई लेकर जाग रहा था। नीचे उस काल का गोचर कुण्डली 6.4 में दिया जा रहा है। यही स्वतन्त्र भारत की जन्म कुण्डली है–

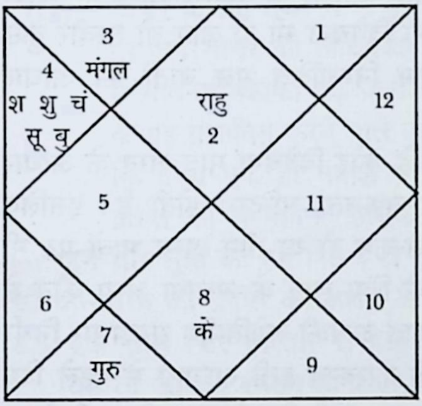

स्वतन्त्र भारत की कुण्डली

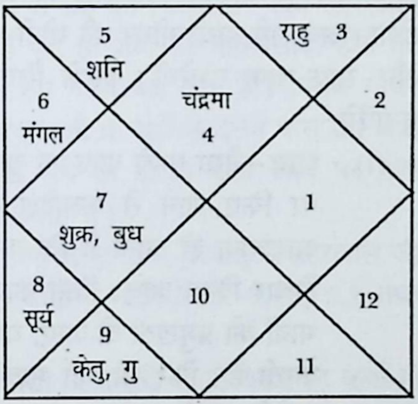

जवाहरलाल जी की कुण्डली

दोनों कुण्डलियों में सभी ग्रह अप्रकाश पक्ष में हैं। साथ ही, राहु-केतु अक्ष से प्रभावित। आप देखेंगे कि उस काल का गोचर बड़ा ही विचित्र था–कर्क राशि में एक साथ शनि, शुक्र, चन्द्र, सूर्य तथा बुध गोचर में थे। कर्क जवाहरलाल जी की लग्न राशि है। जवाहरलाल जी की कुण्डली एक बार फिर से देखिए। उनके लग्न कर्क में लग्नेश चन्द्र बैठा है। अर्थात् पाँच-पाँच ग्रह उनके लग्न तथा लग्न में बैठे लग्नेश को प्रभावित कर रहे थे। प्रभावित करने वाले ग्रहों में उनका लग्नेश चन्द्रमा भी है। जन्म कुण्डली का दशम भाव देखिए; अर्थात् मेष राशि, जो गोचर कुण्डली या स्वतन्त्र भारत की कुण्डली का 12 वाँ भाव है। उस पर गोचर के गुरु की सप्तम तथा गोचर के शनि की दशम दृष्टि है–जन्म कुण्डली में गुरु भाग्येश (नवमेश) तथा शनि सप्तमेश हैं। सप्तम भाव से राज्य प्राप्ति, पद–प्रतिष्ठा तथा जन साधारण से सम्मान भी देखा जाता है। सप्तम भाव, अर्थात् मकर राशि पर

गोचर में कर्क में गए पाँच ग्रहों की पूर्ण सप्तम दृष्टि तो है ही, जन्म कुण्डली के दशमेश मंगल भी गोचर में मिथुन राशि में आकर सप्तम भाव पर अपनी अष्टम दृष्टि डालकर इसे और भी शक्तिशाली बना रहे हैं। राज्य प्राप्ति के लिए इससे अनुकूल गोचर क्या हो सकता है? यह गोचर कितना प्रभावशाली है कि इसके हाथों में ताज की पोटली है जिसमें अपार जनसमर्थन के फूल भी हैं!

हमने अभी गोचर की बड़ी मोटे तौर पर विवेचना की है, जिससे किसी घटना के होने की सम्भावना की पुष्टि हो सकी है। किन्तु यही पूरी विवेचना नहीं कही जा सकती क्योंकि हमने मात्र लग्नेश, एक अन्य भाव तथा नैसर्गिक कारक के गोचर के आधार पर एक घटना को परखा है। इसे हम भाव तथा ग्रहों के कारकत्व के आधार पर की गई पहले स्तर की पड़ताल मान लें, जो बहुत सरल है तो अच्छा होगा। अब लगे हाथों गोचर की थोड़ी गहरी विवेचना भी हो जाए तो तस्वीर कुछ और साफ-साफ उभरेगी। इसके लिए हम निम्नांकित मूल बातों को आधार बनाएँगे–

(i) **भाव**–जैसा पहले कहा जा चुका है, कोई विवेचना मात्र लग्न के आधार पर किए जाने से फलादेश की सफलता सन्दिग्ध होती है। इसलिए आवश्यक हो जाता है कि कम-से-कम दो या तीन अन्य भावों पर भी विचार किया जाए। किस कार्य के लिए लग्न के अलावा अन्य कौन से भावों को प्रमुखता दी जाए, यह बात आपकी ज्योतिषीय समझ पर निर्भर करती है। फिर भी, जो भावों के कारकत्व इसी अध्याय में पहले दिए गए हैं, उनसे एक समझ बनाई जा सकती है। जैसा हमने अभी देखा, दशम भाव के अतिरिक्त सप्तम भाव से भी हमने कार्य क्षेत्र में उन्नति पर विचार किया है। उसी प्रकार शिक्षा या सन्तान के लिए पंचम और नवम भाव महत्वपूर्ण हो जाते हैं। उदाहरणों से यह बात आगे स्पष्ट की गई है।

(ii) **गोचर के ग्रहों के आपसी सम्बन्ध**–जब हमने भावों के बारे में फैसले कर लिए हैं तो अब ग्रहों के सम्बन्धों के बारे में भी चर्चा हो जाए। हम उन ग्रहों के आपस में सम्बन्ध देखेंगे जो गोचर में हैं तथा जो उन भावों के स्वामी हैं जिनके बारे में हम ऊपर (i) पर चर्चा कर चुके हैं। आइए, इन्हें पहचानें। ये ग्रह निम्नांकित हैं–

(क) महादशा, अन्तर्दशा तथा प्रत्यन्तर्दशा नाथ (ख) लग्नेश (ग) सम्बद्ध भावों के स्वामी तथा (घ) किसी कार्य के लिए नैसर्गिक कारक।

ये सभी ग्रह गोचर में कुण्डली को प्रभावित करके उचित फल प्राप्ति में सहायक होते हैं।

(iii) **गोचर के लिए अनिष्टकारी स्थान**—हाँ, एक बात और याद रखनी चाहिए। गोचर के ग्रह जब 22वें द्रेष्काण, 64वें नवांश, 85वें द्वादशांश अथवा किसी भी भाव के 'मृत्युभाग' से गुजर रहे हों तो अनिष्टकारक होते हैं। सभी भावों के मृत्यु भाग इसी अध्याय के अन्त में सारिणी 6.5 में दिए गए हैं जिनका आधार श्री राव का शोध कार्य है। इसलिए गोचर के ग्रहों के अध्ययन के समय इन अनिष्टकारी स्थानों का ध्यान अवश्य रखना चाहिए।

(iv) **गोचर के ग्रह तथा जन्म कुण्डली के ग्रह की निकटता**—दशा सही आने पर जब गोचर की अधिकांश शर्तें पूरी हो जाएँ तो भाव सिद्धि होने की सम्भावनाएँ काफी बढ़ जाती हैं। हम पहले कह चुके हैं कि जब गोचर के ग्रह प्रभावित करने वाले जन्म कुण्डली के ग्रहों के इतने पास आ जाएँ कि दोनों एक ही नवांश में पड़ने लगें तो उचित दशा आने पर फल प्राप्ति की सम्भावना अधिक हो जाती है।

इन चार सूत्रों को हम पिछले ही उदाहरण से समझेंगे, अर्थात् जवाहरलाल जी को कन्यारत्न की प्राप्ति का क्षण। आइए, दोनों कुण्डलियों को अर्थात् 6.2 तथा 6.3 एक साथ फिर विस्तार से देखें।

यह तो आपको स्मरण होगा ही कि पिता और पुत्री—दोनों का लग्न कर्क ही है। पिता की दशा थी—शुक्र में चन्द्रमा अर्थात् शुक्र की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा चल रही थी। इसी अध्याय में हमने जिन मूल वातों को आधार बनाने की चर्चा पहले की थी उन्हीं को हम अब विस्तार से समझेंगे।

सूत्र (i) भाव—सन्तान चिन्ता के बारे में विचार करने के लिए लग्न के अलावा पंचम भाव तो है ही, नवम भाव भी पंचम से पंचम होने के कारण महत्वपूर्ण हो जाता है। सन्तान प्राप्ति की सम्भावना से जुड़े ग्रह जब इन भावों को गोचर में प्रभावित करेंगे तभी सन्तान प्राप्त होगी। अर्थात् लग्न, पंचम तथा नवम भाव और इन भावों के स्वामी सन्तान प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण हो गए।

सूत्र : (ii) गोचर—अब गोचर के ग्रहों को भी देखते हैं। गोचर के ग्रह, अर्थात् इन्दिरा जी की जन्म कुण्डली के ग्रह। देखिए, गोचर में महादशा नाथ, अन्तर्दशा नाथ, लग्नेश, पंचमेश, नवमेश तथा नैसर्गिक पुत्र कारक गुरु सूत्र-1 में बताए गए भावों तथा भावेशों को कैसे प्रभावित करते हैं।

(अ) **महादशा नाथ**–शुक्र महादशा नाथ है। गोचर, यानी इन्दिरा जी की जन्म कुण्डली में, शुक्र धनु राशि में है। जवाहरलाल जी की जन्म कुण्डली का नवमेश बृहस्पति वहीं है। शुक्र इस प्रकार जवाहरलाल जी के नवमेश को प्रभावित कर रहा है।

(आ) **अन्तर्दशानाथ**–अन्तर्दशानाथ चन्द्रमा गोचर यानी इन्दिरा जी की कुण्डली में मकर राशि में है अर्थात् जन्म कुण्डली के लग्नेश तथा लग्न भाव को वह प्रभावित कर रहा है।

(इ) **लग्नेश**–जन्म कुण्डली का लग्नेश चन्द्रमा है। वही अन्तर्दशा नाथ भी है और जैसा पहले कहा गया है, गोचर में मकर में बैठकर चन्द्रमा जन्म कुण्डली के लग्न तथा लग्नेश–दोनों को प्रभावित कर रहा है।

(ई) **पंचमेश**–जन्म कुण्डली का पंचमेश मंगल है। गोचर का मंगल सिंह राशि में बैठा है। वह वहाँ से चतुर्थ दृष्टि से जन्म कुण्डली के पंचम भाव तथा अष्टम दृष्टि से नवम भाव को प्रभावित कर रहा है।

(उ) **नवमेश**–जन्म कुण्डली का नवमेश गुरु है। गोचर में गुरु वक्री होकर वृषभ में है। वक्री होने के कारण मेष राशि से वह पंचम दृष्टि द्वारा जन्म कुण्डली के पंचमेश मंगल को प्रभावित कर रहा है। वृषभ से वह जन्म कुण्डली के पंचम भाव को सप्तम दृष्टि से देखता है। वक्री होने के कारण मेष राशि से वह नवम दृष्टि से जन्म कुण्डली के नवमेश बृहस्पति को भी देख रहा है।

(ऊ) **नैसर्गिक पुत्र कारक बृहस्पति**–हम अभी-अभी बृहस्पति के बारे में विस्तार से चर्चा कर चुके हैं।

सूत्र : (iii) गोचर के लिए अनिष्टकारी स्थान–22वें द्रेष्काण, 64वें नवांश, 85वे द्वादशांश तथा मृत्यु भाग आदि की चर्चा अभी नहीं की जा रही है।

सूत्र : (iv) ग्रहों की निकटता–गोचर में महादशा नाथ शुक्र 9^0 $19'$ पर है तथा वह जन्म कुण्डली के गुरु पर गोचर कर रहा है जो जन्म कुण्डली में 15^0 $10'$ पर है। ये दोनों ग्रह पास-पास हैं। इसी प्रकार नैसर्गिक पुत्र- कारक बृहस्पति गोचर में 14^0 $59'$ का है। वह नवमेश भी है तथा जन्म कुण्डली के पंचमेश मंगल को देखता है जो 9^0 $59'$ पर है। हम देखते हैं कि इन दोनों स्थितियों में गोचर का ग्रह जन्म कुण्डली के ग्रहों के करीब है और इनका अन्तर 6^0 से कम है यद्यपि दोनों एक ही नवमांश में नहीं हैं। अर्थात् भाव सिद्धि के लिए आवश्यक गोचर की शर्तें काफी हद तक पूरी हो रही हैं।

उदाहरण संख्या 2–यह उदाहरण भी सन्तान प्राप्ति से सम्बन्धित है। यहाँ हम जवाहरलाल जी के दूसरे नवासे, अर्थात् संजय गांधी, जो श्रीमती इन्दिरा गांधी के दूसरे पुत्र थे, के जन्म के बारे में विचार करेंगे–

कुण्डली-6.4

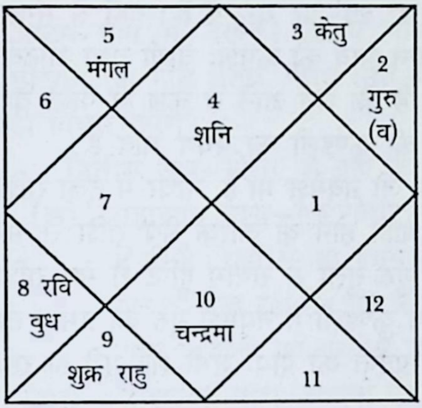

19:11:1917, 11:11PM इलाहाबाद

इन्दिराजी की कुण्डली

कुण्डली-6.5

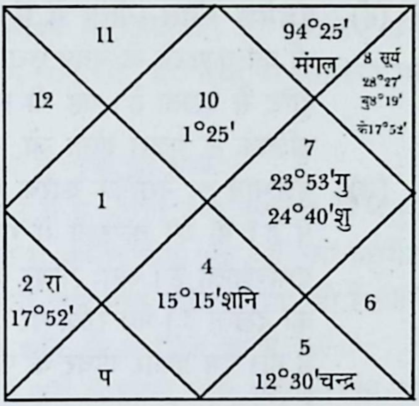

14:12:1946, 9:27AM दिल्ली

संजय गांधी की कुण्डली

दशा–श्रीमती इन्दिरा गांधी को जब दूसरी सन्तान प्राप्त हुई, तब उनकी कुण्डली के अनुसार राहु की महादशा में बुध की अन्तर्दशा चल रही थी।

कुण्डली की विवेचना के आधारसूत्र वही हैं जो पहले थे। इसलिए इस बार विवेचना थोड़ी संक्षिप्त है–

सूत्र : (i) भाव–जैसा हम पहले बता चुके हैं, सन्तान प्राप्ति के लिए प्रथम, पंचम तथा नवम भाव तथा अन्य भावों के स्वामी देखे जाते हैं।

सूत्र : (ii) गोचर के ग्रह

(अ) **महादशा नाथ**–राहु महादशा नाथ है। बच्चे के जन्म के समय राहु वृषभ में 17^0 52' का है तथा माँ की कुण्डली में पंचम भाव को एकादश भाव से देख रहा है। माँ की कुण्डली के एकादश भाव में जन्म कुण्डली का नवमेश गुरु है 14^0 59' पर! अर्थात् दोनों ग्रह एक दूसरे के काफी नजदीक हैं।

(आ) **अन्तर्दशा नाथ**–अन्तर्दशा नाथ बुध गोचर में 8^0 19' पर वृश्चिक राशि में है। अतः वह माँ की जन्म कुण्डली के पंचम भाव से गोचर करते हुए नवमेश गुरु को सीधी दृष्टि से प्रभावित कर रहा है।

(इ) **लग्नेश**—लग्नेश चन्द्रमा गोचर में सिंह राशि में जाकर जन्म कुण्डली के पंचमेश मंगल को प्रभावित कर रहा है। गोचर के चन्द्रमा के अंश हैं—12^0 30′ तथा पंचमेश मंगल के अंश हैं—16^0 21′। ये दोनों भी काफी आस-पास हैं।

(ई) **पंचमेश मंगल**—गोचर में मंगल 4^0 25′ पर धनु में है। वहाँ से मंगल माँ की कुण्डली के नवम तथा लग्न भाव को क्रमशः चौथी तथा आठवीं दृष्टि से देखता है। यह भी सच है कि धनु आने से कुछ ही पहले वह वृश्चिक से गुजरा होगा जो माँ की कुण्डली का पंचम भाव है।

(उ) **पुत्रभाव** का नैसर्गिक कारक गुरु, जो नवमेश भी है, गोचर में तुला राशि में है। माँ की कुण्डली में गुरु वक्री होने के कारक मेष राशि से भी प्रभावशाली है। अतः गोचर का गुरु तुला से सप्तम दृष्टि से मेष राशि को देखता है। मेष राशि पर जन्म कुण्डली में नवमेश गुरु का प्रभाव तो है ही! इस प्रकार गोचर के फल प्राप्ति की प्रायः सभी शर्तें पूरी हो रही हैं।

उदाहरण तीन—शिक्षा में विशिष्टता—स्टॉकहोम विश्वविद्यालय द्वारा 17 जनवरी, 1984 को पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्ति। यहाँ अब हम महादशा, अन्तर्दशा तथा प्रत्यन्तर्दशा तीनों को देखेंगे।

जब जातक को पी-एचडी. की डिग्री मिली तब उसके जीवन में गुरु की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा तथा बुध की प्रत्यन्तर दशा चल रही थी।

कुण्डली-6.6

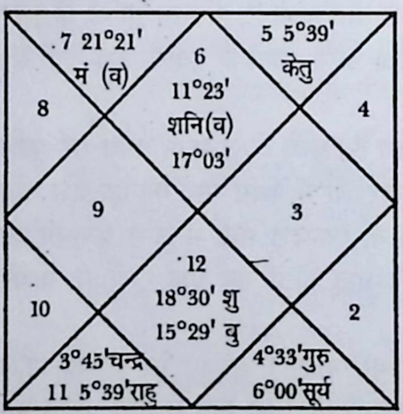

जातक 19.04.52, 11:52 दिल्ली

कुण्डली-6.7

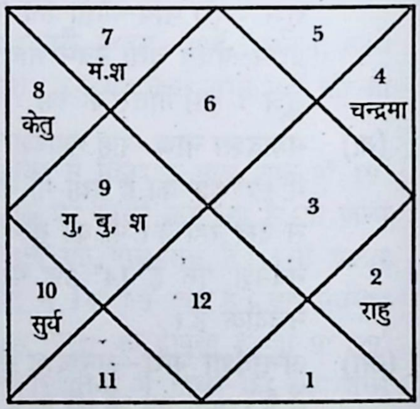

17:01:1984 का गोचर

जब जातक को पी-एचडी. की डिगी मिली तब उसके जीवन में गुरु की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा तथा बुध की प्रत्यन्तर दशा चल रही थी।

प्रथम सूत्र भाव—शिक्षा के लिए सामान्यतः द्वितीय, चतुर्थ तथा पंचम भाव देखने की परम्परा रही है किन्तु यहाँ शोध कार्य का मामला है। इसलिए हम अष्टम भाव भी देखेंगे। द्वितीय भाव बचपन से सम्बन्धित है। इसलिए उसे छोड़कर हम मात्र चतुर्थ, पंचम तथा अष्टम भाव और इन भावों के स्वामियों पर ही विचार करेंगे।

द्वितीय सूत्र—गोचर के ग्रहों के जन्म कुण्डली पर प्रभाव—

(अ) **महादशा नाथ**—गुरु गोचर में धनु में है अर्थात् जन्म कुण्डली के चतुर्थ में ही है। वहाँ से वह पंचम दृष्टि से अष्टम भाव तथा वहाँ बैठे चतुर्थेश गुरु को देख रहा है। गुरु की नवम दृष्टि सिंह राशि पर पड़ रही है जिसे जन्म कुण्डली का पंचमेश वक्री शनि भी प्रभावित करता है।

(आ) **अन्तर्दशा नाथ**—चन्द्रमा गोचर में कर्क में आकर पंचम भाव को देख रहा है।

(इ) **प्रत्यन्तर्दशा नाथ**—बुध, गोचर में, धनु में है अर्थात् चतुर्थ भाव में। बुध के साथ में हैं—नवमेश शुक्र तथा चतुर्थेश एवं सप्तमेश गुरु अर्थात् भाग्येश शुक्र और सामाजिक प्रतिष्ठा का कारक सप्तमेश गुरु एक साथ चतुर्थ भाव (शिक्षा स्थान) को प्रभावित करते हैं अर्थात् शिक्षा से प्रतिष्ठा! प्रत्यन्तर दशा नाथ भी चतुर्थ भाव को गोचर में प्रभावित कर रहा है।

(ई) **लग्नेश**—बुध के बारे में अभी ही चर्चा की जा चुकी है।

(उ) पंचमेश शनि गोचर में तुला में है। अर्थात् जन्म कुण्डली के द्वितीय भाव में और वहाँ से तीसरी दृष्टि से चौथे भाव तथा सप्तम दृष्टि से अष्टम भाव को प्रभावित कर रहा है जहाँ चतुर्थेश गुरु और द्वादशेश सूर्य बैठा है। विदेश में डिग्री मिली इसलिए वहाँ बैठा द्वादशेश सूर्य भी प्रभावित हो रहा है।

(ऊ) अष्टमेश मंगल भी गोचर में तुला में हैं और वहाँ से चौथी दृष्टि से पंचम तथा सप्तम दृष्टि से अष्टम भाव को भी प्रभावित कर रहा है। जैसा पहले कहा गया है, अष्टम भाव में द्वादशेश और चतुर्थेश बैठे हैं। गोचर का मंगल जन्म कुण्डली के मंगल के ऊपर से गोचर कर रहा है।

(ए) पढ़ाई के नैसर्गिक कारक हैं—गुरु तथा बुध। वे गोचर में चतुर्थ भाव को प्रभावित कर ही रहे हैं।

नोट—हम देखते हैं कि सात के सात ग्रह गोचर में या तो चतुर्थ या फिर पंचम भाव को प्रभावित कर रहे हैं।

चतुर्थ भाव में तीन ग्रह गोचर कर रहे हैं तथा शनि की दृष्टि है। पंचम भाव पर चन्द्रमा तथा मंगल की दृष्टि है तथा वहाँ सूर्य बैठे हैं। अगर राहु की भी पंचम और नवम दृष्टि मान लें तो राहु भी नवम दृष्टि से पंचम भाव को देख रहा है। शिक्षा की सर्वोच्च उपाधि के लिए इससे बढ़िया गोचर क्या हो सकता है?

उदाहरण चार—प्रतियोगिता में सफलता—भारतीय विदेश सेवा में चयन (अखिल भारतीय प्रतियोगिता में प्रथम बीस में स्थान) दिनांक 08.07.1994 को हुआ उस समय जातक की दशा थी—बुध में बुध में शनि।

सूत्र एक—भाव—प्रतियोगिता में आशातीत सफलता के कारण नौकरी के लिए लग्न, षष्ठम तथा दशम भाव तो महत्वपूर्ण हैं ही, लेकिन इस परीक्षा के साथ जुड़े गौरव के कारक एकादश भाव (सामाजिक प्रतिष्ठा) भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है। साथ ही, इन भावों के स्वामी भी उतने ही महत्वपूर्ण होते हैं।

कुण्डली—6.8

जातक की जन्म कुण्डली

कुण्डली—6.9

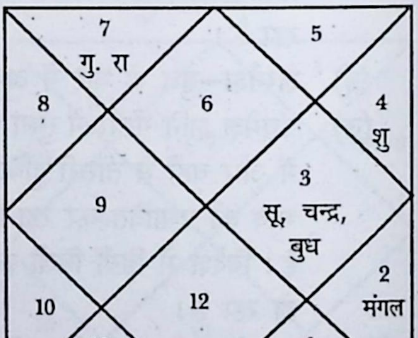

8 : 07 : 1994 का गोचर

सूत्र दो-गोचर के ग्रह

(अ) **महादशानाथ**—बुध जन्म कुण्डली का दशमेश है और दशम भाव में गोचर कर रहा है। मजे की बात है कि महादशा नाथ बुध लग्नेश है और जन्म कुण्डली में उच्च का है अर्थात् लग्नेश, दशमेश और दशम भाव में बहुत सुन्दर सम्बन्ध बन गया है। श्री के. एन. राव कहते हैं कि लग्नेश, दशमेश तथा उच्च के ग्रहों की दशा हमेशा शुभ फलदायक होती है। यहाँ बुध हिन्दी सिनेमा के हीरो की तरह तीन-तीन रोल में एक साथ है, और वह भी पूरे ठाठ से!

(आ) **अन्तर्दशा नाथ**—बुध स्वयं अन्तर्दशा नाथ हैं, अर्थात् पहले कही गई बातों को ही शक्ति प्राप्त हो रही है।

(इ) **प्रत्यन्तर्दशा नाथ**—शनि षष्ठेश होकर छठे भाव से गोचर कर रहा है। वहाँ एकादशेश चन्द्रमा बैठा है अर्थात् शनि छठे भाव और एकादशेश दोनों—को प्रभावित कर रहा है।

(ई) **लग्नेश**—बुध के बारे में हम विस्तार से चर्चा कर चुके हैं।

(उ) **षष्ठेश**—शनि की चर्चा प्रत्यन्तर्दशा नाथ के रूप में हो चुकी है।

(ऊ) **दशमेश**—बुध की चर्चा भी पहले हो चुकी है।

(ओ) **नैसर्गिक कारक**—कूटनीति का नैसर्गिक कारक भी बुध है। गोचर में बुध के साथ दो राजपद प्रदान करने वाले ग्रह चन्द्र और सूर्य हैं—दशम भाव में! दशमेश के साथ एकादशेश चन्द्रमा (सामाजिक प्रतिष्ठा) तथा द्वादशेश सूर्य (राजपद का प्रतीक तथा विदेश सेवा का कारक है) है—अर्थात् दशम भाव में बड़ी हलचल है। तीन-तीन ग्रह वहाँ गोचर में हैं, तथा बृहस्पति और राहु की नवम दृष्टि पड़ रही है। इसी प्रकार छठे भाव पर भी शनि, गुरु तथा राहु का प्रभाव है। कुल मिलाकर दो महत्वपूर्ण भावों पर आठ-आठ ग्रहों के प्रभाव पड़ रहे हैं।

(औ) **गोचर** में नवमेश, अर्थात् भाग्य भाव का स्वामी, शुक्र एकादश भाव में बैठा है—अर्थात् भाग्य और सामाजिक प्रतिष्ठा का सम्बन्ध भी बना है।

इस उदाहरण में भी गोचर की सामान्य शर्तें काफी अच्छी तरह पूरी हो रही हैं।

उदाहरण पाँच—आर्थिक समृद्धि—जातक का जन्म 19 जुलाई, 1949 को शाम 7:11 बजे शिमला में हुआ। जातक को दिनांक 2.11.1994 को भारी मुनाफा हुआ था। तब उसकी दशा—राहु में बुध में चन्द्रमा थी।

कुण्डली–6.10

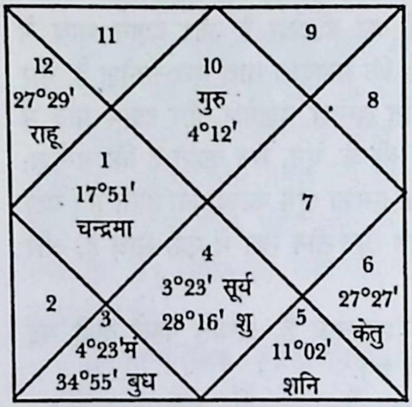

19 : 07 : 1949, 7 : 11 PM

कुण्डली–6.11

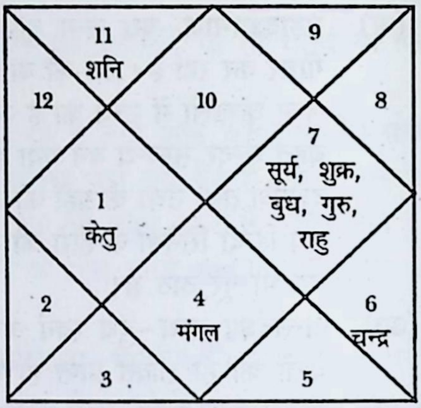

2 : 11 : 1994, का गोचर

सूत्र 1. भाव–जातक का निर्यात (Export) का कारोबार है। व्यवसाय यानी दशम भाव। फिर पैसे भी मिले हैं तो द्वितीय भाव तथा एकादश भाव महत्वपूर्ण हो जाते हैं। सप्तम भाव से साझेदारी का पता चलता है। आर्थिक लाभ हुआ है। कुण्डली में पंचम तथा नवम भाव को लक्ष्मी स्थान कहते हैं। उन्हें भी देखने से कहानी और समझ में आ सकेगी। अर्थात् महत्वपूर्ण भाव हो गए–लग्न, द्वितीय, पंचम, सप्तम, नवम, दशम तथा एकदश। इन भावों के स्वामी भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं।

सूत्र–2 गोचर के ग्रह

(अ) **महादशानाथ** राहु, दशम भाव में, तुला राशि में है। तुला व्यवसाय का प्रतीक है। दशम भाव में राहु के अलावा चार ग्रह और भी हैं तथा दशम भाव पर मंगल की सप्तम भाव से चतुर्थ दृष्टि है, अर्थात् दशम भाव पर सीधे-सीधे छह ग्रहों का सशक्त प्रभाव है।

(आ) **अन्तर्दशा** नाथ बुध जो नवमेश है, दशम भाव में गोचर कर रहा है। बुध भी व्यवसाय का कारक है और नवमेश होकर दशम भाव में जाने से राजयोग बना रहा है, फल स्पष्ट है–भाग्य से व्यवसाय में उन्नति!

(इ) **प्रत्यन्तर** दशानाथ चन्द्रमा, जो सप्तम भाव का स्वामी है, नवम भाव में गोचर कर रहा है अर्थात् नवम् भाव को सप्तमेश शक्ति दे रहा है–साझेदारी के काम में भाग्योदय!

(ई) **लग्नेश** शनि द्वितीय भाव में गोचर कर रहा है तथा जन्म कुण्डली के शनि को देख रहा है। साथ ही, वह एकादश भाव को भी दशम दृष्टि से देख रहा है।

(उ) **द्वितीयेश**—शनि के बारे में चर्चा की जा चुकी है।

(ऊ) **पंचमेश**—शुक्र-गोचर में यह योगकारक ग्रह दशम भाव तथा अपनी ही राशि में नवमेश बुध के साथ बैठकर और भी शक्तिशाली हो गया है।

(ए) **एकादशेश**—मंगल-सप्तम भाव में बैठकर दशम भाव, लग्न तथा द्वितीय भाव को देखकर प्रभावित कर रहा है।

(ऐ) **नैसर्गिक** धन कारक बृहस्पति भी गोचर में दशम भाव में बैठकर दशम तथा द्वितीय भाव को प्रभावित कर रहा है। वह जन्म कुण्डली के सप्तमेश चन्द्रमा एकादशेश मंगल और नवमेश बुध को भी देख रहा है।

(ओ) **नवमेश** बुध की चर्चा हम अन्तर्दशा नाथ के रूप में कर चुके हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस उदाहरण में भी गोचर की शर्तें काफी हद तक पूरी हो रही हैं।

विशेष नोट : मृत्यु भाग—मृत्यु भाग पर कई विरोधाभासी बातें कही गई हैं परन्तु ज्योतिष मर्मज्ञ तथा भारतीय विद्या भवन में ज्योतिष विभाग के आधारस्तंभ श्री के. एन. राव के शोध पर आधारित मृत्यु भाग की सारिणी नीचे दी गई है—

सारिणी—6.5 विभिन्न राशियों में मृत्यु भाग

राशि→ ग्रह ↓	मेष	वृषभ	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन
सूर्य	20	09	12	06	08	24	16	17	22	02	03	23
चन्द्र	26	12	13	25	24	11	26	14	13	25	05	12
मंगल	19	28	25	23	29	28	14	21	02	15	11	06
बुध	15	14	13	12	08	18	20	10	21	22	07	05
गुरु	19	29	12	27	06	04	13	10	17	11	15	28
शुक्र	28	15	11	17	10	13	04	06	27	12	29	19

शनि	10	04	07	09	12	16	03	18	28	14	13	15
राहु	14	13	12	11	24	23	22	21	10	20	18	08
केतु	08	18	20	10	21	22	23	24	11	12	13	14
लग्न	01	09	22	22	25	02	04	23	18	20	24	10
मान्दी	23	24	11	12	13	14	08	18	20	10	21	22

❑

अध्याय–7
अष्टकवर्ग

बृहत् पराशर होराशास्त्र के उत्तर खंडम् की शुरुआत मैत्रेय और पराशर की अष्टक वर्ग के बारे में एक बातचीत से शुरू होती है। मैत्रेय कहते हैं–

"भगवान्! भवताऽऽख्यातं ग्रहभावादिज फलम्।
बहू नामृषिवर्याणामा चार्याणां च सम्मतम्।।
संकरात तत्फलानां च ग्रहाणां गति संकरात्।
इत्थमेवेति नो सर्वे ज्ञात्वा वक्तुमलं नराः।।

अर्थात्, हे भगवान्! आपने ग्रह भाव सम्बन्धी वैसे फल बताए हैं जो बहुत से आचार्यों तथा ऋषियों के सम्मत थे। ये सारे फल मिश्रित हैं क्योंकि ये कई सिद्धान्तों पर आधारित हैं। उस पर ग्रहों की मिश्रित गति के कारण 'यही फल सही है' ऐसा कोई मनुष्य अधिकारपूर्वक नहीं कह सकता है।

आगे मैत्रेय कहते हैं कि कलियुग में पापकर्म में रत रहने से लोग मन्दबुद्धि के हो गए हैं। इसलिए कोई ऐसी विधि बताइए जो अल्पबुद्धि के लोगों की समझ में भी आ जाए और जिसके आधार पर तात्कालिक ग्रह स्थिति से मनुष्यों के सुख-दुःख और आयु का निर्णय ठीक-ठीक किया जा सके।

इसके उत्तर में ऋषि पराशर कहते हैं कि हे ब्राह्मण, आपने बहुत अच्छा प्रश्न किया है–मैं जनों के उपकार के लिए एक शास्त्र कहता हूँ जिससे सुख-दुःख, आयु आदि के निर्णय में पुराने फलों का विरोध नहीं होता। पराशर अष्टकवर्ग को विशेष शास्त्र बताते हुए कहते हैं–

"यथा लग्नाच्च चन्द्राच्च ग्रहाणां भावजं फलम्।
तथाऽन्येभ्योऽपि खेटेभ्यो विचिन्त्यथं दैवविद्वरः।।
अतो ख्यादि खेटानां सलग्नानां पृथक्-पृथक्।
अष्टानां सर्वभावोत्थं यथोक्तमशुभं शुभम्।।

अर्थात् जिस प्रकार लग्न और चन्द्रमा से ग्रहों के द्वादश भाव तथा शुभ और अशुभ फल कहे गए हैं, उसी प्रकार अन्य ग्रहों से भी भावों के शुभ-अशुभ फल होते हैं। इसलिए रवि आदि सात ग्रह तथा लग्न, इन आठ स्थानों से सभी भावों के शुभ अथवा अशुभ फल कहने चाहिए। अर्थात् लग्न के अतिरिक्त सात ग्रहों के आपसी असर को पूरी तरह समझ कर फल कह सकने का गणितीय तिलस्मी सूत्र ह—अष्टक वर्ग!

'अष्टक' अर्थात् आठ की संख्या यूँ आई कि सात तो ग्रह हुए और लग्न को भी अन्य ग्रहों के बराबर ही प्रभावशाली माना गया है, अर्थात् कुल प्रभावी कारक हुए—आठ। ये आठ के आठ प्रभावी स्रोत बारह भावों पर अपना असर डालते हैं। अब प्रश्न उठता है कि जब हमने लग्न को प्रभाव का स्रोत मान ही लिया था तो लग्न भाव को प्रभाव क्षेत्र भी क्यों मानना चाहिए? अर्थात् हमें क्या ग्यारह भावों पर ही ग्रहों और लग्न का असर मानना चाहिए? इसको अब ऐसे समझें कि लग्न, जो जातक को विशिष्टता प्रदान करता है, एक अतिरिक्त और विशिष्ट प्रभाव का स्रोत तो है ही, साथ ही जिसे हमें लग्न भाव कहते हैं वह दरअसल 'प्रथम भाव' है। अर्थात् लग्न एक ओर जातक की विशिष्टता का प्रतीक है, वहीं वह उसके लिए प्रथम भाव भी है। लग्न त्रिकोणों में भी एक है और केन्द्रों में भी एक इसलिए उसे दो प्रकार से शक्तिशाली माना गया। मान लीजिए, एक कमरा हो जिसमें बारह फलक (दीवारें) हों और प्रत्येक दीवार पर एक शीशा जड़ा हो। इस कमरे में प्रकाश के आठ स्रोत हों तो कुल मिलाकर 12×8=96 अक्स (परछाई) दिखेंगे जिनमें कुछ तो चमकदार होंगे और कुछ धुँधले-से। साथ ही, कुछ खराब भी दिखेंगे। ये 96 अक्स प्रत्येक प्रकाश स्रोत से दिखेंगे। अब जो स्रोत जितना अच्छा होगा उसके अक्स उतने ही ज्यादा चमकदार होंगे। उदाहरण के लिए, बृहस्पति के 96 अक्सों में 56 शुभ कहे गए और मात्र 40 अशुभ। विपरीततः शनि के 96 अक्सों में मात्र 39 शुभ हैं और शेष 57 अशुभ। सुधी पाठकों को यह समझने में जरा भी परेशानी नहीं होनी चाहिए कि बृहस्पति को सबसे शुभ तथा शनि महाराज को महा अशुभ ग्रह के ताज क्यों पहनाए गए हैं? इन अक्सों को हम बिन्दु कहेंगे—सुन्दर अक्स-शुभ बिन्दु! इसी प्रकार सूर्य को 48 शुभ बिन्दु, चन्द्रमा

को 49, मंगल को 39, बुध को 54 तथा शुक्र को 52 शुभ बिन्दु प्राप्त हैं। गुरु तथा शनि की चर्चा हम पहले कर चुके हैं। पराशर ऋषि ने पहले ही बता दिया है कि प्रत्येक ग्रह जहाँ है—वहाँ से कौन-कौन से भावों को वह शुभता प्रदान करता है। साथ ही, यह भी पराशर ऋषि ने स्पष्ट किया है कि वही ग्रह अन्य ग्रहों तथा लग्न से किन-किन भावों को शुभ रूप से प्रभावित करता है। इसे एक सारिणी के रूप में पराशर ऋषि ने बताया है जिसे हम उस ग्रह का 'प्रस्थारक' कहते हैं। पहले हम प्रस्थारक सारिणी (7.1) देखते हैं।

प्रस्थारक सारिणी–7.1

ग्रह/राशि	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि $3^0 45'$												
गुरु $7^0 30'$												
मंगल $11^0 15'$												
सूर्य $15^0 00'$												
शुक्र $18^0 45'$												
बुध $22^0 30'$												
चन्द्र $26^0 15'$												
लग्न $30^0 00'$												

जैसा कि आप देखते हैं, प्रस्थारक में नौ आड़े तथा तेरह सीधे खाने बने हैं। नौ आड़े खानों में सबसे पहले खाना वह है, जो इस सारिणी 7.1 में सबसे ऊपर और सबसे बाईं ओर है। इसमें लिखा है—ग्रह/राशि। यहाँ से दाहिने चलें तो 12 खानों में 1 से 12 लिखा मिलता है—ये सभी राशियों की संख्या है—अर्थात् 1 से मेष, 2 से वृषभ तथा 12 से मीन आदि जानना चाहिए। फिर वापस पहले खाने से अब नीचे की ओर चलते हैं। इसे गौर से देखेंगे तो पता चलेगा कि नीचे तक आठ बराबर के खानों में सातों ग्रहों के नाम के बाद लग्न लिखा हुआ है। प्रत्येक ग्रह के आगे जो डिग्रियाँ लिखी हैं वे उस ग्रह का आधिपत्य क्षेत्र बताती हैं। ये

आठों खाने बराबर-बराबर ($3^0 45'$) हैं जिन्हें हम 'कक्ष्या' कहते हैं। सबसे पहले लिखा है—शनि। अर्थात् प्रत्येक राशि (बारहों राशि) की पहली कक्ष्या (अर्थात् पहले 3^0 45′ तक) का स्वामी शनि है। इसी प्रकार प्रत्येक राशि की दूसरी कक्ष्या, अर्थात् $3^0$45′ से $7^0$30′ तक, का स्वामी बृहस्पति है। आख़िरी 3^0 45′ अर्थात् 26^0 15′ से 30^0 तक की कक्ष्या का स्वामी लग्न है। आप देखेंगे कि कक्ष्याओं का स्वामित्व ग्रहों की गति के विपरीत क्रम में है अर्थात् सबसे धीमे चलने वाला ग्रह शनि सबसे पहली कक्ष्या का स्वामी है। उसके बाद की कक्ष्या का स्वामी गुरु है जो शनि से तो तेज चलता है पर अन्य सभी ग्रहों से धीमे। हम देखते हैं कि ग्रहों में आखिरी नाम चन्द्रमा का है जो ग्रहों में सबसे तेज चलता है और उसके बाद अन्तिम कक्ष्या का स्वामित्व प्राप्त है लग्न को, जो प्रायः दो घंटे में राशि बदल लेता है और सभी ग्रहों से भी तेज चलता है।

जैसा हम पहले कह आए हैं, सूर्य से लेकर शनि तक को क्रमशः 48, 49, 39, 54, 56, 52 तथा 39 शुभ बिन्दु प्राप्त हैं। इन्हें ये बिन्दु कहाँ से मिले हैं, इस पर पराशर ऋषि ने चर्चा की है। पराशर के सिद्धान्त से कुछ मतान्तर भी

सारिणी–7.2 (सूर्य को मिले शुभ बिन्दु)

शुभ बिन्दु देने वाले स्रोत	कुल शुभ बिन्दु	जिस भाव में सूर्य बैठा है वहाँ किन भावों में शुभ बिन्दु दिए गए हैं
शनि	8	1, 2, 4, 7, 8, 9, 10, 11
गुरु	4	5, 6, 9, 11
मंगल	8	1, 2, 4, 7, 8, 9, 10, 11
सूर्य	8	1, 2, 4, 7, 8, 9, 10, 11
शुक्र	3	6, 7, 12
बुध	7	3, 5, 6, 9, 10, 11, 12
चन्द्रमा	4	3, 6, 10, 11
लग्न	6	3, 4, 10, 11, 12
कुल	48	

मिलते हैं लेकिन नीचे हम प्रायः सर्वमान्य सिद्धान्त की चर्चा कर रहे हैं। आइए, पहले सूर्य का प्रस्थारक बनाने के लिए देखते हैं कि सूर्य को 48 बिन्दु कौन से ग्रहों ने दिए हैं। इसे हम एक सरिणी (7.2) द्वारा समझेंगे।

सारिणी संख्या 7.2 से स्पष्ट होगा कि सूर्य को प्राप्त 48 बिन्दुओं में क्रमशः सूर्य, मंगल और शनि ने आठ-आठ बिन्दु दिए हैं वहीं बुध ने सात, लग्न ने छह, चन्द्र और गुरु ने चार-चार तथा शुक्र ने तीन शुभ बिन्दु दिए हैं। यह भी पता चलता है कि सूर्य जिस राशि में बैठा है वहाँ से क्रमशः 1, 2, 4, 7, 8, 9, 10 तथा 11वीं राशियों को वह शुभ बिन्दु दे रहा है। इसी प्रकार लग्न जिस राशि में है वहाँ से 3, 4, 6, 10, 11 तथा 12 वीं राशियों में लग्न के कारण शुभ बिन्दु हैं।

पहले जैसा कहा जा चुका है, उससे स्पष्ट होगा कि किसी कुण्डली के लिए सात ही प्रस्थारक बनेंगे—लग्न के लिए नहीं, सिर्फ सात ग्रहों के लिए। इसे और ठीक से समझने के लिए हम एक उदाहरण कुण्डली सं 7.1 लेकर सबसे पहले सूर्य का प्रस्थारक बनाएँगे। प्रस्थारक बनाने की क्रमवार विधि नीचे बताई जाती है।

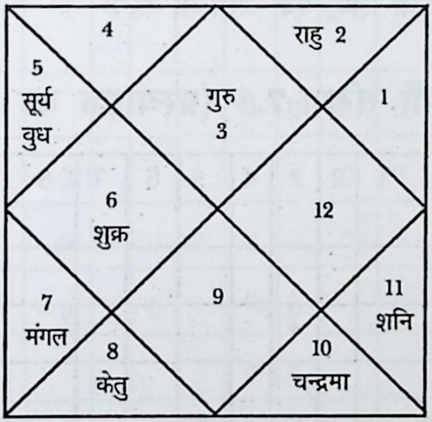

उदाहरण कुण्डली संख्या-7.1

(i) सबसे पहले हम प्रस्थारक का खाका खीचेंगे जैसा पिछले पृष्ठों पर सारिणी 7.1 में बताया गया है।

(ii) प्रत्येक ग्रह को अब उसकी कक्ष्या में स्थापित करेंगे जैसे आजकल के वैज्ञानिक उपग्रहों को अन्तरिक्ष में स्थापित करते हैं। आइए, सबसे पहले शनि महाराज को उसकी उचित जगह पर बैठाएँ। शानि है कुंभ राशि

में, चाहें तो सबसे पहली पंक्ति में, जहाँ 11 (कुंभ) लिखा है उसके नीचे, उसी खाने में, शनि भी लिख सकते हैं। इससे भ्रम होने की कोई भी सम्भावना नहीं रह जाती। लेकिन आवश्यक है कि कुंभ राशि में शनि की कक्ष्या में एक तारा चिह्नांकित कर दिया जाए। इसे हमने अगली सारिणी 7.3 में दिखाया है। गुरु मिथुन राशि में है। इसलिए मिथुन राशि की दूसरी कक्ष्या में, जिसका स्वामी गुरु है, एक तारा चिह्नांकित कर देते हैं। मंगल तुला में है। तुला राशि में हम नीचे की ओर चलते हैं और तीसरी कक्ष्या में एक तारा लगा देते हैं। यह इस बात का प्रतीक है कि मंगल तुला राशि में है। बुध और सूर्य–दोनों ही सिंह राशि में हैं। सिंह राशि में हम नीचे की ओर चलते हैं। चौथी कक्ष्या में एक तारा अंकित करके हम सूर्य की स्थिति तय करते हैं और नीचे चलने पर छठी कक्ष्या में एक और तारा अंकित करने से हम बुध की स्थिति जान लेते हैं। इसी प्रकार शुक्र, चन्द्रमा तथा लग्न को अपनी-अपनी कक्ष्याओं में स्थापित करने के बाद प्रस्थारक कैसा लगेगा, यह नीचे सारिणी, (7.3) में दिखाया गया है। यही प्रस्थारक का मूल ढाँचा उदाहरण कुण्डली के सभी ग्रहों के लिए, एक जैसा ही रहेगा।

सारिणी संख्या-7.3 (प्रस्थारक का खाका)

↓ग्रह (कक्ष्या स्वामी)/राशि→	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि $3^{0}45'$											*	
गुरु $7^{0}30'$			*									
मंगल $11^{0}15'$							*					
सूर्य $15^{0}00'$					*							
शुक्र $18^{0}45'$						*						
बुध $22^{0}30'$					*							
चन्द्र $26^{0}15'$										*		
लग्न $30^{0}30'$			*									

(3) अब हम शुभ बिन्दुओं को इस प्रस्थारक में बैठाएँगे। आइए, हम सूर्य के प्रस्थारक में शनि से प्राप्त शुभ बिन्दुओं के स्थानों को सारिणी–7.2 में देखें। शनि से प्राप्त शुभ बिन्दु आठ हैं तथा वे शनि से क्रमशः प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम तथा एकादश भावों में मिले हैं। शनि कुंभ में है अर्थात् पहला शुभ बिन्दु इस प्रस्थारक में कुंभ में शनि की कक्ष्या में लगाएँगे। इसी प्रकार दूसरा शुभ बिन्दु मीन में, तीसरा शुभ बिन्दु वृषभ में (क्योंकि वह कुंभ से चौथी राशि है और तीसरा शुभ बिन्दु शनि से चौथे स्थान में पड़ता था), चौथा बिन्दु सिंह में पड़ेगा क्योंकि वह कुंभ से सप्तम राशि है। इसी प्रकार शुभ बिन्दु कन्या, तुला, वृश्चिक तथा धनु में डालेंगे क्योंकि ये राशियाँ कुंभ से क्रमशः अष्टम, नवम, दशम तथा एकादश राशियाँ हैं।

(4) इसी प्रकर सारिणी–7.2 से देखकर हम प्रत्येक ग्रह तथा लग्न की कक्ष्या में तारांकित स्थान को लग्न मान कर शुभ बिन्दु वैसे ही बैठाएँगे जैसे पहले

सारिणी–7.4 (सूर्य का प्रस्थारक कुल शुभ बिन्दु 48)

↓ग्रह कक्ष्या स्वामी)/राशि→	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि		0			0	0	0	0	0	0	*0	0
गुरु	0		*				0	0			0	
मंगल	0	0	0	0	0		*0	0		0		
सूर्य	0	0	0		*0	0		0			0	0
शुक्र					0	*					0	0
बुध	0	0	0	0	*		0		0	0		
चन्द्र			0				0	0		*		0
लग्न	0	0	*		0	0		0			0	0
योग	5	5	4	2	5	3	5	6	2	2	4	5

शनि के लिए बताया गया है। अन्त में, सूर्य का जो प्रस्थारक तैयार होगा उसे नीचे सारिणी 7.4 में बताया गया है। हाँ, यहाँ अन्त में एक और सीधा योग का खाना जोड़ा गया है जहाँ प्रत्येक राशि में शुभ बिन्दुओं के कुल योग दिखाए गए हैं।

सूर्य के प्रस्थारक में प्रत्येक राशियों में शुभ बिन्दुओं का योग देखने से पता चलेगा कि मेष, वृषभ, सिंह, तुला तथा मीन में पाँच-पाँच शुभ बिन्दु हैं वहीं वृश्चिक में छह तथा कुंभ में, जहाँ शनि बैठा है, कुल चार शुभ बिन्दु हैं। इन बिन्दुओं की संख्या से किसी राशि अथवा भाव की शक्ति का अनुमान लगता है। एक मोटी बात समझी जा सकती है कि किसी भी भाव में अधिकतम आठ शुभ बिन्दु हो सकते हैं और कम से कम शून्य। आठ बिन्दुओं वाला भाव चरम शक्तिशाली कहा जाएगा और शून्य बिन्दु वाला भाव पूर्ण रूप से शक्तिहीन। अर्थात् जिस भाव में चार बिन्दु हों तो उसे सामान्य, और उससे कम को कमजोर कहा जा सकता है। लेकिन यह एकदम सत्य नहीं है। इसे हम यूँ समझेंगे। शनि के कुल शुभ बिन्दु मात्र 39 हैं। अर्थात् अगर 12 भावों में औसत देखें तो यह तीन से थोड़ा ही अधिक बैठेगा। इस प्रकार गुरु के शुभ बिन्दु 56 हैं तो औसत 4.5 से भी अधिक होगा। इसलिए शनि के प्रस्थारक में जिस भाव में तीन भी बिन्दु पड़े हों उसे सामान्य और बृहस्पति के प्रस्थारक में पाँच बिन्दु वाले भाव को भी सामान्य मानने से फलादेश में भूल कम होगी।

जैसा कि नाम से स्पष्ट है, प्रस्थारक में ग्रहों के गोचर का अध्ययन बहुत सूक्ष्म स्तर पर किया जा सकता है। प्रस्थारक को समेट कर कुण्डली के विभिन्न भावों में अगर शुभ बिन्दुओं को दिखाया जाए तो इसे 'भिन्नाष्टक' कहा जाता है। मान लीजिए, हमें सूर्य का भिन्नाष्टक बनाना है तो इसके लिए हम निम्नांकित कदम उठाएँगे–

(i) पहले कुण्डली बना लीजिए।

(ii) सूर्य के प्रस्थारक में विभिन्न राशियों में जितने बिन्दु हों, उन्हें कुण्डली की उन्हीं राशियों में एक वृत्त के अन्दर लिख दीजिए। उदाहरण कुण्डली में मेष, वृषभ, सिंह, तुला तथा मीन में 5 शुभ बिन्दु हैं–इन्हें कुण्डली की मेष, वृषभ, सिंह, तुला तथा मीन राशियों में वृत्त के अन्दर लिख दीजिए। इसी प्रकार प्रत्येक राशि के शुभ विन्दुओं को लिख देने से सूर्य का भिन्नाष्टक तैयार हो जाएगा। इसे आगे कुण्डली 7.2 में दिखाया गया है। यहाँ विभिन्न राशियों में बैठे ग्रहों को दर्शाया नहीं गया है।

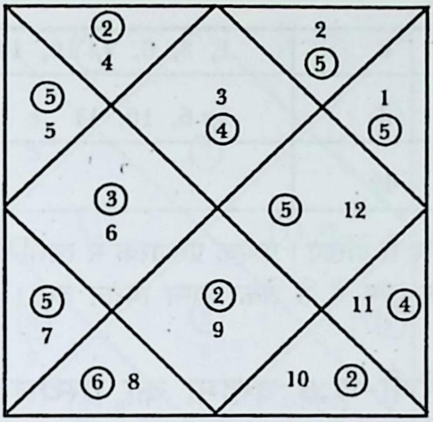

सूर्य का भिन्नाष्टक (कुण्डली-7.2)

जैसे हमने सूर्य के प्रस्थारक तथा भिन्नाष्टक बनाए, वैसे ही अन्य छह ग्रहों के प्रस्थारक और भिन्नाष्टक आगे बताए गए हैं। वहाँ व्याख्या नहीं की गई है। सुधी पाठक सूर्य के प्रस्थारक से भिन्नाष्टक बनाने की विधि के अनुसार ही सारे प्रस्थारक और फिर उनके आधार पर भिन्नाष्टक बना सकेंगे, ऐसा लेखक का पूरा विश्वास है।

सारिणी—7.5 चन्द्रमा के शुभ बिन्दु

स्रोत	शुभ बिन्दु	जिस भाव में चन्द्रमा बैठा है वहाँ से किन भावों में शुभ बिन्दु दिए हैं
शनि	4	3, 5, 6, 11
गुरु	7	1, 4, 7, 8, 10, 11, 12
मंगल	7	2, 3, 5, 6, 9, 10, 11
सूर्य	6	3, 6, 7, 8, 10, 11
शुक्र	7	3, 4, 5, 7, 9, 10, 11
बुध	8	1, 3, 4, 5, 7, 8, 10, 11

चन्द्रमा	6	1, 3, 6, 7, 10, 11
लग्न	4	3, 6, 10, 11
कुल योग	49	

एक बार फिर गौर से देखिए। प्रत्येक प्रस्थारक में तारांकित राशियाँ/कक्ष्याएँ एक ही हैं यानी शनि कुंभ में से लेकर लग्न मिथुन तक।

सारिणी–7.6 चन्द्रमा का प्रस्थारक

↓ग्रह (कक्ष्या स्वामी)/राशि→	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि	0		0	0					0		*	
गुरु	0	0	*0			0			0	0		0
मंगल			0	0	0		*	0	0		0	0
सूर्य		0	0		*		0			0	0	0
शुक्र		0	0	0		*		0	0	0		0
बुध		0	0		*0		0	0	0		0	0
चन्द्र			0	0			0	0		*0		0
लग्न	0		*		0			0				0
योग	3	4	7	4	3	1	3	5	5	4	3	7

सारिणी 7.6 में योग का खाना देखिए। हम देखते हैं कि चन्द्रमा के प्रस्थारक में जहाँ एक ओर मिथुन और मीन तो बहुत सशक्त होकर उभरे हैं क्योंकि उनमें सात-सात शुभ बिन्दु हैं वहीं कन्या में मात्र एक ही शुभ बिन्दु है। अतः चन्द्र के प्रस्थारक में कन्या राशि को अत्यन्त निर्बल कहा जाएगा।

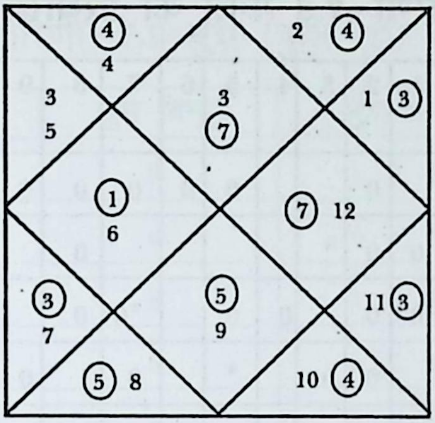

चन्द्रमा का भिन्नाष्टक
कुण्डली-7.3

सारिणी–7.7 मंगल (कुल शुभ बिन्दु 39)

स्रोत	बिन्दु	स्थान
शनि	7	1, 4, 7, 8, 9, 10, 11
गुरु	4	6, 10, 11, 12
मंगल	7	1, 2, 4, 7, 8, 10, 11
सूर्य	5	3, 5, 6, 10, 11
शुक्र	4	6, 8, 11, 12
बुध	4	3, 5, 6, 11
चन्द्र	3	3, 6, 11
लग्न	5	1, 3, 6, 10, 11
योग	39	

सारिणी–7.8 मंगल का प्रस्थारक

↓ग्रह (कक्ष्या स्वामी)/राशि→	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि		0			0	0	0	0	0		*0	
गुरु	0	0	*					0				0
मंगल	0	0		0	0		*0	0		0		
सूर्य		0	0		*		0		0	0		
शुक्र	0			0	0	*					0	
बुध			0		*		0		0	0		
चन्द्र			0					0		*		0
लग्न	0		*0		0			0				0
योग	4	4	4	2	4	1	4	5	3	3	2	3

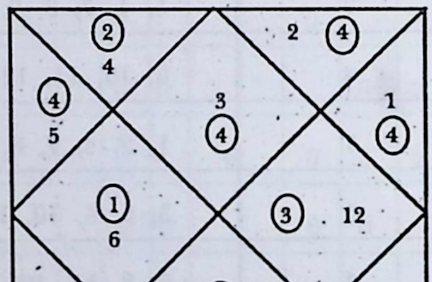

मंगल का भिन्नाष्टक
कुण्डली-7.4

मंगल के प्रस्थारक में भी कन्या राशि अत्यन्त निर्बल प्रतीत होती है क्योंकि वहाँ भी मात्र एक ही शुभ विन्दु है।

सारिणी–7.9 बुध (कुल शुभ बिन्दु 54)

स्रोत	शुभ बिन्दु	बुध से बिन्दुओं के स्थान
शनि	8	1, 2, 4, 7, 8, 9, 10, 11
गुरु	4	6, 8, 11, 12
मंगल	8	1, 2, 4, 7, 8, 9, 10, 11
सूर्य	5	5, 6, 9, 11, 12
शुक्र	8	1, 2, 3, 4, 5, 8, 9, 11
बुध	8	1, 3, 5, 6, 9, 10, 11, 12
चन्द्रमा	6	2, 4 6, 8, 10, 11
लग्न	7	1, 2, 4, 6, 8, 10, 11

सारिणी–7.10 बुध (कुल शुभ बिन्दु 54)

ग्रह (कक्ष्या ↓ स्वामी)/राशि →	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि		0			0	0	0	0	0		*0	0
गुरु	0	0	*					0		0		
मंगल	0	0	0	0	0		*0	0		0		
सूर्य	0		0	0	*				0	0		
शुक्र	0	0		0		*0	0	0	0	0		
बुध	0	0	0	0	*0		0		0	0		
चन्द्र	0		0		0		0	0		*	0	
लग्न	0		*0	0		0		0		0		0
योग	7	5	5	5	4	3	5	6	4	6	2	2

बुध के प्रस्थारक में कन्या, कुंभ और मीन निर्बल दिखते हैं तथा मेष अत्यन्त सबल।

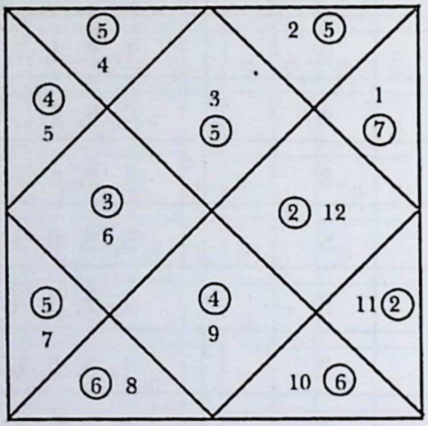

बुध का भिन्नाष्टक
कुण्डली-7.5

सारिणी–7.11 गुरु (कुल शुभ बिन्दु 56)

स्रोत	शुभ बिन्दु	गुरु से बिन्दुओं के स्थान
शनि	4	3, 5, 6, 12
गुरु	8	1, 2, 3, 4, 7, 8, 10, 11
मंगल	7	1, 2, 4, 7, 8, 10, 11
सूर्य	9	1, 2, 3, 4, 7, 8, 9, 10, 11
शुक्र	6	2, 5, 6, 9, 10, 11
बुध	9	1, 2, 4, 5, 6, 9, 10, 11
चन्द्र	5	2, 5, 7, 9, 11
लग्न	9	1, 2, 4, 5, 6, 7, 9, 10, 11
योग	56	

सारिणी–7.12 गुरु का प्रस्थारक

↓ग्रह (कक्ष्या स्वामी)/राशि→	2	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि $3^{0}45'$	0		0	0						0	*	
गुरु $7^{0}30'$	0		*0	0	0	0			0	0		0
मंगल $11^{0}15'$	0	0		0	0		*0	0		0		
सूर्य $15^{0}00'$	0	0	0		*0	0	0	0			0	0
शुक्र $18^{0}45'$		0	0	0		*	0			0	0	
बुध $22^{0}30'$	0	0	0		*0	0		0	0	0		
चन्द्र $26^{0}15'$		0		0		0		0		*	0	
लग्न $30^{0}00'$	0		*0	0		0	0	0	0		0	0
योग	6	5	6	6	4	5	4	5	3	5	4	3

यहाँ मेष, मिथुन और कर्क में थोड़ी शक्ति दिखती है।

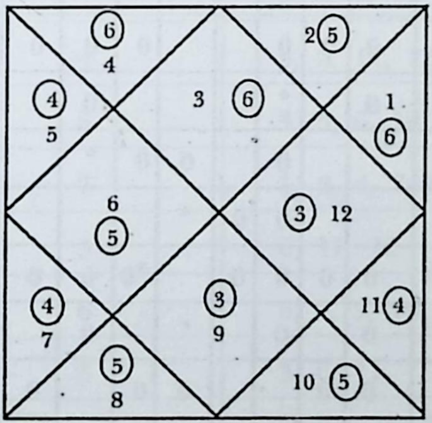

गुरु का भिन्नाष्टक
कुण्डली-7.6

सारिणी–7.13 शुक्र (कुल शुभ बिन्दु 52)

स्रोत	शुभ बिन्दु	शुक्र से बिन्दुओं के स्थान
शनि	7	3, 4, 5, 8, 9, 10, 11
गुरु	5	5, 8, 9, 10, 11
मंगल	6	3, 5, 6, 9, 11, 12
सूर्य	3	8, 11, 12
शुक्र	9	1, 2, 3, 4, 5, 8, 9, 10, 11
बुध	5	3, 5, 6, 9, 11
चन्द्र	9	1, 2, 3, 4, 5, 8, 9, 11, 12
लग्न	8	1, 2, 3, 4, 5, 8, 9, 11
योग	52	

सारिणी–7.14 शुक्र का प्रस्थारक

↓ग्रह (कक्ष्या स्वामी)/राशि→	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि	0	0	0			0	0	0	0		*	
गुरु	0		*				0			0	0	0
मंगल			0		0	0	*		0		0	0
सूर्य			0	0	*							0
शुक्र	0	0	0	0		*0	0	0	0	0		
वुध	0		0		*		0		0	0		
चन्द्र	0	0			0	0		0	0	0*	0	0
लग्न	0		*0	0	0	0	0			0	0	
योग	6	3	6	3	3	5	5	3	5	5	4	4

यहाँ क्रमशः मेष और मिथुन शक्तिशाली हैं। कन्या, तुला, धनु और मकर भी बलवान हैं। शेष राशियाँ कमजोर हैं।

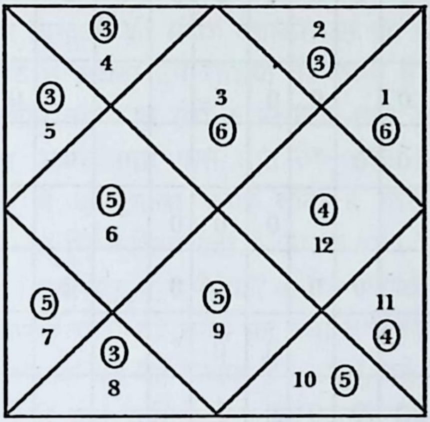

शुक्र का भिन्नाष्टक
कुण्डली-7.7

सारिणी–7.15 शनि (कुल शुभ बिन्दु 39)

स्रोत	शुभ बिन्दु	शनि से बिन्दुओं के स्थान
शनि	4	3, 5, 6, 11
गुरु	4	5, 6, 11, 12
मंगल	6	3, 5, 6, 10, 11, 12
सूर्य	7	1, 2, 4, 7, 8, 10, 11
शुक्र	3	6, 11, 12
बुध	6	6, 8, 9, 10, 11, 12
चन्द्र	3	3, 6, 11
लग्न	6	1, 3, 4, 6, 10, 11

सारिणी–7.16 शनि का प्रस्थारक

↓ग्रह (कक्ष्या स्वामी)/राशि→	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि	0		0	0					0		*	
गुरु	0	0	*				0	0				
मंगल				0	0	0	*		0		0	0
सूर्य		0	0		*0	0		0			0	0
शुक्र				0	0	*					0	
बुध	0	0	0	0	*					0		0
चन्द्र			0					0		*		0
लग्न	0		*0		0	0		0				0
योग	4	3	5	4	4	3	1	4	2	1	3	5

यहाँ मिथुन तथा मीन राशियाँ बली हैं तथा तुला और मकर निर्बल।

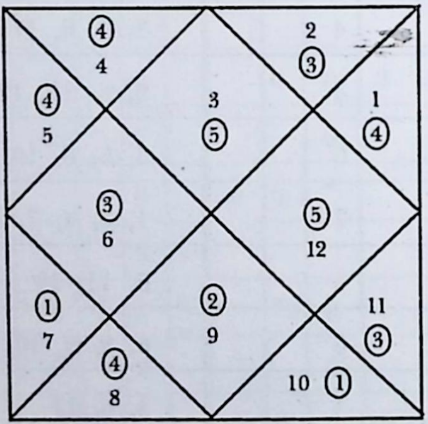

शनि का भिन्नाष्टक
कुण्डली-7.8

सर्वाष्टक—ज्योतिष शास्त्र की महिमा बड़ी न्यारी है, हम व्याख्या के क्रम में सूक्ष्म से स्थूल की ओर बढ़ सकते हैं और स्थूल से सूक्ष्म की ओर भी। ग्रहों में अष्टक वर्ग का विस्तार जहाँ प्रस्थारक में दीखता है वहीं भिन्नाष्टक कुण्डली की राशियों में शुभ बिन्दुओं की संख्या बताकर उस ग्रह विशेष की शक्ति को बताते हैं, जो वहाँ बैठे हैं अथवा उन राशियों के स्वामी हैं। अभी-अभी हमने सूर्य से प्रारम्भ करके शनि तक सात ग्रहों के प्रस्थारक तथा उनके आधार पर भिन्नाष्टक बनाए हैं। इस प्रकार हमारे पास सात भिन्नाष्टक हो गए। इन्हें ही गूँथ कर ज्योतिष शास्त्र में एक माला बनाई जाती है जिसे हम सर्वाष्टक कहते हैं। भिन्नाष्टक, अर्थात् भिन्न-भिन्न ग्रहों के अष्टक वर्ग। 'सर्वाष्टक' अर्थात् सभी ग्रहों के अष्टक वर्ग। सर्वाष्टक में सभी ग्रहों के भिन्नाष्टकों को एक साथ रखकर देखा जाता है कि बारहों भावों को सातों ग्रह तथा लग्न किस प्रकार प्रभावित कर रहे हैं। सर्वाष्टक अष्टक वर्ग का निचोड़ है। आइए, इसे बनाना सीखें। सबसे पहले सारिणी 7.1 जैसी एक सारिणी बना कर उसमें ग्रहों की स्थिति तारांकित कर दीजिए। एक बार फिर से शनि के प्रस्थारक या भिन्नाष्टक को देखें। मेष राशि से लेकर मीन तक शुभ बिन्दुओं की संख्या क्रमशः 4, 3, 5, 4, 4, 3, 1, 4, 2, 1, 3 तथा 5 हैं। नई बनाई सारिणी 7.17 में शनि की कक्ष्या में हम शनि के आगे इन बिन्दुओं की संख्या लिख देते हैं। उसी प्रकार अब गुरु का प्रस्थारक/भिन्नाष्टक देखिए। मेष से मीन तक शुभ बिन्दुओं की संख्या क्रमशः 6, 5, 6, 6, 4, 5, 4, 5, 3, 5, 4 तथा 3 हैं। उन्हें हम गुरु की कक्ष्या में लिख देते हैं। यह प्रक्रिया सारे ग्रहों के लिए दुहराई जाएगी जिनके प्रस्थारक/भिन्नाष्टक बनाए गए हैं। लग्न का प्रस्थारक या भिन्नाष्टक नहीं होता इसलिए लग्न का खाना ही हम हटा देते हैं। उपर्युक्त प्रक्रियाओं के बाद सर्वाष्टक का स्वरूप कुछ ऐसा होगा जैसा नीचे सारिणी 7.17 में दिखाया गया है।

सारिणी—7.17 सर्वाष्टक

↓ग्रह (कक्ष्या → स्वामी)/राशि	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि	4	3	5	4	4	3	1	4	2	1	*3	5
गुरु	6	5	*6	6	4	5	4	5	3	5	4	3
मंगल	4	4	4	2	4	1	*4	5	3	3	2	3

सूर्य	5	5	4	2	*5	3	5	6	2	2	4	5
शुक्र	6	3	6	3	3	*5	5	3	5	5	4	4
बुध	7	5	5	5	*4	3	5	6	4	6	2	2
चन्द्र	3	4	7	4	3	1	3	5	5	*4	3	7
योग	35	29	37	26	27	21	27	34	24	26	22	29

इस प्रकार सर्वाष्टक में सभी भिन्नाष्टक समाहित हैं। सर्वाष्टक को देखकर यह तो पता चल जाता है कि अपने-अपने प्रस्थारकों में ग्रहों ने विभिन्न राशियों में कितने शुभ बिन्दु दिए हैं, जैसे चन्द्रमा के प्रस्थारक में मिथुन और मीन राशियों में सात-सात शुभ बिन्दु हैं परन्तु यह पता नहीं चलता कि ये बिन्दु किन-किन कक्ष्याओं से मिले हैं। फिर भी सर्वाष्टक है बड़े काम की चीज, इसका उपयोग फलित ज्योतिष में धड़ल्ले से और सटीक होता है—क्यों न हो, जब पराशर स्वयं कह गए हैं कि कलयुगी मन्दबुद्धियों के लिए यही सीधा और सरल उपाय है! सर्वाष्टक की सरल सारिणी आगे दी गई है।

सारिणी संख्या-7.17 (अ) सर्वाष्टक वर्ग की सरल सारिणी

भाव → ↓ कक्ष्या	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	योग
शनि	3	2	4	4	4	3	3	4	4	4	6	1	42
गुरु	2	1	1	2	3	4	2	4	2	4	7	4	36
मंगल	4	5	3	4	3	3	4	4	4	6	7	2	49
सूर्य	3	3	3	3	2	3	4	5	3	5	7	2	43
शुक्र	2	3	3	3	4	4	2	3	4	3	6	3	40
बुध	3	1	5	2	6	6	1	2	5	5	7	3	46
चन्द्र	2	3	5	2	2	5	2	2	2	3	7	1	36
लग्न	5	3	5	5	2	6	1	2	2	6	7	1	45
योग													337

इस सारिणी का उपयोग बड़ा ही सरल है। सारिणी 7.1 जैसी एक सारिणी बना कर ग्रहों की स्थिति उनकी कक्ष्याओं में तारांकित कर दीजिए। उदाहरण के लिए, शनि कुंभ में हो (देखें सारिणी संख्या 7.17) तो शनि की कक्ष्या में कुंभ में तारांकित करें। सारिणी संख्या 7.17 (अ) में देखिए कि प्रथम भाव में कितने बिन्दु हैं? सारिणी में प्रथम भाव में 3 लिखा है। कुंभ में शनि की कक्ष्या में 3 लिख दें। शनि से दूसरा भाव है–मीन। सारिणी 7.17 (अ) में दूसरे भाव में लिखा है 2-मीन में 2 लिख दें। इसी प्रकार मेष, वृषभ और मिथुन में क्रमशः 4.4 और 4 लिख दें। कर्क में 3, सिंह में 3, कन्या में, तुला और वृश्चिक में 4.4 और 4 डाल दें। कुंभ से ग्यारहवाँ भाव है–धनु। वहाँ 6 लिख दें। इसी प्रकार मकर में 1 लिखने से शनि की कक्ष्या पूरी हो गई। इसी प्रकार अन्य ग्रहों को तारांकित करके सारिणी 7.17 (अ) की सहायता से पूरी सारिणी 7.17 बना लें। यह हुआ सर्वाष्टक बनाने का सरल तरीका, जहाँ प्रस्थारक या भिन्नाष्टक बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

गोचर के ग्रह और अष्टक वर्ग

अष्टक वर्ग के माध्यम से गोचर के फलों का निरूपण बहुत अच्छी तरह होता है। अष्टकवर्ग की आधारशिला है–प्रस्थारक, और प्रस्थारक पर उसके स्वामी के गोचर से बहुत-सी बातें समझी जा सकती हैं अर्थात् शनि के प्रस्थारक पर शनि का गोचर बहुत सूचनाएँ देता है। किन्तु प्रस्थारक के माध्यम से गोचर की चर्चा हम थोड़ी देर के बाद करेंगे। आइए, पहले आसानी से समझ में आने वाले भिन्नाष्टक और उसके माध्यम से गोचर पर विचार करें।

भिन्नाष्टक में गोचर

भिन्नाष्टक के माध्यम से गोचर के ग्रह की फलदायिनी शक्ति का अनुमान लगाते हैं। मान लीजिए, हमें बृहस्पति के गोचर पर विचार करना है। बृहस्पति का भिन्नाष्टक (कुण्डली 7.6) देखिए। बृहस्पति क्रमशः धनु और मीन के स्वामी हैं तथा मिथुन में बैठे हैं। बृहस्पति के भिन्नाष्टक में धनु और मीन में जहाँ तीन-तीन शुभ बिन्दु हैं वहीं मिथुन में 6 शुभ विन्दु हैं। अर्थात् बृहस्पति का औसत प्रभाव (3+3+6) / 3 = 4 है। हम पहले कह चुके हैं कि साधारणतया 4 शुभ बिन्दु ठीक-ठाक माने जाने चाहिए किन्तु बृहस्पति के कुल शुभ बिन्दु

56 हैं। इन्हें 12 राशियों में बांटें तो औसत 56/12 = 4.67 के आसपास आता है अर्थात् बृहस्पति के भिन्नाष्टक में जिस राशि में 5 से कम बिन्दु हों उसे सामान्य से भी कम प्रभावशाली मानना चाहिए। इस कुण्डली में गुरु की शक्ति 4 आँकी गई है, मानना चाहिए। बस, गनीमत यानी कामचलाऊ कहा ज़ा सकता है। अब देखिए, इस सूचना का हम इस्तेमाल कैसे कर सकते हैं? पहले तो यह पता चलता है और अधिकारपूर्वक कहा जा सकता है कि यह औसत शक्ति का गुरु जब अपने भिन्नाष्टक में विभिन्न राशियों से गुज़रेगा तो सही दशा आने पर कैसे फल देगा। जिन राशियों में 5 से अधिक बिन्दु होंगे, उनमें गुरु जब गुज़रेगा तो अच्छे फल देगा और जहाँ 4 से कम बिन्दु होंगे वहाँ से गुरु के गोचर के फल ठीक नहीं होंगे।

अभी गुरु के गोचर के फल की चर्चा तो गुरु के भिन्नाष्टक के सन्दर्भ में हो गई है किन्तु भिन्नाष्टक का बहुत अच्छा प्रयोग महादशानाथ/अन्तर्दशानाथ के फल की विवेचना में भी होता है। मान लीजिए, महादशानाथ की शक्ति औसत से अच्छी है। अब देखिए कि वह अन्तर्दशानाथ के भिन्नाष्टक में जिस राशि से गुज़र रहा है वहाँ कितने बिन्दु हैं? यदि उस भाव में सामान्य से कम बिन्दु हों तो महादशानाय के फलों में कमी आ जाएगी। इसी प्रकार अन्तर्दशानाथ का गोचर महादशानाथ के भिन्नाष्टक में देखिए। यह फल भी गोचर की राशि के शुभ बिन्दुओं की संख्या से प्रभावित होगा। यह एक मोटा तरीका है जिसे हम आगे एक उदाहरण द्वारा समझेंगे परन्तु ज्योतिष के चमत्कार यहीं समाप्त नहीं होते। अव हम थोड़ी सूक्ष्मता से विवेचना करेंगे, प्रस्थारक में ग्रह के गोचर के अध्ययन के द्वारा!

प्रस्थारक में गोचर

अभी हमने भिन्नाष्टक के माध्यम से ग्रहों के फल देने की शक्ति अनुमान लगाने की विधि देखी। यह भी पता चल गया कि दशानाथ और अन्तर्दशानाथ के आपस के सम्बन्ध कैसे होंगे जिनके आधार पर फल की शक्ति का पता चलेगा। किन्तु फल ठीक-ठाक कब प्राप्त होंगे, इसका पता प्रस्थारक में गोचर देखकर अच्छी तरह लगाया जा सकता है। प्रस्थारक के पीछे सिद्धान्त है कि प्रत्येक राशि में आठ बराबर-बराबर कक्ष्याएँ हैं, जिनका विस्तार $3^0 45'$ का है। गोचर का ग्रह जब किसी ऐसी कक्ष्या से गुज़रता है जहाँ शुभ बिन्दु हों तो गोचर का ग्रह फल देने में अधिक सामर्थ्यवान हो जाता है। एक बात और ध्यान देने की है। गोचर का ग्रह जिस

बिन्दु वाली कक्ष्या से गुज़र रहा है। उसके स्वामी से गोचर के ग्रह के पंचधा मैत्री के आधार पर बने सम्बन्ध भी बहुत महत्वपूर्ण हैं। मान लीजिए, गोचर का ग्रह जिस कक्ष्या से गुजर रहा है वहाँ शुभ बिन्दु है। उस कक्ष्या का स्वामी गोचर के ग्रह का अधिमित्र है तो फल अवश्य ही बहुत अच्छे होंगे। अगर बिन्दु देने वाली कक्ष्या का स्वामी गोचर वाला ही ग्रह हो अर्थात् गोचर का ग्रह अपनी ही कक्ष्या से गुज़र रहा हो और वहाँ शुभ बिन्दु हो तो सोने में सुहागा समझिए। अब हम उदाहरण कुण्डली में शनि का प्रस्थारक (सारिणी संख्या 7.16) देखते हैं। वहाँ मिथुन तथा मीन राशियों में पाँच-पाँच शुभ बिन्दु हैं। ये राशियाँ 4 से अधिक शुभ बिन्दुओं के कारण काफी सशक्त हैं। अब इनमें से हम मीन राशि से गुरु के गोचर को समझने की कोशिश करेंगे। मीन राशि में पाँच बिन्दु देने वाली कक्ष्याएँ हैं—क्रमशः मंगल, सूर्य बुध, चन्द्रमा और लग्न की कक्ष्याएँ। हमने देखा है कि उदाहरण कुण्डली में गुरु के लिए मंगल सम तथा सूर्य अधिमित्र हैं। अर्थात् शनि की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो अथवा गुरु की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तथा गुरु मीन राशि में सूर्य की कक्ष्या से गोचर कर रहा हो तो अच्छे फल अवश्य प्राप्त होंगे। फल कैसे होंगे, यह समझने के लिए ग्रह किन भावों के स्वामी हैं तथा उन भावों के कारकत्व क्या हैं, यह भी अच्छी तरह समझना होगा। अर्थात् गोचर का ग्रह अष्टम भाव से गुजर रहा हो तो अष्टम भाव के कारकत्व जातक के जीवन को प्रभावित करेंगे। यह भी जानना होगा कि ग्रह जिस राशि से गोचर कर रहा है उसकी विशेषताएँ क्या हैं। मान लीजिए, दशमेश गुरु दशम भाव से ही मीन राशि में गोचर कर रहा है। अगर उस समय दशा सही हो तो मीन राशि के कारकत्व यानी मोती, जल आदि के व्यवसाय में लाभ होना चाहिए। सबसे मुख्य बात, जो आमतौर पर नजरअन्दाज हो जाती है, वह है– ग्रहों का कारकत्व। एक बार मोटे तौर पर हम फिर से याद कर लें कि सूर्य अर्थात् अधिकार और राज्य सत्ता, मंगल अर्थात् निर्णय लेने की क्षमता साथ ही बेवकूफियाँ भी, गुरु अर्थात् ज्ञान और शिक्षा, बुध अर्थात् व्यवसाय तथा पत्रकारिता और कम्प्यूटर भी, शुक्र अर्थात् आराम, सुख, शनि अर्थात् श्रम—छोटी हरकतें आदि। इस पर हम विस्तृत चर्चा पहले भी कर चुके हैं।

यहाँ आवश्यक है कि अब नीचे दिए गए उदाहरण के द्वारा हम क्रमवार ढंग से दिनांक 4.4.97 को शनि के गोचर को अष्टकवर्ग के सन्दर्भ में समझें।

सूत्र (i) भिन्नाष्टक में ग्रहों की शक्ति का आकलन करें—सबसे पहले शनि की भिन्नाष्टक कुण्डली 7.8 देखते हैं। शनि, मकर तथा कुंभ

राशियों का स्वामी होकर कुंभ में बैठा है। मकर में मात्र एक बिन्दु है परन्तु कुंभ में तीन बिन्दु हैं अर्थात् शनि की शक्ति है $(1+3+3)/3 = 2.33$ । हम पहले कह चुके हैं कि यद्यपि मोटे तौर पर किसी ग्रह की औसत शक्ति 4 हो तो उसे सामान्य माना जा सकता है परन्तु शनि के लिए यह युक्ति ठीक नहीं। शनि की औसत शक्ति $39/12 = 3.25$ होनी चाहिए। फिर भी, 2.33 शक्ति लेकर शनि तो कमजोर है ही। हाँ, अपनी ही राशि कुंभ में बैठने से, जहाँ उसे 3 बिन्दु प्राप्त हैं, यह कमजोरी थोड़ी हद तक दूर हो जाती है।

(ii) **भिन्नाष्टक के भावों की शक्ति का आकलन करें**—गोचर के ग्रह को भिन्नाष्टक में विभिन्न भावों में कितने बिन्दुओं से गुजरना है, यह अच्छी तरह समझ लें। गोचर के ग्रह जिन भावों के स्वामी होते हैं, उन भावों के अच्छे फल तब प्राप्त होते हैं जब गोचर का ग्रह अपने भिन्नाष्टक में ऐसी राशि से गोचर कर रहा होता है जहाँ चार या उससे अधिक बिन्दु होते हैं। साथ ही, गोचर का ग्रह उन भावों के फल भी देता है जहाँ से वह गोचर कर रहा होता है। कुण्डली 7.8 में 4 अप्रैल, 1997 को शनि मीन राशि में था। शनि के भिन्नाष्टक में मीन राशि में 5 बिन्दु हैं अर्थात् यह राशि सशक्त है। शनि नवमेश है और मीन राशि इस कुण्डली का दशम भाव है अर्थात् नवमेश ऐसे दशम भाव से गोचर कर रहे हैं जो शक्तिशाली है। अतः सही दशा होने पर नौकरी या व्यवसाय में उन्नति दिखती है। शनि अष्टमेश भी है अतः स्थान परिवर्तन की सम्भावना भी दिखती है। 4.4.97 को जातक ने नौकरी बदली और उसे आर्थिक लाभ भी हुआ।

सूत्र (iii) अब यही गोचर शनि के प्रस्थारक में देखिए—हम पहले कह चुके हैं कि मीन राशि में पाँच शुभ बिन्दु हैं जो क्रमश मंगल सूर्य, बुध, चन्द्र तथा लग्न की कक्ष्याओं से प्राप्त हुए हैं। दिनांक 4.4.97 को शनि $16^{0}56'$ पर मीन राशि में अर्थात् पाँचवीं कक्ष्या में था जिसका स्वामी शुक्र है। वहाँ शुभ बिन्दु नहीं है इसलिए जातक की नौकरी तो बदली, तनख्वाह भी वढ़ी पर ऐसा कुछ नहीं हुआ जो चकाचौंध मचा दे या जातक को उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर बैठाकर उसकी जिन्दगी में क्रान्ति ला दे।

सूत्र (iv) उस भाव की सर्वाष्टक वर्ग में शुभता देखिए जहाँ से ग्रह गोचर कर रहा है—हम पहले बता चुके हैं कि सर्वाष्टक में जिस भाव

में 28 बिंदु हों, उन्हें सामान्य जानिए 28 से कम अर्थात् कमजोरी, 20 या उससे कम शुभ बिन्दु हों तो मामला गड़बड़ ही जानना चाहिए। ऐसे भाव से गोचर करने वाले ग्रह यदि पहली तीन सीढ़ियाँ अच्छी तरह भी पार कर गए हैं तो ऐसा मानना चाहिए कि यहाँ आकर गाड़ी अटक सकती है। जिस भाव से ग्रह गोचर कर रहा है वहाँ 28 से अधिक बिन्दु होने से फल प्राप्ति में बाधा नहीं आती। सारिणी 7.17 देखने से पता चलता है कि जातक की कुण्डली में मीन राशि में 29 बिन्दु हैं जो जातक को फल प्राप्ति में सहायक सिद्ध हुए।

ऊपर जो चार सूत्री तरीका बताया गया है उससे फल प्राप्ति का काल तो पता चलता ही है, साथ ही यह भी पता चलता है कि फल कितना प्राप्त होने की सम्भावना है। ये चार सूत्र पूरी तौर पर सन्देशवाहक की खोज-खबर ले लेते हैं कि वह कैसा है और फलों की पोटली, जो दशा ने योगों के आधार पर बाँध कर उसे थमाई है, वह आदर सहित आपके हाथों में पकड़ाएगा या उसे आपके दरवाजे पर पटक कर भाग जाएगा।

आइए, एक दूसरे ग्रह के गोचर को इसी कुण्डली के विभिन्न अष्टक वर्गों में देखें। अब हम दिनांक 04.04.1997 को गुरु के गोचर की चर्चा करते हैं। उस तारीख को गुरु मकर राशि (जो उसकी नीच राशि है) में $21^0 43'$ पर था अर्थात् बुध की कक्ष्या में। मकर राशि में गुरु के 5 शुभ बिन्दु उसके अपने प्रस्थारक में हैं। गुरु धनु और मीन का स्वामी है जहाँ मात्र तीन-तीन शुभ बिन्दु हैं परन्तु गुरु मिथुन (लग्न) में बैठा है जहाँ अपने प्रस्थारक में उसके 6 बिन्दु हैं। पहले हम देख चुके हैं कि गुरु की औसत शक्ति 4 आती है। $(3+3+6)/3=4$ किन्तु गुरु जहाँ बैठा है वहाँ 6 बिन्दु होने के कारण यह कमजोरी कुछ हद तक दूर हो जाती है। गुरु मकर राशि में गोचर कर रहा है। सारिणी 7.17 देखने से पता चलेगा कि वहाँ 26 बिन्दु हैं अर्थात् वहाँ भी थोड़ी-सी कमी के बावजूद फल देने की शक्ति है। गुरु बुध की कक्ष्या से गोचर कर रहा है जो नैसर्गिक रूप से उसका शत्रु है किन्तु तात्कालिक रूप से मित्र होने के कारण सम हो गया है। बुध की कक्ष्या में गुरु के प्रस्थारक में मकर राशि में शुभ बिन्दु भी है। अतः फल मिलने की सारी शर्तें पूरी हो रही हैं जो औसत होंगी। गुरु सप्तमेश तथा दशमेश होकर लग्न में बैठा है अर्थात् इन भावों के फल मिलने की उम्मीद है। फिर वह कुण्डली के अष्टम भाव से गोचर कर रहा है। अतः अष्टम भाव के फल मिलने की आशा भी इस गोचर से की जा सकती है। इतने सारे तत्वों को मिलाकर ही गोचर के फल मिलते हैं।

समुदाय अष्टक वर्ग

आइए, इस चर्चा को थोड़ा और आगे ले चलते हैं। अष्टक वर्ग का एक और अंग है—समुदाय अष्टक वर्ग। समुदाय का अर्थ होता है—संग्रह या ढेर। समुदाय अष्टक वर्ग सच में बिन्दुओं का ढेर ही है। समुदाय अष्टक वर्ग को आप सर्वाष्टक वर्ग का ही सहोदर और हमशक्ल कह सकते हैं। इन दोनों में बड़ा बारीक अन्तर है जिसे हम आगे बताएँगे। पहले समुदाय अष्टक वर्ग बनाने की विधि समझते हैं।

(i) सर्वाष्टक या प्रस्थारक वर्ग के प्रकार का एक खाका बनाइए, जैसा हम पहले सारिणी 7.1 बना चुके हैं।

(ii) अब प्रत्येक ग्रह के प्रस्थारक सामने रख लीजिए। सबसे पहले प्रत्येक प्रस्थारक में मेष की सबसे पहली कक्ष्या, जिसका स्वामी शनि है, देखते हैं। मेष की पहली कक्ष्या में शनि ने क्रमशः चन्द्रमा, गुरु, शुक्र और शनि के प्रस्थारकों में शुभ बिन्दु दिए हैं। इस प्रकार मेष की पहली कक्ष्या में शनि के कारण विभिन्न प्रस्थारकों में कुल चार शुभ बिन्दु प्राप्त हुए। अब ऊपर बने खाके में मेष की पहली कक्ष्या में 4 लिखें। इस प्रकार हम वृषभ में शनि की कक्ष्या को देखेंगे। वहाँ शनि ने शुभ बिन्दु क्रमशः सूर्य, मंगल, बुध और शुक्र के प्रस्थारकों में दिए हैं अर्थात् वहाँ भी चार ही शुभ बिन्दु हैं।

(iii) यह प्रक्रिया सभी 96 कक्ष्याओं में दुहराते हुए पूरी सारिणी भर लीजिए।

इस प्रकार जो समुदाय अष्टक वर्ग बनेगा वह सारिणी 7.18 में दिखाया गया है। साथ ही, सारिणी 7.19 में सर्वाष्टक वर्ग बनाकर दोनों में तुलना भी की जा रही है।

सबसे पहले मेष की पहली कक्ष्या देखें। सर्वाष्टक तथा समुदाय अष्टक वर्गों में वहाँ चार-चार बिन्दु ही हैं पर जहाँ सर्वाष्टक में ये चार बिन्दु शनि के प्रस्थारक में शनि, गुरु, बुध और लग्न से प्राप्त हुए हैं वहीं समुदाय अष्टक वर्ग में चार बिन्दु वे हैं जो शनि ने क्रमशः चन्द्रमा, गुरु, शुक्र और शनि के प्रस्थारकों में दिए हैं। अर्थात् समुदाय अष्टक वर्ग प्रत्येक ग्रह का प्रभाव कक्ष्या दर कक्ष्या बताता है; जबकि सर्वाष्टक वर्ग ग्रहों के प्रभाव की विवेचना उस ग्रह के भिन्नाष्टक वर्ग के आधार पर करता है। इस प्रकार जो बात उभरकर सामने आती है कि यदि किसी पूरी-राशि की विवेचना करनी है तो सर्वाष्टक देखना चाहिए किन्तु यदि किसी कक्ष्या की विवेचना करनी हो तो समुदाय अष्टक वर्ग देखना चाहिए।

सारिणी–7.18 समुदाय अष्टक वर्ग

(कक्ष्या स्वामी)↓ /राशि →	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि	4	4	4	3	3	4	4	4	6	1	*3	2
गुरु	7	4	*2	1	1	2	3	4	2	4	2	4
मंगल	4	4	4	6	7	2	*4	5	3	4	3	3
सूर्य	3	5	7	2	*3	3	3	3	2	3	4	5
शुक्र	3	4	3	6	3	*2	3	3	3	4	4	2
बुध	5	5	7	3	*3	1	5	2	6	6	1	2
चन्द्र	2	2	5	2	2	2	3	7	1	*2	3	5
लग्न	7	1	5*	3	5	5	2	6	1	2	2	6
योग	35	29	37	26	27	21	27	34	24	26	22	29

सारिणी–7.19 सर्वाष्टक वर्ग

(कक्ष्या स्वामी) ↓ /राशि →	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि	4	3	5	4	4	3	1	4	2	1	*3	5
गुरु	6	5	*6	6	4	5	4	5	3	5	4	3
मंगल	4	4	4	2	4	1	*4	5	3	3	2	3
सूर्य	5	5	4	2	5*	3	5	6	2	2	4	5
शुक्र	6	3	6	3	3	5*	5	3	5	5	4	4
बुध	7	5	5	5	4*	3	5	6	4	6	2	2
चन्द्र	3	4	7	4	3	1	3	5	5	4*	3	7
योग	35	29	37	26	27	21	27	34	24	26	22	29

दोनों सारिणियाँ देखने से दो बातें स्पष्ट हो रही होंगी। समुदाय अष्टक वर्ग में हम चूंकि कक्ष्या-दर-कक्ष्या विचार करते हैं इसलिए लग्न की कक्ष्या का भी समावेश किया गया है; जबकि सर्वाष्टक वर्ग में यह अलग से नहीं किया जाता क्योंकि भिन्नाष्टकों के माध्यम से ही लग्न का प्रभाव हम देख लेते हैं। दूसरी बात यह कि इन दोनों के मूल में प्रस्थारक ही हैं अर्थात् इन दोनों की आधारशिला या जननी एक ही है और वह है–प्रस्थारक। ऋषियों ने एक सुविधाजनक विधि इनके आधार पर बताई। यदि ग्रहों की शक्ति देखनी हो तो भिन्नाष्टक देखिए। यदि भावों की शक्ति आँकनी हो तो सर्वाष्टक देखिए तथा गोचर के फल जानने तो समुदाय अष्टक वर्ग देखिए। अर्थात् भाव सिद्धि काल के लिए गोचर का प्रभाव समुदाय अष्टक वर्ग में देखना होगा। सुविधा के लिए समुदाय अष्टक वर्ग बनाने के लिए नीचे सरल सारिणी दी गई है, जिसमें ग्रह जहाँ बैठा है वहाँ से विभिन्न भावों में समुदाय अष्टक वर्ग के शुभ बिन्दु प्रत्येक कक्ष्या के लिए बताए गए हैं।

सारिणी–7.20 समुदाय अष्टक वर्ग की सरल सारिणी

भाव → कक्ष्या ↓	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	योग
शनि	3	2	4	4	4	3	3	4	4	4	6	1	42
गुरु	2	1	1	2	3	4	2	4	2	4	7	4	36
मंगल	4	5	3	4	3	3	4	4	4	6	7	2	49
सूर्य	3	3	3	3	2	3	4	5	3	5	7	2	43
शुक्र	2	3	3	3	4	4	2	3	4	3	6	3	40
बुध	3	1	5	2	6	6	1	2	5	5	7	3	46
चन्द्र	2	3	5	2	2	5	2	2	2	3	7	1	36
लग्न	5	3	5	5	2	6	1	2	2	6	7	1	45
योग	24	21	29	25	26	34	19	26	26	36	54	17	337

इस सारिणी का उपयोग भी बड़ा ही सरल है। सर्वाष्टक की भांति खाका खींच कर जिस कक्ष्या में ग्रह बैठे हैं वहाँ तारांकित कर दीजिए। उसे प्रथम भाव मान कर वहीं से गिनती शुरू कर दीजिए। पहले शनि की बात करते हैं। शनि कुम्भ राशि में है। कुम्भ राशि में शनि की कक्ष्या में तारे का एक चिह्न लगाइए। अब देखिए, दी गई सारिणी 7.20 में पहले भाव में 3 बिन्दु हैं। इसे कुम्भ में लिख दीजिए। अब मीन, जो कुम्भ से दूसरा भाव है, वहाँ 2 बिन्दु होंगे। इस प्रकार मेष, वृषभ और मिथुन में चार-चार बिन्दु डाल दें। इस प्रकार पूरा समुदाय अष्टक वर्ग सीधे-सीधे बनाया जा सकता है।

अब समुदाय वर्ग में गोचर के प्रयोग को एक उदाहरण के द्वारा समझते हैं। उदाहरण कुण्डली संख्या 7.1 के जातक की दिनांक 1.4.97 को दशा थी—गुरु में मंगल। दी हुई तारीख को गुरु मकर में $21^{0}12'$ पर अर्थात् बुध की कक्ष्या में तथा मंगल सिंह राशि में $27^{0}29'$ पर, अर्थात् आखिरी कक्ष्या में था जिसका स्वामी लग्न है। हमने उस जातक के लिए समुदाय अष्टक वर्ग की सारिणी 7.18 बनाई है जिसमें इन कक्ष्याओं में क्रमशः 6 और 5 बिन्दु हैं जो इस गोचर को स्थायित्व तथा शक्ति प्रदान करते हैं। समुदाय अष्टक वर्ग में इन दोनों ही राशियों में क्रमशः 26 तथा 27 बिन्दु हैं जो 28 के काफी करीब हैं, अतः ठीक-ठाक हैं। गुरु अपने भिन्नाष्टक कुण्डली 7.6 में जहाँ से गुजर रहा है (मकर राशि में) वहाँ 5 बिन्दु हैं—गुरु की शक्ति हम पहले ही सामान्य आँक चुके हैं। कुण्डली 7.1 में गुरु दशमेश हैं और मंगल षष्ठेश। चन्द्रमा से मंगल दशम भाव तथा गुरु षष्ठम भाव में बैठा है। इस प्रकार गुरु और मंगल की दशा में दशम और षष्ठम भाव का ही सारा प्रभाव स्पष्ट प्रतीत हो रहा है। अब गुरु की प्रस्थारक सारिणी 7.12 देखिए। गुरु जहाँ से गोचर कर रहा है वह बुध की कक्ष्या है तथा वहाँ बुध ने एक शुभ बिन्दु दिया है। बुध चतुर्थेश होने के कारण वाहन का भी कारक है। जातक ने उस तारीख को वाहन उद्योग में एक जिम्मेदारी के पद पर कार्य प्रारम्भ किया।

अब समुदाय अष्टक वर्ग की सारिणी 7.20 को एक बार फिर से देखते हैं। आप देखेंगे कि सृष्टि के प्रारम्भ में, जब सभी ग्रह एक ही भाव में होंगे, तब उस भाव से तृतीय भाव में सभी ग्रहों ने मिलकर 29 शुभ बिन्दु दिए हैं; जबकि षष्ठम में 34, दशम में 36 तथा एकादश में 54 आदि। यह एक विचित्र-सा विरोधाभास है। हम पढ़ते आए हैं कि त्रिषडाय घरों के स्वामी जितने कमजोर रहें, उतना ही जातक के लिए अच्छा होता है। हमने यह भी पढ़ा है कि इन भावों में यदि नीच का ग्रह बैठ जाए अथवा इन भावों के स्वामी नीच राशियों में हों तो जातक को

कष्ट नहीं पहुँचता। किन्तु समुदाय अष्टक वर्ग की सारिणी इसके विपरीत चित्र प्रस्तुत करती है। सच क्या है? त्रिषडाय के स्वामी कैसे हों–क्या नीच के या इन भावों में शक्ति होनी चाहिए? हम इसे इस प्रकार समझते हैं। एक व्यक्ति जो सीधी-सादी ज़िन्दगी जीना चाहता है जिसकी प्राथमिकता पारलौकिक है, उसके लिए तो आवश्यक है कि इन भावों में शक्ति न हो। तब इन भावों के अच्छे या बुरे–कुछ भी फल नहीं मिल पाएँगे। चूंकि इन भावों के अधिकांश फल बुरे माने जाते हैं इसलिए इन भावों के जाग्रत न होने से ही भलाई मानी गई। दूसरी ओर वे लोग हैं जो जीवन में लड़कर विजयी होते हैं–नेतृत्व सम्भालते हैं और अपने जीवन में व्यावहारिक रूप से वृद्धि करते हैं। आज की दुनिया में इन्हें ही सफल मानते हैं। ये ही प्रशासन, राजनीति और कूटनीति में सर्वोच्च शिखर पर होते हैं। आध्यात्मिक शान्ति अवश्य ही न तो इनकी प्राथमिकता होती है और न ही इन्हें प्राप्त होती है। इस प्रकार दोनों ही जीवन-शैलियाँ अपनी-अपनी पटरी पर अलग-अलग दृष्टिकोण से ठीक दिखती हैं।

दूसरी बात देखिए–प्रत्येक ग्रह अपने से ग्यारहवें भाव में प्रायः अपना सर्वस्व लुटाने को तत्पर लगता है। सारिणी 7.20 का एकादश भाव देखिए। वहाँ शनि तथा शुक्र ने जहाँ छह बिन्दु दिए हैं वहीं बाकी पाँच ग्रहों ने तो सात-सात शुभ बिन्दु दिए हैं। एक बार सारे ग्रहों के शुभ बिन्दुओं की सारिणी अर्थात् सारिणी 7.2, 7.5, 7.7, 7.9, 7.11, 7.13 तथा 7.15 फिर से देखिए। यहाँ पता चलता है कि प्रायः प्रत्येक प्रस्थारक में प्रत्येक ग्रह ने, जहाँ वह बैठा है वहाँ से ग्यारहवें भाव में शुभ बिन्दु दिए हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्येक ग्रह अपने से एकादशवें भाव को मजबूती प्रदान करता है।

राजीव गांधी की कुण्डली (कुण्डली-7.9)

तीसरी बात देखिए—यदि किसी कुण्डली में किसी एक भाव में ग्रहों का जमावड़ा हो गया हो, जैसे राजीव गांधी जी के **लग्न** में 5 ग्रह थे, तो उस भाव से एकादश भाव बेहद मजबूत हो जाता है। सर्वाष्टक बिन्दु सहित स्वर्गीय राजीव गांधी की कुण्डली पूर्व में दी गई है।

आप देखेंगे कि तृतीय भाव में उन्हें 31, षष्ठम् में 35, दशम में 31 तथा एकादश में विस्मयकारी 50 बिन्दु हैं। यही कारण है कि पूर्वोत्तर भारत में वायुदूत उड़ानेवाला यह शर्मीला नौजवान देश की सर्वोच्च कुर्सी पर शोभायमान हुआ। त्रिषडाय घरों में अत्यधिक शक्ति के कारण ही उनका अन्त भी इतना ही हृदय विदारक हुआ—ये बुरे घर जो ठहरे। मान लीजिए, किसी की कुण्डली में अष्टम भाव में कई ग्रह हों तो उसकी हालत देखिए। तब अष्टम भाव से तृतीय (यानी लग्न से दशम), षष्टम, (यानी स्वयं लग्न), दशम (यानी लग्न से पंचम) और एकादश (यानी लग्न से षष्टम) भाव बहुत मजबूत हो जाएँगे। मतलब यह हुआ कि ऐसे जातक के लग्न, पंचम, षष्ठम तथा दशम भाव विशेष फलदायी हो जाएँगे। अर्थात् सुन्दर, शत्रुंजय, अपने कार्यक्षेत्र में प्रभावशाली, विद्या या मंत्र में विशिष्ट और अपने कार्य में दक्ष होगा जातक। अर्थात् ऐसे व्यक्ति को धन का तो अभाव होगा ही नहीं—ऐसी दो मशहूर कुण्डलियाँ हैं क्रमशः आचार्य रजनीश और प्रख्यात सिने कलाकार अभिताभ बच्चन की, जो नीचे दी गई हैं।

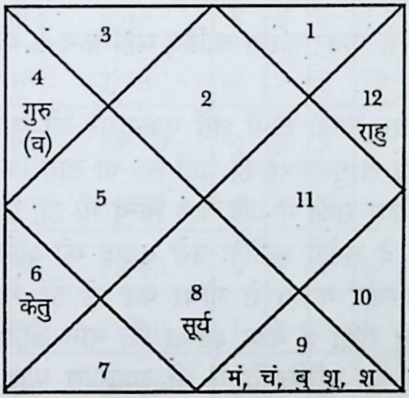

आचार्य रजनीश की कुण्डली
कुण्डली-7.10

अभिताभ बच्चन की कुण्डली
कुण्डली-7.11

चौथी बात–जो ध्यान देने की है कि अगर हम चन्द्रमा के लिए बनी शुभ बिन्दुओं की सारिणी 7.5 देखें तो पाएँगे कि वहाँ भी प्रत्येक ग्रह ने अपने से एकादश भाव में एक शुभ बिन्दु दिए हैं। इस प्रकार हम पाते हैं कि चन्द्र लग्न सहित विभिन्न कोणों से एकादश भाव शक्तिशाली हो जाता है।

इस सन्दर्भ में कर्नल गौड़ ने श्री राव की देख-रेख में मौलिक शोध किया और पाया है कि राजनेताओं की कुण्डली में शनि से एकादशवाँ भाव बेहद शक्तिशाली होता है। इसी प्रकार राज्याधीशों, राज्यपालों आदि की कुण्डलियों में सूर्य से एकादश भाव में बिन्दुओं की अधिक शक्ति देखी गई है। सम्भवतः विद्वानों/प्रोफेसरों की कुण्डलियों में बृहस्पति से एकादश भाव में बहुत बिन्दु मिलने चाहिए।

अब तक जो कहा गया है, उसका निचोड़ कुछ इस प्रकार बताया जा सकता है कि गोचर के माध्यम से सही फल की प्राप्ति के लिए निम्नलिखित दो शर्तों को पूरा होना चाहिए–

(i) समुदाय अष्टक वर्ग में महादशा, अन्तर्दशा तथा प्रत्यन्तर दशानाथों को ऐसी कक्ष्या में गोचर करना चाहिए जहाँ प्रायः 4 या 4 से अधिक बिन्दु हों। कम से कम इन तीनों कक्ष्याओं के बिन्दुओं का योग ग्यारह से कम न हो (ऐसा इसलिए कहा गया कि किसी भी कक्ष्या में अधिकतम सात बिन्दु हो सकते हैं अर्थात् तीनों का उच्चतम योग 21 होगा। उसके आधे को अर्थात् 10.5 को औसत मानना उचित होगा)।

(ii) इन दशानाथों को ऐसी राशियों से गोचर करना चाहिए जहाँ कम से कम 28 शुभ बिन्दु अवश्य हों।

एक बात और समझने की है। ऊपर लिखी दोनों शर्तें एक-दूसरे की पूरक भी हैं। मान लीजिए, दशानाथ ऐसी कक्ष्या से गुजर रहे हों जहाँ छह या सात बिन्दु हैं अर्थात् कक्ष्या बड़ी शक्तिशाली है तो उस राशि में यदि कम बिन्दु भी हों, मान लीजिए 23 तक भी, तो दशानाथ फल दे सकेंगे क्योंकि उसे कक्ष्या की शक्ति प्राप्त है। इसी प्रकार यदि दशानाथ कमजोर कक्ष्या से गोचर कर रहे हों, मान लीजिए वहाँ दो ही बिन्दु हों, किन्तु उस राशि में बेहद शक्ति हो, मान लीजिए 30 या उससे भी अधिक बिन्दु हों तो इस परिस्थिति में भी दशानाथ फल दे सकेगा क्योंकि उसे राशि की शक्ति प्राप्त है।

समुदाय अष्टक वर्ग की वैधता परखने के लिए हम एक विशेष घटना का जिक्र करेंगे। दूरसंचार विभाग में दिनांक 28-12-1994 को एक साथ कई प्रोन्नतियाँ हुईं। एक आदेश के तहत सत्तर से अधिक लोगों को उपसचिव के पद

पर प्रोन्नत किया गया। उनमें से दस कुण्डलियाँ समुदाय अष्टक वर्ग के आधार पर परखी गई हैं। ये दस कुण्डलियाँ बिना किसी नियम के चुनी गई थीं अर्थात् बेतरतीब तौर से चुने गए लोगों की कुण्डली पर उपर्युक्त नियम जाँचे गए हैं। इन सभी कुण्डलियों में मात्र गोचर ही एक जैसा है, दशाएँ आदि तो सब अलग-अलग कुण्डलियों के आधार पर अलग-अलग रही हैं। निम्नांकित बिन्दुओं को आधार बनाकर कुण्डलियों की परीक्षा की गई थी–

(i) महादशा/अन्तर्दशा/प्रत्यन्तर्दशा नाथ ऐसी कक्ष्या से गुजर रहे होंगे जहाँ कम से कम चार शुभ बिन्दु अवश्य हों।

(ii) उपर्युक्त दशानाथों का सम्बन्ध जन्म कुण्डली तथा दशमांश के लग्न/लग्नेश, षष्ठम भाव/षष्ठेश तथा दशम भाव/दशमेश से होना चाहिए।

पहला उदाहरण जातक जन्म 25.10.1994 स्थान–दिल्ली, समय–00.15 बजे

कुण्डली 7.12 के जातक का समुदाय अष्टक वर्ग

सारिणी संख्या-7.21

↓ग्रह राशि →		1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि	$3^0 45'$	3	4	4	4	6	1	*3	2	4	4	4	3
गुरु	$7^0 30'$	4	7	4	*2	1	1	2	3	4	2	4	2
मंगल	$11^0 15'$	4	3	3	4	4	4	6	7गु	2	*4	5	3
सूर्य	$15^0 00'$	4	5	3	5	7	2	*3	3	3	3	2	3
शुक्र	$18^0 45'$	4	2	3	4	3	6	3	*2	3	3	3	4
बुध	$22^0 30'$	1	2	5	5	7	3	*3	1	5बु	2	6	6
चन्द्र	$26^0 15'$	2	2	3	7	1	*2	3	5	2	2	5	2
लग्न	$30^0 00'$	6	7	1	*5	3	5	5शु	2	6	1	2	2
योग		28	32	26	36	32	24	28	25	29	21	31	25

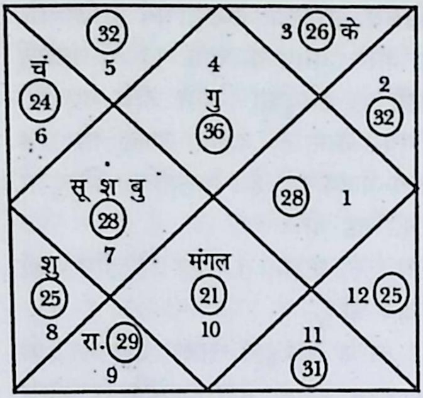

जन्म कुण्डली में सर्वाष्टक बिन्दु लिखे हुए हैं।

कुण्डली-7.12

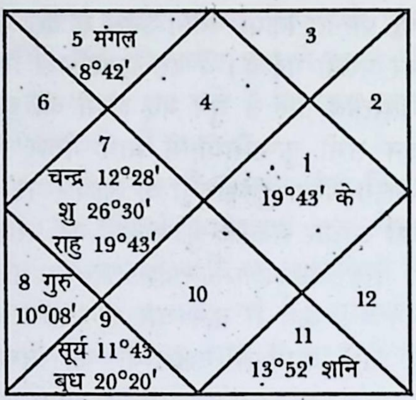

28 : 12 : 1994, का गोचर उस दिन जातक की दशा थी गु/शुक्र/बुध

कुण्डली-7.13

जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, जातक की उस दिन गुरु/शुक्र/बुध की दशा थी। अब देखिए, इन ग्रहों को समुदाय अष्टक वर्ग में डालने से क्या तस्वीर उभरती है? गुरु वृश्चिक में मंगल की कक्ष्या से गुजर रहा था जहाँ सात बिन्दु हैं। शुक्र उस दिन तुला में $26^0 59'$ पर था (अर्थात् लग्न की कक्ष्या में) जहाँ पाँच बिन्दु हैं। बुध धनु राशि में $20^0 55'$ पर अपनी ही कक्ष्या में था जहाँ पाँच बिन्दु हैं। बुध का अपनी कक्ष्या में होना घटना के फलीभूत होने की सम्भावना को और भी अधिक शक्ति प्रदान करता है। अतः पहली शर्त तो पूरी हो गई कि दशा नाथ जिन कक्ष्याओं में हैं वहाँ क्रमशः 7, 5 और 5 बिन्दु हैं जो चार से ज्यादा हैं।

अब दूसरी बात कुण्डली 7.12 में देखते हैं। गुरु वृश्चिक से गुजर रहे थे, उस राशि में मात्र 25 बिन्दु हैं लेकिन हम पहले कह चुके हैं कि कक्ष्या की शक्ति ने इस कमी को ढंक लिया है क्योंकि गुरु जिस कक्ष्या से गोचर कर रहा है वहाँ 7 बिन्दु हैं। शुक्र और बुध जिन राशियों से गुजर रहे हैं वहाँ भी क्रमशः 28 और 29 शुभ बिन्दु हैं। इस प्रकार गोचर की दोनों शर्तें पूरी हो रही हैं।

दूसरा उदाहरण—आइए, लगे हाथ उदाहरण संख्या 2 भी देख लें।—ऊपर दिए गए सूत्रों के आधार पर उसकी भी विवेचना करते हैं।

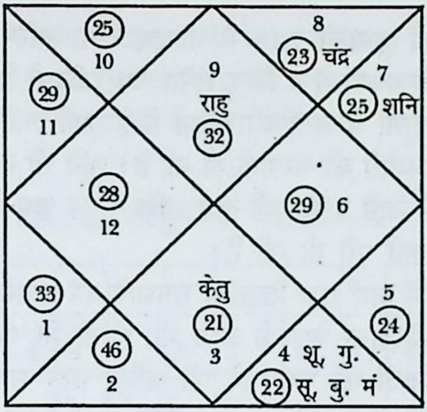

कुण्डली-7.14

जातक का जन्म 28.7.1955 को कानपुर में 17:05 बजे हुआ। तरक्की के समय उनकी दशा थी केतु/शुक्र/शनि।

कुण्डली संख्या 7.14 के जातक का समुदाय अष्टकवर्ग

सारिणी–7.22

ग्रह		1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	योग
शनि	$3^0 45'$	3	4	4	4	6	1	*3	2	4	4	4	3	42
गुरु	$7^0 30'$	4	7	4	*2	1	1	2	3	4	2	4	2	36
मंगल	$11^0 15'$	6	7	2	*4	5	3	4	3	3	4	4	4	49
सूर्य	$15^0 00'$	5	7	2	*3	3	3	3	2	3	4	5श	3	43
शुक्र	$18^0 45'$	3	6	3	*2	3	3	3	4	4	2	3	4	40
बुध	$22^0 30'$	5के	7	3	*3	1	5	2	6	6	1	2	5	46
चन्द्र	$26^0 15'$	5	2	2	2	3	7	1	*2	3	5	2	2	36
लग्न	$30^0 00'$	2	6	1	2	2	6	7शु	1	*5	3	5	5	45
योग		33	46	21	22	24	29	25	23	32	25	29	28	337

गोचर के ग्रहों को कुण्डली 7.13 से उठाइए और सारिणी 7.22 में देखिए। गोचर का केतु बुध की कक्ष्या में 5 बिन्दु समेत मेष राशि में है जहाँ 33 बिन्दु हैं। शुक्र अपनी ही राशि तुला में लग्न की कक्ष्या में है जहाँ 7 बिन्दु हैं। अतः राशि के 25 बिन्दुओं की कमजोरी की भरपायी हो गई है। शनि भी अपनी ही राशि कुम्भ में सूर्य की कक्ष्या में है जहाँ 5 बिन्दु हैं तथा राशि में 29 शुभ बिन्दु हैं। इस प्रकार गोचर में फलदायिनी शर्तें पूरी हो रही हैं।

हमने दो उदाहरणों द्वारा एक सिद्धान्त समझाने का प्रयास किया है। समुदाय अष्टंक वर्ग का यह सिद्धान्त बेखटके कभी भी, किसी भी गोचर पर लगाया जा सकता है, जहाँ दशानाथों की फल देने की शक्ति तथा भाव सिद्धि काल का करीब-करीब सही अनुमान लगाया जा सकता है।

आइए, समुदाय अष्टक वर्ग का एक बढ़िया उपयोग देखते हैं। इसे हम कहेंगे– सबसे अच्छा दिन जानने की तरकीब। यानी आज का दिन कैसा बीतेगा, या यूँ भी कि यह समय कैसा बीत रहा है, यह जानने के लिए समुदाय अष्टक वर्ग पर आधारित एक सिद्धान्त बताते हैं।

सिद्धान्त–जातक के समुदाय अष्टक वर्ग में नौ के नौ ग्रह गोचर में बैठा दीजिए। उनके कक्ष्याओं के शुभ बिन्दुओं का योग देखिए। हम जानते हैं, किसी भी कक्ष्या में अधिकतम बिन्दु सात ही होंगे तो नौ ग्रहों के लिए अधिकतम बिन्दु 63 ही हो सकते हैं। इनका आधा होगा 31.5, जिसे 32 मान लीजिए। अर्थात् जिस समय इन नौ ग्रहों के शुभ बिन्दुओं का योग 32 या अधिक हो वह काल

जातक की कुण्डली
कुण्डली-7.15

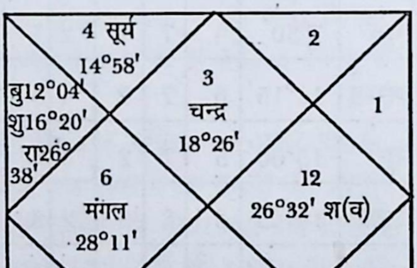

दिनांक 1.8.97 की गोचर कुण्डली
कुण्डली-7.16

ठीक मानिए। इसे एक उदाहरण के द्वारा समझाया जाता है। हम दिनांक 01-08-1997 का गोचर कुण्डली 7.1 के समुदाय अष्टक वर्ग पर लगाएँगे। कुण्डली 7.1 को फिर से सुविधा के लिए नीचे 7.15 के रूप में दिखाया गया है।

कुण्डली 7.15 का समुदाय अष्टक वर्ग सारिणी–7.22

ग्रह		1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
शनि	$3^{0}45'$	4	4	4	3	3	4	4	4	6	1	*3	2
गुरु	$7^{0}30'$	7	4	*2	1	1	2	3	4	2	4	2	2
मंगल	$11^{0}15'$	4	4	4	6	7	2	*4	5	3	4	3	3
सूर्य	$15^{0}00'$	3	5	7	सू2	*बु3	3	3	3	2	3	4	5
शुक्र	$18^{0}45'$	3	4	3चं	6	शु3	*2	3	3	3	4	4	2
बुध	$22^{0}30'$	5	5	7	3	*3	1	5	2	6	6	1	2
चन्द्र	$26^{0}15'$	2	2	5	2	2	2	3	7	1	*गु2	3	5
लग्न	$30^{0}00'$	7	1	*5	3	5रा	5मं	2	6	1	2	के2	6श
योग		35	29	37	26	27	21	27	34	24	26	22	29

अब देखिए दिनांक 01-08-1997 को सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु जिन कक्ष्याओं से गोचर कर रहे हैं वहाँ क्रमशः 2, 3, 5, 3, 2, 3, 6, 5 तथा 2 बिन्दु हैं। इनका कुल योग हुआ 31 जो 32 से कम है। अतः यह दिन तो औसत ही निकला होगा।

इस प्रकार किसी भी समुदाय अष्टक वर्ग के आधार पर पूरे जीवन की व्याख्या की जा सकती है। आगे हम इसी जातक के जीवन के अगस्त 1997 के पहले दस दिनों की सारिणी बनाकर देखते हैं कि समुदाय अष्टक वर्ग का उपयोग कैसे होता है। सारिणी 7.23 बनाना बहुत सरल है। एक खाका बनाइए जिसमें सबसे ऊपर ग्रहों के नाम लिख दीजिए। समुदाय अष्टक वर्ग सामने रख लीजिए। इसमें 1 तारीख को गोचर के ग्रह बैठा कर देखिए कि ये ग्रह जिन कक्ष्याओं से गोचर कर रहे हैं वहाँ कितने शुभ बिन्दु हैं। उन्हें इस खाके में

लिख दीजिए। यही प्रत्येक दिन के सूर्योदय काल या 5:30 बजे के गोचर के लिए कीजिए।

सारिणी—7.23

अगस्त की तारीखें	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	योग
1	2	3	5	3	2	3	6	5	2	31
2	6	3	5	3	2	3	6	5	2	35
3	6	2	5	3	2	3	6	5	2	34
4	6	2	5	3	2	3	6	5	2	34
5	3	1	4	3	2	3	6	5	2	29
6	3	3	4	3	2	3	6	2	3	29
7	3	4	4	3	2	2	6	2	3	29
8	3	3	4	3	2	2	6	2	3	28
9	2	4	4	3	2	2	6	2	3	28
10	2	3	4	3	2	5	6	2	3	30

सारिणी 7.23 को देखें। 2 तारीख को कुल बिन्दुओं का योग है—35। आगे दिनांक 3 तथा 4 को शुभ बिन्दुओं का योग 34 है। अर्थात् इन दस दिनों में ये तीन दिन तो ठीक हैं। आगे देखिए, शेष सात दिनों में बिन्दुओं का योग 32 से भी कम है। ये दिन बहुत सामान्य बीते। जिस दिन 45 या अधिक बिन्दु मिल जाएँ उस दिन पौ-वारह समझिए।

नोट

(i) यद्यपि यह बात दुहराई जा रही है पर याद रखना होगा कि गोचर के फल तभी मिलेंगे जब योग और दशा अनुकूल हों।

(ii) चन्द्रमा प्रायः एक दिन में चार-चार कक्ष्याओं से गुजरता है इसलिए एक दिन में भी चार विभिन्न फल मिलने की सम्भावना रहती है। इस प्रकार पूरे दिन में ऐसा काल निकाला जा सकता है जब चन्द्रमा सबसे अधिक शुभ बिन्दुओं वाली कक्ष्या में रहकर शुभ बिन्दुओं के योग में सर्वाधिक वृद्धि कर सके। वह मुहूर्त्त किसी भी अच्छे कार्य के लिए सबसे अच्छा होगा।

(iii) अभी हमने देखा कि गोचर में दशानाथ कैसे प्रभाव डालते हैं। फल प्राप्ति का एक और रास्ता बताते हैं। पहले देखिए 40 या उससे अधिक बिन्दु कौन-कौन से दिन मिलते हैं? ये सभी दिन सामान्यतः शुभ होने चाहिए। इन दिनों में भी ज्यादा शुभ वे दिन होंगे जब महादशा नाथ, अन्तर्दशानाथ तथा प्रत्यन्तर्दशानाथ–तीनों शुभ बिन्दुओं से भरपूर कक्ष्याओं से गोचर कर रहे होंगे। विशेष तौर से वह दिन निकाल लीजिए जब प्रत्यन्त्तर्दशानाथ जिस कक्ष्या से गोचर कर रहे हैं वहाँ चार या चार से अधिक शुभ बिन्दु हैं। उस दिन प्रत्यन्त्तर्दशानाथ शुभ फल तो देगा ही, अगर कक्ष्याओं में और राशियों में यथेष्ट शुभ बिन्दु हों तथा कुण्डली के योग भी अच्छे हों तो प्रत्यन्त्तर्दशा नाथ छप्पर फाड़कर देगा–सावधान रहिएगा!

(iv) समुदाय अष्टक वर्ग में दैनिक गोचर के माध्यम से ज्योतिष शास्त्र हमें यह भी सिखाता है कि जीवन को ग्रहों के गोचर के आधार पर कैसे नियमित किया जा सकता है? जब अच्छे बिन्दुओं से गोचर हो रहा हो तो भगवान को धन्यवाद देते हुए याद करना चाहिए और जब गोचर पक्ष का न हो, अनुकूल न हो तो भी ईश्वर से हार्दिक प्रार्थना करनी चाहिए कि यह काल ठीक से निकल जाए।

अध्याय-8

कुछ अप्रचलित गोचर सिद्धान्त

इस अध्याय में गोचर के कुछ ऐसे पहलुओं की चर्चा की जा रही है जिसका वर्णन आर्ष सिद्धान्तों में है। परिणाम भी बहुत अच्छे मिलते हैं पर प्रयोग में कम आने

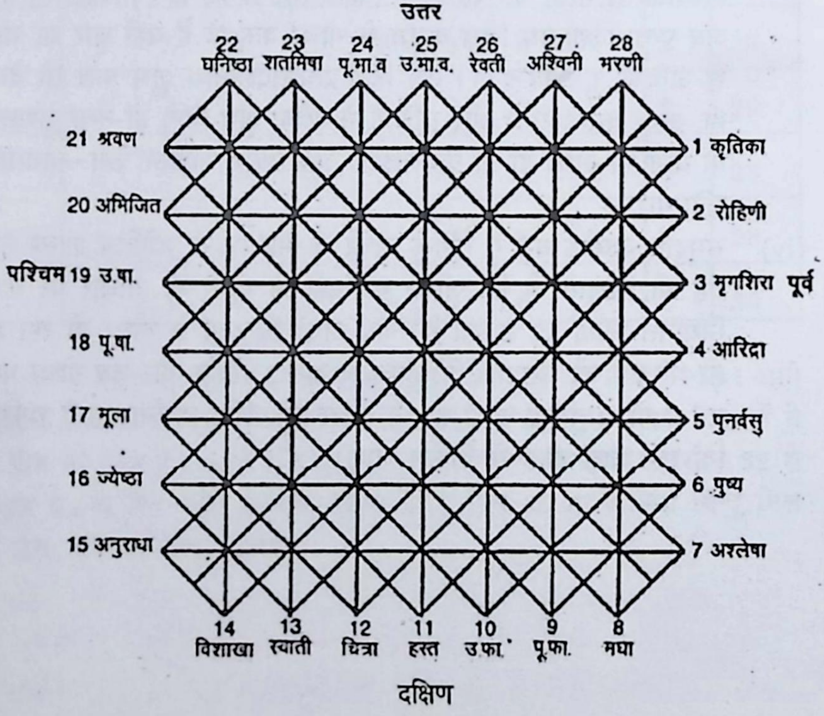

के कारण इनके बारे में आज जानकारी कम है।

1. सप्तशलाका—सबसे पहले हम नक्षत्र गोचर की चर्चा एक चक्र बनाकर करेंगे। इस चक्र को सप्तशलाका कहते हैं अर्थात् सात छड़ियाँ। इस चक्र के बनाने का तरीका वहुत आसान है। सात खड़ी और सात आड़ी रेखाओं को पहले खींचते हैं। इन्हें पन्द्रह-पन्द्रह तिरछी रेखाओं से जोड़कर नीचे जैसा खाका बना लेते हैं।

इस सप्तशलाका चक्र में प्रत्येक दिशा में 7-7 बिन्दु बन गए हैं। पूर्व की दिशा में 1 से 7, दक्षिण दिशा में 8 से 14, पश्चिम में 15 से 21 तथा उत्तर दिशा में 22 से 28 तक की संख्या लिखी गई हैं। इनमें हम कृतिका से (क्योंकि पूर्व दिशा का स्वामी सूर्य है और कृतिका का स्वामी भी सूर्य है) गिनती शुरू करते हैं तथा अभिजित समेत 28 नक्षत्रों को इस चक्र में बिठा देते हैं, जैसा ऊपर दिखाया गया है।

आप देखेंगे कि प्रत्येक नक्षत्र पर तीन नक्षत्रों से रेखाएँ आकर मिलती हैं। सबसे पहले कृतिका को देखिए। यहाँ क्रमशः 14, 21 और 28 न. पर बैठे नक्षत्रों से अर्थात् विशाखा, श्रावण और भरणी से आती रेखाएँ मिलती हैं। इसे हम यूँ भी कह सकते हैं कि कृतिका का विशाखा, श्रावण और भरणी से वेध हो रहा है। मंत्रेश्वर महाराज गोचर फल अध्याय में श्लोक संख्या 26 से 29 तक में सप्तशलाका के फलों को बताते हैं।

28वें श्लोक में मंत्रेश्वर महाराज बताते हैं कि जन्मकालीन चन्द्र नक्षत्र से उन्नीसवाँ नक्षत्र (जिसे हम त्रिजन्म भी कहते हैं) आधान कहलाता है तथा दसवाँ नक्षत्र, (जिसे हम पहले द्विजन्म कह चुके हैं) कर्म नक्षत्र। इसी प्रकार तीसरा नक्षत्र विपत, पाँचवाँ प्रत्यरि, सातवाँ वध तथा बाईसवाँ वैनाशिक कहा जाता है। ये हुए छह नक्षत्र। इन छह नक्षत्रों के अलावा जन्म नक्षत्र भी देखिए। कुल मिलाकर ये सात नक्षत्र सामने आए हैं जिन्हें संवेदनशील कह सकते हैं।

मंत्रेश्वर महाराज कहते हैं कि यदि इन सातों नक्षत्रों का पाप ग्रहों द्वारा वेध हो रहा हो तो मृत्यु का भय होता है। किन्तु यदि पाप ग्रहों के साथ-साथ शुभ ग्रहों से भी वेध हो रहा हो तो केवल कार्य हानि और कुछ अशुभ फल होकर रह जाते हैं।

मंत्रेश्वर महाराज आगे बताते हैं कि यदि गोचर के सूर्य द्वारा जन्म नक्षत्र का वेध हो रहा हो तो प्राण भय, आधान नक्षत्र का वेध हो रहा हो तो भय और चिन्ता तथा कर्म नक्षत्र का वेध हो रहा हो तो धन नाश होगा। यदि सूर्य के साथ कोई अन्य पाप ग्रह भी इन तीन नक्षत्रों का वेध करे तो मृत्यु होती है किन्तु यदि शुभ ग्रहों द्वारा भी वेध हो रहा हो तो मृत्यु नहीं होती।

मंत्रेश्वर महाराज आगे बताते हैं कि यदि चन्द्रमा जन्म, अनुजन्म या त्रिजन्म नक्षत्र में हो तथा सूर्य या अन्य कोई ग्रह एक राशि इसे दूसरी राशि में प्रवेश कर रहा हो अथवा ग्रहण हो या ग्रहयुद्ध, अथवा उल्कापात या अन्य कोई आकाशीय चमत्कार हो, तब जातक को मृत्यु आदि कष्टदायक फल होता है।

इसे हम एक उदाहरण द्वारा समझेंगे। मान लीजिए, किसी जातक का जन्म नक्षत्र है—रेवती। रेवती से तीसरा, पाँचवाँ, सातवाँ, दसवाँ, उन्नीसवाँ तथा बाईसवाँ नक्षत्र है क्रमशः भरणी, रोहिणी, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा तथा उत्तर आषाढ़। इन सात नक्षत्रों का जब भी पाप ग्रहों से वेध होगा तो जातक को कष्ट होगा। इस कष्ट की मात्रा इस वात पर निर्भर करेगी कि इन सातों में से एक साथ कितने नक्षत्रों का बुरे ग्रहों से वेध हो रहा है।

मंत्रेश्वर महाराज आगे सूर्य आदि नौ ग्रहों के जन्म नक्षत्र से विभिन्न नक्षत्रों में गोचर को काल पुरुष के विभिन्न अंगों में भ्रमण मानते हैं। यह विधा भी बहुत रोचक है। देखते हैं, मंत्रेश्वर महाराज इस विषय में क्या कहते हैं।

सारिणी–8.1 सूर्य का गोचर

जन्म नक्षत्र से गोचर का नक्षत्र	काल पुरुष का अंग	फल
1	चेहरा	नाश
2, 3, 4, 5	सिर	विभूति
6, 7, 8, 9	छाती	विजय
10, 11, 12, 13	दाहिनी भुजा	धन
14, 15, 16, 17, 18, 19	दोनों पैर	निर्धनता
20, 21, 22, 23	बाईं भुजा	देह पीड़ा
24, 25	दोनों नेत्र	लाभ
26, 27	गुप्तांग	मृत्यु

27 में से 13 नक्षत्रों से सूर्य का गोचर अशुभ कहा गया।

सारिणी–8.2 चन्द्रमा का गोचर

जन्म नक्षत्र से गोचर का नक्षत्र	काल पुरुष का अंग	फल
1, 2	चेहरा	अत्यन्त भय
3, 4, 5, 6	सिर	क्षेम
7, 8	पीठ	शत्रुओं पर जय
9, 10	दोनों नेत्र	धनागमन
11, 12, 13, 14, 15	हृदय	आत्मसुख
16, 17, 18	बायाँ हाथ	झगड़ा
19, 20, 21, 22, 23, 24	दोनों पैरों में	यात्रा
25, 26, 27	दाहिना हाथ	धन की प्राप्ति

चन्द्र के मात्र 5 गोचर अशुभ बताए गए हैं। शेष 22 अच्छे हैं।

सारिणी–8.3 मंगल का गोचर

जन्म नक्षत्र से गोचर का नक्षत्र	काल पुरुष का अंग	फल
1, 2	चेहरा	मृत्यु
3, 4, 5, 6, 7, 8	दोनों पाँव	झगड़ा
9, 10, 11	गोद में	जय
12, 13, 14, 15	बायाँ हाथ	निर्धनता
16, 17	सिर	लाभ
18, 19, 20, 21	चेहरा	अत्यन्त भय
22, 23, 24, 25	दाहिना हाथ	क्षेम
26, 27	नेत्रों में	विदेश गमन

मंगल के 27 में 16 गोचर अशुभ कहे गए हैं।

सारिणी–8.4 बुध, गुरु, शुक्र का गोचर

जन्म नक्षत्र से गोचर का नक्षत्र	काल पुरुष का अंग	फल
1, 2, 3,	सिर	शोक
4, 5, 6	चेहरा	लाभ
7, 8, 9, 10, 11, 12	दोनों हाथों में	अनर्थ
13, 14, 15, 16, 17	(कुक्षि) पेट में	धन लाभ
18, 19	गुह्य स्थान में	नाश
20, 21, 22, 23, 24 25, 26, 27	दोनों पैरों में	प्रतिष्ठा

यहाँ 27 में से 11 गोचर अशुभ कहे गए हैं।

सारिणी–8.5 शनि, राहु, केतु का गोचर

जन्म नक्षत्र से गोचर का नक्षत्र	काल पुरुष का अंग	फल
1	चेहरा	दुःख
2, 3, 4, 5	दाहिना हाथ	सुख
6, 7, 8	दाहिना पैर	गमन
9, 10, 11	बायाँ पैर	नाश
12, 13, 14, 15	बायाँ हाथ	लाभ
16, 17, 18, 19, 20	पेट	स्वभोग
21, 22, 23	सिर	मुख
24, 25	नेत्र	सौख्य
26, 27	पीठ	मृत्यु

27 में कुल 6 गोचर अशुभ कहे गए हैं।

ऊपर की सारिणियों में देखने से पता चलेगा कि जन्म नक्षत्र के ऊपर से किसी भी ग्रह का गोचर अच्छा नहीं माना गया है। चलते-चलते ग्रहों के नक्षत्रों से गोचर की बात हो जाए–अर्थात् जब कोई ग्रह किसी नक्षत्र के ऊपर गोचर करेगा तो इस गोचर के विशेष फल क्या होंगे? इसे लत्ता कहते हैं। लत्ता को गँवई भाषा में समझने की कोशिश की जाए तो उसे 'लात' समझिए। प्रत्येक ग्रह जिस नक्षत्र में होता है वहाँ से कुछ नक्षत्रों को वह प्रभावित करता है, वह भी अशुभ रूप से। पुरतः संस्कृत में 'आगे' तथा पृष्ठतः 'पीछे' को कहते हैं। कुछ ग्रह अपने से आगे के नक्षत्रों को प्रभावित करते हैं इसे पुरोलत्ता कहते हैं। जैसे सूर्य, मंगल, गुरु और शनि पुरोलत्ता से क्रमशः बारहवें, तीसरे, छठे तथा आठवें नक्षत्र को अशुभ रूप से प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार चन्द्र, बुध, शुक्र, राहु तथा केतु जिस नक्षत्र में होते हैं उससे क्रमशः 22वें, 7वें, 9वें तथा 9वें नक्षत्रों को पृष्ठलत्ता से प्रभावित करते हैं। अर्थात् इनके लिए गिनती पीछे की तरफ होगी। यदि गोचर का कोई

ग्रह किसी व्यक्ति के जन्म नक्षत्र को लात मार रहा हो तो जातक को उस काल में कष्ट होगा। इसे एक उदाहरण से समझें।

मंगल दिनांक 20-9-2008 को चित्रा नक्षत्र में थे। इनकी पुरोलत्ता तीसरे नक्षत्र पर पड़ेगी। अर्थात् चित्रा से तीन आगे के नक्षत्र, जो विशाखा है, पर लात पड़ेगी। जिन व्यक्तियों का जन्म नक्षत्र विशाखा है उन्हें मंगल की लत्ता के अशुभ फल भोगने पड़ेंगे। इसी प्रकार राहु को देखते हैं जो उस दिन श्रवण नक्षत्र में गोचर कर रहे थे। इनकी लात पीछे की ओर, 9वें नक्षत्र को लगेगी। श्रवण नक्षत्र से नौ नक्षत्र पीछे चित्रा नक्षत्र है। मतलब यह हुआ कि जिन लोगों का जन्म नक्षत्र चित्रा है, उस काल में उन जातकों को राहु की लात लगी होगी। लत्ता के फल इस प्रकार कहे गए हैं–

सूर्य की लत्ता से व्यवसाय और अर्थ की हानि, चन्द्र की लत्ता से मान हानि, बुध की लत्ता से स्थान हानि, गुरु की लत्ता से मरण, बन्धुनाश और भय, शुक्र की लत्ता से कलह, राहु–केतु की लत्ता से दुःख बताया है मंत्रेश्वर महाराज ने। यद्यपि मंत्रेश्वर महाराज ने न तो मंगल के बारे में लिखा है ना ही शनि के बारे में लेकिन **शनिवत राहु कुजवत केतु** विचार करने से शनि और मंगल के लत्ता फल क्रमशः राहु-केतु जैसे ही मिलने चाहिए।

मंत्रेश्वर महाराज यह भी कहते हैं कि एक लत्ता की चोट पड़े तो परेशानी अवश्य होती है किन्तु यदि एक से अधिक ग्रहों की लत्ता जन्म नक्षत्र पर पड़े तो अशुभता उसी अनुपात में बढ़ जाएगी–सच भी है, जातक को बिलबिला पड़ने के लिए एक ही लात कम नहीं होती। यहाँ तो जितनी ज्यादा पड़ेगी, पीड़ा उतनी ही ज्यादा होगी।

गोचर के बारे में एक बात फिर से याद दिला देना आवश्यक होगा कि गोचर लाख बुरे हों, चाहे लात लगाएँ या सप्तशलाका में वेध हो रहा हो, जब तक अन्य चीजें, जैसे योग और दशा भी विपरीत न हो जाएँ, जातक की व्यक्तिगत जिन्दगी में ज्यादा अन्तर नहीं आता। हाँ, ऐसे बुरे गोचर राष्ट्र के अध्यक्षों, फसल, मौसम, प्राकृतिक विपदाओं आदि को अवश्य सीधे प्रभावित करते हैं। और ये प्रभावित करते हैं–काल पुरुष को, धरती और आकाश को भी। इस प्रकार, इन्हीं कारणों से जातक को भी।

❑

अध्याय-9

वर्ग कुण्डलियों में गोचर (*i*)

1. असाधारण नियमों के साधारण प्रयोग

हम पहले भी कह चुके हैं कि किसी कुण्डली के फलयोग और दशाओं के कारण गोचर के माध्यम से जातक के पास पहुँचते हैं। कोई फल कैसा होगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि दशानाथ के सम्बन्ध उन भावों तथा भावेशों से कैसे हैं जिनके फल प्राप्त होने हैं। उदाहरणस्वरूप, किसी जातक की मंगल की दशा चल रही है और वह अपने व्यवसाय के बारे में जानना चाहता है तो यह देखना होगा कि मंगल के सम्बन्ध जातक की कुण्डली के दशम भाव तथा दशमेश से कैसे हैं। इसकी विवेचना न सिर्फ जन्म कुण्डली में की जाएगी बल्कि वर्ग कुण्डलियों में भी इसकी पड़ताल करने के बाद ही सही निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकेगा। फल की प्राप्ति में दशानाथ के गोचर ही अन्ततोगत्वा सहायक होते हैं। वस्तुतः दशानाथ की शक्ति का आकलन करने के लिए हम जन्म कुण्डली तथा वर्गों में यह देखते हैं कि वह कहाँ बैठा है, किस भाव का स्वामी है तथा दृष्टि या युति द्वारा किन-किन ग्रहों के प्रभाव में है।

पाठकों से अनुरोध है कि एक बार पुनः अध्याय 6 में दिए गए सूत्रों को देखें जिसमें ग्रहों की शक्ति के आकलन के तरीके बताए गए हैं जिसे हम 'स्थितिज' विवेचना कहेंगे। 'स्थितिज' अर्थात् जिसमें परिवर्तन नहीं हो रहे हैं। ये हमारे पूर्व जन्मों के कर्मों पर आधारित इस जन्म की कुण्डली में ग्रहों की स्थिति है। किन्तु इनके फलीभूत होने का समय सही दशा और उचित गोचर–दोनों पर निर्भर करेगा। दशा और गोचर–दोनों स्थिर नहीं हैं; गतिशील हैं–परिवर्तनशील हैं। दशाएँ भी बदल जाती हैं और गोचर तो नाम से ही

बदलाव का प्रतीक है। दशा और गोचर के अध्ययन को गतिज विवेचना भी कहा जाता है। फल प्राप्ति का काल और परिमाण इन्हीं दोनों विवेचनाओं के समायोजन से बनता है। अर्थात् स्थितिज और गतिज विवेचना का उचित समन्वय ही फल बताने में समर्थ होता है।

गतिज विवेचना का एक विश्वसनीय तरीका है–शनि तथा गुरु दोनों का सम्मिलित गोचर! श्री राव एक विद्वान् पंडित के हवाले से कहते हैं कि उचित योग और दशाओं के आने पर फल प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि उस फल के कारक भाव या कारक भाव के स्वामी पर गोचर के शनि महाराज की कृपा अवश्य होनी चाहिए। किन्तु सिर्फ एक शनि महाराज की कृपा से काम नहीं चलने वाला। आवश्यक है कि शनि महाराज ने जिस भाव/भावेश को फल प्राप्ति की सहमति दे दी है, उसे देवगुरु बृहस्पति की आशीर्वाद भरी दृष्टि भी मिले। गोचर के शनि और गुरु के आश्वासन भरे स्पर्श के बाद ही कोई भी महत्वपूर्ण घटना जीवन में घट सकती है। इसे हम सूत्रों के द्वारा समझेंगे।

(अ) गोचर के शनि को सिदृयु (स्थिति, दृष्टि या युति) के द्वारा सही भाव अथवा भावेश को प्रभावित करना होगा।

(आ) तत्पश्चात् गोचर के बृहस्पति को भी सिदृयु के द्वारा सही भाव/भावेश को प्रभावित करना होगा। गुरु की कृपा जैसे शनि के स्पर्श के बाद गंगाजल का छिड़काव करके उस घटना को संभव और महत्वपूर्ण बना देती है।

(इ) ऊपर लिखे इन दो सूत्रों को हमें जन्म लग्न तथा चन्द्र प्रश्न से परखना होगा क्योंकि चन्द्रमा तथा चन्द्र लग्न का महत्व लग्नेश तथा जन्म लग्न से कम नहीं आँका जाना चाहिए।

व्यावहारिक प्रयोग

फल प्राप्ति में सहायक महादशा/अन्तर्दशा और प्रत्यन्तर्दशा नाथ एक ओर हो गए, जिनके बारे में हम पिछले अध्याय में चर्चा कर चुके हैं। दूसरी ओर हैं–गोचर के शनि और गुरु–इन सबके समग्र प्रभाव से ही घटना होगी। इनके प्रभाव की विवेचना हम तीन चरणों में करेंगे। सबसे अच्छा हो कि पहले हम एक खास विषय 'व्यवसाय या आजीविका' को लेकर आगे अध्ययन करें। इससे बात समझने में सुविधा होगी।

पहला चरण–स्थितिज या स्थिर विवेचना–पहले महादशा, अन्तर्दशा तथा प्रत्यन्तर्दशा नाथों की शक्ति का अनुमान लगाया जाता है कि वे फल देने में

कितने सक्षम हैं? यह जानने के लिए देखना होता है कि ये लग्न तथा चन्द्र लग्न से किन भावों के स्वामी होकर कहाँ बैठे हैं तथा उन पर कैसे प्रभाव हैं? यहाँ आगे हम व्यवसाय या आजीविका पर चर्चा करने जा रहे हैं इसलिए तीनों दशानाथों को नवांश के अलावा दशमांश में भी देखना होगा। साथ ही, याद रखना होगा कि व्यवसाय के लिए गुरु तथा दशम भाव एवं षष्ठम भाव कारक कहे गए हैं। हम उन्हें भी स्थिर विवेचना के दौरान समझने का प्रयास करेंगे। लग्न तथा लग्नेश किसी भी पड़ताल के अभिन्न अंग हैं ही, इसलिए सही विवेचना के लिए उन्हें भी देखना होगा।

दूसरा चरण—दूसरे चरण में हम थोड़ी गति लाकर देखेंगे कि गोचर के शनि तथा गुरु लग्न लग्नेश, षष्ठम भाव/षष्ठेश तथा दशम भाव/दशमेश को कैसे प्रभावित करते हैं?

तीसरा चरण—तीनों दशानाथों का गोचर अब जन्म कुण्डली में जन्म लग्न तथा चन्द्र लग्न से देखेंगे। इसके अलावा, इन दशानाथों का गोचर हम नवांश और दशमांश में भी देखेंगे।

इस त्रिचरणीय सिद्धान्त को हम तीन उदाहरणों के द्वारा समझेंगे।

उदाहरण-1

जातक को 14-06-1976 को प्रोन्नति मिली—जब जातक की दशा थी गुरु/सूर्य/मंगल। हम 14-06-1976 का गोचर भी नीचे दे रहे हैं।

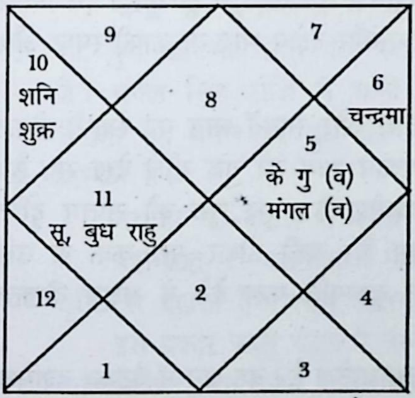

जन्म कुण्डली-9.1

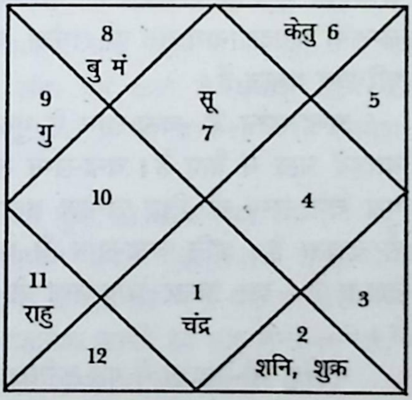

नवांश कुण्डली-9.2

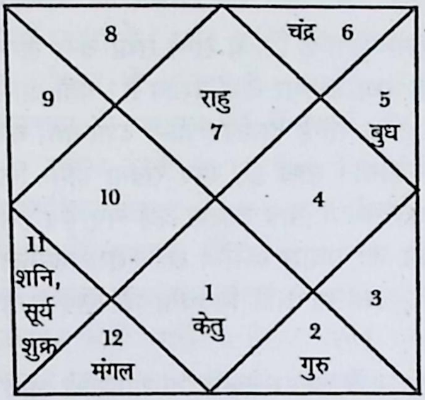

दशमांश कुण्डली-9.3

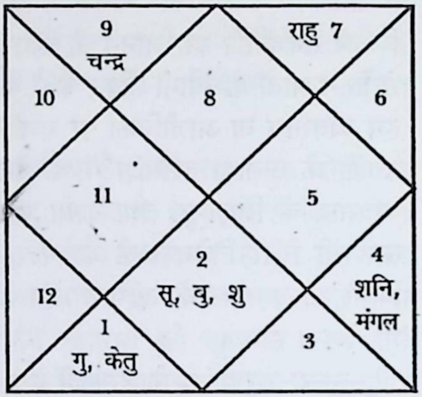

दिनांक-14.06.1976 का गोचर
कुण्डली-9.4

पहला चरण

पहले हम दशानाथों की स्थिति लग्न, चन्द्र, लग्न, नवांश और दशमांश कुण्डलियों में देखते हैं।

महादशानाथ–गुरु

लग्न से–गुरु लग्न से द्वितीयेश और पंचमेश होकर दशम भाव में बैठा है। इसके साथ मंगल भी दशम भाव में बैठा है जो लग्नेश और षष्ठेश है। गुरु नवीं दृष्टि से षष्ठम भाव को देख रहा है। गुरु पर दशमेश सूर्य की पूर्ण दृष्टि है। इस प्रकार लग्न से महादशानाथ गुरु पर लग्नेश, षष्ठम और दशम भाव के काफी स्पष्ट और परिपक्व प्रभाव हैं।

चन्द्र-लग्न से–चन्द्र-लग्न से गुरु चौथे और सातवें भाव का स्वामी होकर बारहवें भाव में बैठा है। चन्द्र-लग्न से षष्ठम भाव को गुरु सीधे देख रहा है। बुध चन्द्र-लग्न के लिए लग्नेश तथा दशमेश है। बुध गुरु को सप्तम दृष्टि से देखता है। शनि चन्द्र-लग्न से षष्ठेश है। वक्री होकर गुरु कर्क से उसे देखता है। इस प्रकार चन्द्र-लग्न से भी बृहस्पति फल देने में सक्षम दीखता है।

नवांश में–नवांश में गुरु तृतीयेश तथा षष्ठेश है। वह धनु में बैठकर दशमेश चन्द्रमा को पंचम दृष्टि से देखता है।

दशमांश में—दशमांश में भी गुरु तृतीयेश तथा षष्ठेश हैं। वहाँ गुरु वृषभ में बैठकर दशमेश चन्द्रमा को द्वादश भाव में, पंचम दृष्टि से देखता है।

अन्तर्दशानाथ—सूर्य

लग्न से—लग्न से सूर्य दशमेश होकर दशम भाव को तो देखता ही है, लग्नेश तथा षष्ठेश मंगल को भी पूर्ण दृष्टि से देखता है। अन्तर्दशेश सूर्य महादशेश गुरु को भी पूर्ण दृष्टि से देखता है। सूर्य यूँ भी सरकारी नौकरी/प्रतिष्ठा का प्रतीक है, इस प्रकार सूर्य महादशा नाथ को शक्ति प्रदान करने के अतिरिक्त यह भी बताता है कि फल की दिशा सरकारी कृपा होगी।

चन्द्र से—चन्द्र-लग्न से सूर्य षष्ठम भाव में बैठा है। उसके साथ बुध बैठा है जो चन्द्र-लग्न से लग्नेश और दशमेश है।

नवांश में—नवांश में सूर्य लग्न में बैठ कर दशमेश चन्द्रमा को पूर्ण दृष्टि से देख रहा है।

दशमांश में—सूर्य दशमांश के लग्नेश शुक्र के साथ है।

प्रत्यन्तर्दशा नाथ मंगल

लग्न से—मंगल लग्नेश तथा षष्ठेश है, दशम भाव में बैठा है और दशमेश सूर्य से दृष्ट है। दशम भाव में बैठा मंगल यूँ भी दिग्बली है और दशा आने के कारण फल देने में पूर्ण सक्षम है।

चन्द्र से—चन्द्र-लग्न से षष्ठम भाव को मंगल सीधे देख रहा है। साथ ही, बुध को भी मंगल देख रहा है। बुध चन्द्र लग्न से लग्नेश और दशमेश है। मंगल सिंह राशि में वक्री है अतः वह कर्क से षष्ठेश शनि को भी देखता है। मंगल पर बुध की सीधी दृष्टि है जो चन्द्र-लग्न से दशमेश और लग्नेश है।

नवांश में—नवांश में मंगल लग्नेश शुक्र को सीधा देख रहा है।

दशमांश में—दशमांश में मंगल षष्ठम भाव में बैठा है तथा लग्न को अष्टम दृष्टि से देखता है। मंगल सप्तम दृष्टि से दशमेश चन्द्र को भी देख रहा है।

इस प्रकार पहले चरण में तीनों दशानाथ काफी हद तक लग्न/लग्नेश, षष्ठम भाव/षष्ठेश तथा दशम भाव/दशमेश को प्रभावित कर रहे हैं।

दूसरा चरण (गोचर के शनि और गुरु)—14 जून, 1976 को शनि कर्क

राशि में था तथा 27-03-1976 तक वक्री था। 14 जून, 1976 को गुरु मेष राशि में था। अब इन दोनों गोचर के ग्रहों की विवेचना हम पहले चरण की तरह ही करेंगे।

लग्न से—गोचर का शनि कर्क में आकर दशम दृष्टि से षष्ठम भाव को देख रहा है। गुरु षष्ठम भाव में बैठकर दशम भाव तथा वहाँ बैठे लग्नेश और षष्ठेश मंगल को देख रहा है। याद रखिए, जन्म कुण्डली में मंगल वक्री होने के कारण कर्क राशि से भी प्रभावी है। इसलिए गोचर का शनि उसे प्रभावित करता है।

चन्द्र-लग्न से—मार्च के अन्त तक शनि वक्री होकर पिछले भाव से भी प्रभावी था। अर्थात् वह चन्द्र-लग्न से दशम भाव को भी प्रभावित कर रहा था। अभी वह कर्क से षष्ठेश शनि को देख रहा है। यही काल था जब बोर्ड ने जातक का नाम मंजूर कर लिया था। गुरु यहाँ कुछ खास नहीं कर रहे।

नवांश में—शनि दशम भाव में गोचर करते हुए दशमेश को देखता है। गुरु दशमेश के ऊपर से ही गोचर कर रहा है तथा लग्न को देख रहा है।

दशमांश में—शनि यहाँ भी दशम भाव में गोचर करते हुए दशमेश चन्द्रमा को तृतीय दृष्टि से देखता है। गुरु दशमांश में लग्न तथा बुध को देखता है जिसके घर में दशमांश का लग्नेश बैठा है।

अब देखिए, शनि ने लग्न/लग्नेश दशम भाव/दशमेश या षष्ठम भाव/षष्ठेश या दोनों को चारों बार प्रभावित किया है। गुरु चार में तीन बार ऐसा कर रहे हैं। सिर्फ चन्द्र-लग्न से गुरु का प्रभाव नहीं दीखता। फिर भी, आठ में से सात बार दोनों बड़े ग्रहों ने गोचर में फल प्राप्ति की संभावना बताई है—85% के आस पास यदि कोई सूत्र सफल लगे तो बड़ी बात माननी चाहिए और सूत्र की सत्यता जाननी चाहिए।

तीसरा चरण—दशानाथों का चारों प्रकार से गोचर देखा जाना

लग्न से—गुरु, महादशानाथ, छठे भाव से गुजरता हुआ दशम भाव को देख रहा है। दशम भाव में बैठा मंगल, जो लग्नेश और षष्ठेश है, उसे भी महादशानाथ गुरु देख रहा है। इस प्रकार महादशानाथ तो गोचर में फल देने के लिए पूरी तरह तैयार हैं। अन्तर्दशा नाथ सूर्य गोचर में सप्तम भाव में है अतः लग्न को देख रहा है। सप्तम भाव दशम से दशम होने के कारण दशम भाव का ही एक रूप है। सूर्य दशमेश भी है। इस प्रकार अन्तर्दशानाथ का आशीर्वाद भी इस गोचर को प्राप्त

है। प्रत्यन्तर्दशा नाथ मंगल कर्क से गुजर रहा है। कर्क का मंगल नीच का होता है। फिर भी मंगल षष्ठेश तो है ही, तथा गोचर में वह दशमेश सूर्य को देख रहा है। इस प्रकार लग्न से दशानाथों का गोचर तो सब प्रकार से अच्छा है। इतना अच्छा कि फल समय से मिलेंगे ही।

चन्द्र लग्न से—पहले हम देख चुके हैं कि चन्द्र-लग्न से गोचर के गुरु किसी भी प्रकार से लग्नेश/लग्न, षष्ठम भाव/षष्ठेश या दशम भाव/दशमेश को प्रभावित नहीं करते। इसी प्रकार सूर्य भी गोचर में कहीं से प्रभाव नहीं छोड़ रहे किन्तु प्रत्यन्तर दशा नाथ मंगल कर्क में गोचर करता हुआ चन्द्र लग्न से षष्ठम भाव तथा वहाँ बैठे लग्नेश और दशमेश बुध को भी अष्टम दृष्टि से देखता है। मंगल चन्द्र लग्न से षष्ठेश शनि को सीधी दृष्टि से देख रहा है।

नवांश में—यहाँ महादशानाथ गुरु षष्ठेश होकर दशमेश चन्द्रमा पर गोचर कर रहे हैं तथा लग्न को देख रहे हैं। अन्तर्दशानाथ सूर्य कुछ खास नहीं कर रहे पर प्रत्यन्तर्दशा नाथ मंगल दशम भाव में गोचर कर रहे हैं।

दशमांश में—गुरु सप्तम भाव में गोचर कर रहे हैं तथा लग्न को देख रहे हैं। अन्तर्दशानाथ सूर्य दशमांश के षष्ठेश गुरु के ऊपर से गुजर रहे हैं। प्रत्यन्तर्दशा नाथ मंगल दशम भाव से गोचर कर रहे हैं।

ऊपर हमने चार विभिन्न लग्नों तथा तीन भिन्न वर्ग कुण्डलियों में गोचर की विवेचना की है। यहाँ हमने देखा कि महादशा/अन्तर्दशा तथा प्रत्यन्तर्दशा नाथ व्यवसाय में सफलता के लिए गोचर से कैसे लग्न, षष्ठम तथा दशम भाव को प्रभावित करते हैं।

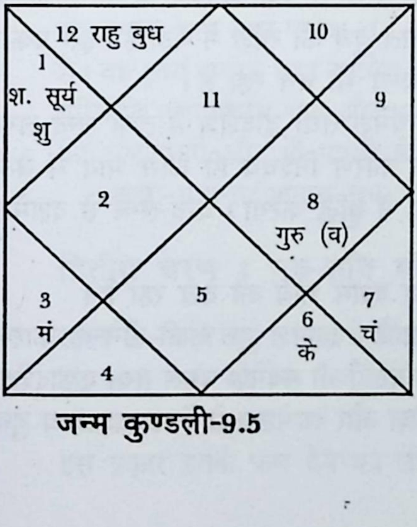

जन्म कुण्डली-9.5

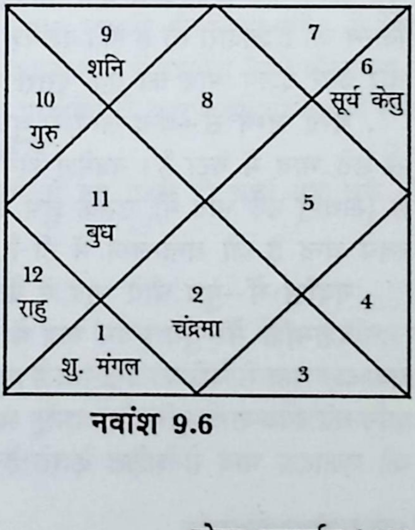

नवांश 9.6

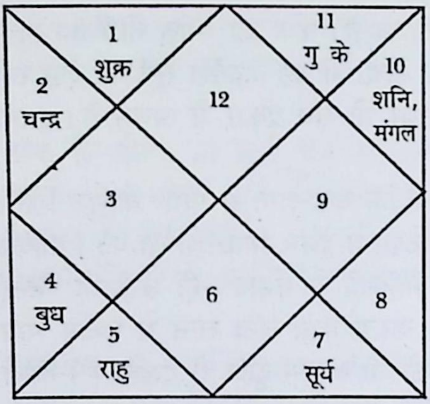

दशमांश 9.7

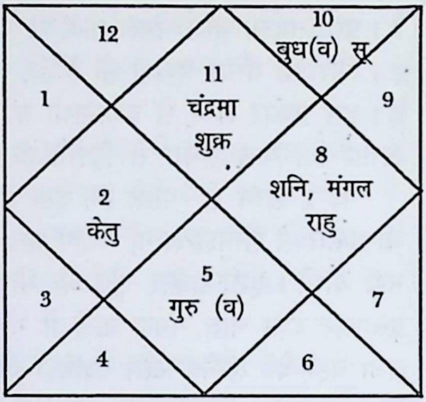

18.01.1956 का गोचर 9.8

उदाहरण 2 : जातक को 18-01-1956 को प्रोन्नति मिली जब दशा थी बुध/गुरु/बुध।

प्रथम चरण : बुध महादशानाथ

लग्न से—बुध पंचमेश तथा अष्टमेश है तथा द्वितीय भाव में बैठा है जहाँ वह नीच भंग राजयोग दे रहा है क्योंकि बुध मीन राशि में बैठा है और उसका स्वामी गुरु लग्न से केन्द्र में है। शुक्र जो मीन में उच्च का होता है, वह भी चन्द्रमा से केन्द्र में है।

बुध जिस राशि में वैठा है उसका स्वामी गुरु दशम भाव में वैठा है। इस प्रकार बुध दशम भाव से सम्वन्ध वना रहा है, जो सीधा तो नहीं है फिर भी काम-चलाऊ किस्म की रिश्तेदारी तो है ही। दशमेश मंगल बुध की राशि में बैठा है। इस प्रकार बुध और दशम भाव का एक दूसरा सम्बन्ध भी बन रहा है।

चन्द्र लग्न से—चन्द्र लग्न से बुध नवमेश तथा द्वादशेश है तथा चन्द्र लग्न से छठे भाव में बैठा है। नवमेश होने के कारण निश्चय ही जिस भाव में बैठा है (अर्थात् छठे भाव में), उसके शुभ फलों में वृद्धि करेगा। चन्द्र-लग्न से दशमेश स्वयं चन्द्र है जो चन्द्र-लग्न में ही है।

नवांश में—बुध चौथे भाव में बैठकर दशम भाव को देख रहा है।

दशमांश में—वुध पंचम भाव में बैठा है। दशमेश गुरु वक्री होने के कारण एकादश भाव से बुध को देख रहा है। बुध पर यूँ भी नवमेश मंगल तथा एकादशेश शनि की साथ-साथ दृष्टि है, अर्थात् भाग्येश और लाभेश—दोनों महादशानाथ बुध को एकादश भाव से शक्ति दे रहे हैं।

गुरु-अन्तर्ददशानाथ

लग्न से—गुरु एकादशेश तथा द्वितीयेश होकर दशम भाव में बैठा है तथा नवम दृष्टि से षष्ठम भाव को देख रहा है। गुरु वक्री है अतः षष्ठेश चन्द्रमा को, जो तुला में है, प्रभावित कर रहा है। तुला से गुरु नवम दृष्टि से मंगल को देखता है जो दशमेश है। तुला से गुरु लग्नेश शनि को तथा लग्न को भी देखता है। इस प्रकार लग्न से देखने पर प्रतीत होता है कि अन्तर्दशानाथ लग्न से हर प्रकार से षष्ठम भाव, षष्ठेश, लग्न तथा लग्नेश एवं दशम भाव तथा दशमेश को प्रभावित करता है। इस प्रकार महादशानाथ की जो कमियाँ रही होंगी, अन्तर्दशानाथ हर प्रकार से उनकी पूर्ति कर रहा है।

चन्द्र-लग्न से—चन्द्र-लग्न से गुरु षष्ठेश तथा तृतीयेश है जो द्वितीय भाव में बैठा है। गुरु चन्द्र-लग्न से छठे भाव को पंचम दृष्टि से देख रहा है। साथ ही, गुरु दशम भाव को भी देख रहा है। गुरु वक्री है तथा तुला को भी प्रभावित करता है। इस प्रकार वह चन्द्रमा को प्रभावित कर रहा है जो चन्द्र-लग्न है तथा दशमेश भी।

नवांश में—गुरु द्वितीयेश तथा पंचमेश होकर तृतीय भाव में बैठा है जहाँ यह नीच का है और वक्री है। यह गुरु दशमेश सूर्य को नवम दृष्टि से देख रहा है। वक्री होने के कारण गुरु धनु से भी प्रभावी है तथा षष्ठम भाव और वहाँ बैठे लग्नेश एवं षष्ठेश मंगल को देख रहा है। वक्री होकर यह दशम भाव को भी नवम दृष्टि से देख रहा है। यद्यपि कई विद्वान् वर्गों में वक्री ग्रहों को एक भाव पीछे से प्रभावी नहीं मानते।

दशमांश में—गुरु लग्नेश तथा दशमेश होकर द्वादश भाव में बैठा है जहाँ से वह षष्ठम भाव तथा षष्ठेश सूर्य को क्रमशः सातवीं और नवम दृष्टि से देख रहा है। वह स्वयं लग्नेश तथा दशमेश है। द्वादश भाव में दशमेश बैठने के कारण स्थान परिवर्तन तथा षष्ठम भाव और षष्ठेश पर दृष्टि के कारण प्रतियोगिता में सफलता की संभावनाएँ और भी पक्की हो रही हैं।

बुध—प्रत्यन्तर्दशानाथ बुध के बारे में हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं।

द्वितीय चरण : गुरु-शनि गोचर

लग्न से—शनि दशम भाव से गोचर कर रहा है। गुरु सप्तम भाव से गोचर करते हुए लग्न भाव को देख रहा है। गोचर का गुरु भी वक्री है अतः षष्ठम भाव से वह दशम भाव तथा वहाँ बैठे ग्रह पर दृष्टि डालकर उन्हें प्रभावित कर रहा है। इस प्रकार इनके फल देने की संभावना बढ़ जाती है।

चन्द्र-लग्न से—चन्द्र-लग्न से गोचर का शनि द्वितीय भाव में गोचर कर रहा है। जन्म कुण्डली में चन्द्र-लग्न से छठे भाव का स्वामी गुरु है, वह चन्द्र लग्न से दूसरे भाव में बैठा है। इसी प्रकार चन्द्र लग्न से षष्ठेश के ऊपर से शनि गोचर कर रहा है। गुरु चन्द्र-लग्न से एकादश भाव से गोचर करता हुआ वक्री होने के कारण दशम भाव से भी प्रभावी है। इस प्रकार क्रमशः कर्क और सिंह से गुरु चन्द्र-लग्न से दशम भाव, नवमेश बुध, षष्ठम भाव, षष्ठेश गुरु, एकादश भाव, सप्तम भाव तथा वहाँ बैठे शुक्र, शनि और सूर्य को प्रभावित कर रहा है। चन्द्र-लग्न से शुक्र लग्नेश, शनि चतुर्थेश तथा सूर्य एकादशेश है। गुरु के दशम भाव तथा दशमेश पर सीधे प्रभाव के कारण अच्छे फलों की आशा रखनी ही चाहिए।

नवांश में—जहाँ शनि नवांश लग्न से गोचर कर रहा है और दशम भाव को देखता है वहीं गुरु दशम भाव से गोचर करते हुए षष्ठम भाव तथा वहाँ बैठे षष्ठेश मंगल को देखता है। कर्क से प्रभावी गुरु पंचम भाव तथा पंचमेश को तो क्रमशः नवम और सप्तम दृष्टि से देखता ही है, वह लग्न को भी पंचम दृष्टि से देखता है।

दशमांश में—शनि नवम भाव से गोचर कर रहा है तथा छठे भाव को देख रहा है। फिर भाग्य स्थान में बैठा शनि षष्ठम भाव को व्यवसाय में सफलता के लिए आवश्यक प्रतियोगिता की इच्छा को मजबूती दे रहा है। गोचर का वक्री गुरु षष्ठम भाव में है तथा वह लग्नेश और दशमेश भी है। वह सिंह में बैठकर सप्तम दृष्टि से लग्नेश को देखता है। वक्री होने के कारण वह कर्क से भी प्रभावी है। वहाँ से गुरु लग्न को नवम दृष्टि से देख रहा है। इस प्रकार दशमांश कुण्डली के दोनों लक्ष्मी स्थान नवम तथा पंचम से क्रमशः गोचर के शनि और गुरु सम्बन्ध स्थापित करके न सिर्फ कुण्डली को सशक्त बना रहे हैं, बल्कि फल की दिशा और शुभता की ओर भी इंगित कर रहे हैं।

तृतीय चरण : दशानाथों का गोचर—आपको याद होगा कि लाभ के समय दशा बुध/गुरु और बुध की थी।

महादशा/प्रत्यन्तर्दशा नाथ बुध गोचर में मकर में वक्री है।

लग्न से—बुध मकर से षष्ठम भाव को देखता है। वक्री होकर धनु से अपना प्रभाव बनाते हुए वह दशमेश मंगल को भी देखता है।

चन्द्र लग्न से—बुध चन्द्र लग्न से दशम भाव को सीधी दृष्टि से देखता है।

नवांश—नवांश में गोचर का बुध किसी भी प्रकार से लग्न, षष्ठम या दशम भाव अथवा उनके स्वामियों को प्रभावित नहीं कर रहा है।

दशमांश—गोचर का बुध मकर राशि में है लेकिन वक्री होने के कारण धनु क़ो पूरी तरह प्रभावित करता है जो इस कुण्डली का दशम़ भाव है।

अन्तर्दशानाथ गुरु

लग्न से—हम गुरु का गोचर पहले ही देख चुके हैं जो हर प्रकार से लग्न, षष्ठम भाव, षष्ठमेश, दशम भाव तथा दशमेश को गोचर में पूरी तरह से प्रभावित करता है। इस प्रकार गुरु का गोचर मात्र जन्म कुण्डली में देखने से ही फल प्राप्ति की पूरी कहानी कह देता है।

चन्द्र लग्न, नवांश और दशमांश में गुरु का गोचर हम अच्छी तरह देख चुके हैं। सभी स्थान से गोचर काफी मजबूत दीखता है। इस प्रकार दशाओं को भी गोचर से पूरा-पूरा सहयोग मिलने के कारण जातक की प्रोन्नति हुई जो उसके लिए धन लाभ भी लेकर आई, भाग्योदय भी हुआ और यश लाभ तो हुआ ही।

तीसरा उदाहरण—जातक को 18-02-1984 को प्रोन्नति मिली तब दशा थी शुक्र/चन्द्र/शनि।

जन्म लग्न कुण्डली-9.9

नवांश कुण्डली 9.10

दशमांश कुण्डली 9.11

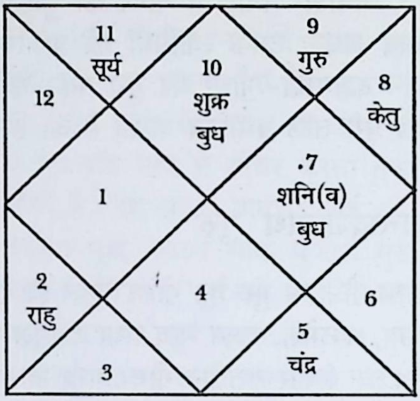

18.02.1984 की गोचर कुडली 9.12

प्रथम सूत्र–महादशा नाथ शुक्र

जन्म लग्न से–जन्म कुण्डली में शुक्र दशमेश होकर चतुर्थ भाव से दशम भाव और वहाँ बैठे चतुर्थेश मंगल को देखता है। इस प्रकार हम पाते हैं कि चतुर्थेश तथा दशमेश दो केन्द्रशों में वहुत मजबूत परिवर्तन योग बन रहा है। शुक्र की महादशा प्रोन्नति के लिए एकदम सही दिखती है।

चन्द्र-लग्न से–शुक्र अब तृतीयेश और अष्टमेश हो गया है तथा द्वितीय भाव में बैठा है। चन्द्र-लग्न से गुरु लग्नेश और दशमेश है। वह वक्री होकर धनु से भी प्रभावी है तथा शुक्र को पंचम दृष्टि से देख रहा है।

नवांश में–नवांश में शुक्र योगकारक है क्योंकि वह पंचमेश और दशमेश है। द्वादश भाव में बैठकर वह षष्ठम भाव को देख रहा है। नवांश कुण्डली का लग्नेश शनि दशम भाव में (शुक्र की ही राशि में) बैठकर, शुक्र को तृतीय दृष्टि से देखता है। अर्थात् दशमेश पर दशम भाव में बैठे ग्रह की दृष्टि पड़ रही है।

दशमांश में–यहाँ शुक्र नवमेश तथा द्वितीयेश होकर पंचम भाव में बैठा है। नवमेश का पंचम भाव में होना अत्यन्त शुभ योग है।

अन्तर्दशा नाथ चन्द्रमा

लग्न से–चन्द्रमा जन्म कुण्डली में सप्तमेश है। सप्तम भाव दशम भाव की छाया तो है ही, अतः यहाँ चन्द्रमा का सप्तमेश होना काफी महत्वपूर्ण हो गया है। चन्द्रमा तृतीय भाव में शनि के साथ वैठा है। शनि इस कुण्डली का लग्नेश है। इस प्रकार लग्नेश और सप्तमेश में अच्छा सम्बन्ध है।

चन्द्र लग्न से—यहाँ चन्द्रमा अत्यन्त शुभ पंचम भाव का स्वामी होकर एकादशेश तथा द्वादशेश शनि के साथ है। शनि की विशेषता देखिए। यह दशमेश गुरु के साथ सुन्दर परिवर्तन योग बना रहा है अर्थात् चन्द्रमा पर दशम भाव का प्रभाव तो है ही।

नवांश में—चन्द्रमा यहाँ सप्तमेश है किन्तु वह अष्टम भाव में बैठा है। उसे एक सुविधा अवश्य है कि उस पर अष्टमेश सूर्य की दृष्टि पड़ रही है। इस प्रकार वह मजबूत अष्टम भाव में है तथा कुछ भी अचानक घटित होने की संभावना बताता है।

दशमांश में—चन्द्रमा यहाँ एकादशेश है तथा चतुर्थ भाव में बैठकर दशम भाव और वहाँ बैठे दिग्बली अष्टमेश मंगल को पूर्ण दृष्टि से देख रहा है। यहाँ भी दशम, एकादश और अष्टम भावों का सुन्दर सम्बन्ध बन गया है। जातक को अचानक प्रोन्नति के द्वारा लाभ की संभावना दिखती है। चतुर्थ भाव भी चन्द्रमा के प्रभाव में है। अतः इस प्रोन्नति की संभावनाएँ स्थान परिवर्तन, वाहन सुख आदि भी प्रतीत होते हैं।

प्रत्यन्तर्दशा नाथ-शनि

लग्न से—शनि लग्नेश होकर तृतीय भाव में बैठा है। पाप ग्रह तृतीय भाव में बुरे फल नहीं देते, यह पराशर का वचन है। अतः शनि शक्तिशाली है।

चन्द्र लग्न से—शनि एकादशेश तथा द्वादशेश होकर चन्द्र-लग्न में ही बैठा है तथा दशम दृष्टि से दशम भाव को देख रहा है। हम पहले बता चुके हैं कि चन्द्र-लग्न से दशमेश गुरु का शनि के साथ बहुत शक्तिशाली परिवर्तन योग बन रहा है। अतः दशम भाव के स्पष्ट प्रभाव दीखते हैं।

नवांश में—शनि यहाँ लग्नेश है तथा दशम भाव में उच्च का होकर चामत्कारिक फल देने में सक्षम दीखता है। शनि दशमेश शुक्र को भी देखता है जो शनि का नैसर्गिक मित्र है।

दशमांश में—शनि षष्ठेश होकर षष्ठम भाव में वैठा है तथा बुध से सीधी दृष्टि विनिमय कर रहा है। बुध इस कुण्डली का लग्नेश भी है तथा दशमेश भी। उच्च भाव अथवा अपने भावों में शनि यूँ भी बहुत शक्तिशाली होता है—उस पर दशमेश और लग्नेश के साथ दृष्टि का आदान-प्रदान! याद रखिए यह दृष्टि विनिमय एक तरफा नहीं है अर्थात् जहाँ बुध शनि को शक्ति देता है वहीं शनि

दशमेश बुध को सीधी दृष्टि से देखकर जातक को प्रतिस्पर्द्धा में विजय मिलने की गर्व से घोषणा कर रहा है।

द्वितीय सूत्र : शनि/गुरु का गोचर

जन्म कुण्डली में–उच्च का शनि दशम भाव में गोचर कर रहा है तथा वहाँ से दशमेश शुक्र को सीधी दृष्टि से देखता है। वक्री शनि नवम भाव से भी प्रभावी है जहाँ से वह षष्ठम भाव में बैठे षष्ठमेश बुध को देखता है। शनि जन्म कुण्डली का लग्नेश तो है ही। अब देखिए, गुरु गोचर में क्या चमत्कार दिखा रहे हैं? गोचर में गुरु अपनी ही राशि धनु में बैठ कर शक्तिशाली है तथा वहाँ से वह षष्ठम भाव में बैठे षष्ठेश बुध को सप्तम दृष्टि से देखता है। गुरु चतुर्थ भाव में बैठे दशमेश शुक्र को भी पंचम दृष्टि से देख रहा है।

चन्द्र लग्न से–चन्द्रमा से अष्टम भाव में गोचर करते हुए शनि दशम भाव को देख रहा है। इसी प्रकार गुरु चन्द्रमा से दशम भाव में गोचर कर रहा है। हमने पहले देखा है, मन्त्रेश्वर महाराज ने चन्द्रमा से दशम भाव में गोचर कर रहे गुरु की बेहद प्रशंसा की है। उन्होंने कहा है कि यह गोचर व्यावसायिक उन्नति में सहायक होता है।

नवांश में–गोचर का शनि दशम भाव से गोचर करता हुआ दशमेश को देखता है। गोचर का शनि उच्च का है ही। इस पर हम पहले भी विस्तार से चर्चा कर चुके हैं जब शनि की चर्चा प्रत्यंतर्दशा नाथ के रूप में तथा जन्म कुण्डली में गोचर करते हुए द्वितीय सूत्र की व्याख्या के क्रम में कर रहे थे।

दशमांश में–शनि द्वितीय भाव में गोचर कर रहा है। शनि की चर्चा पहले ही प्रत्यन्तर्दशानाथ के रूप में हम कर चुके हैं। गुरु चतुर्थ भाव में गोचर कर रहा है अतः दशम भाव को सीधी दृष्टि से देख रहा है। नवम दृष्टि से यही गुरु दशमेश को भी देख रहा है। इस प्रकार शनि और गुरु का गोचर बलशाली और फलदायक–दोनों प्रतीत हो रहा है।

तृतीय सूत्र : दशानाथों का गोचर : महादशानाथ

शुक्र लग्न से–गोचर का शुक्र लग्न में है। शुक्र दशमेश है और दशमेश का लग्न से सम्बन्ध व्यवसाय के लिए शुभ होता है।

चन्द्र लग्न से–शुक्र एकादश भाव में लग्नेश तथा दशमेश गुरु के ऊपर गोचर कर रहा है–अर्थात् नौकरी/व्यवसाय में लाभ की संभावनाएँ और बढ़ गई हैं।

नवांश में–लग्न वर्गोत्तम है इसलिए गोचर का दशमेश यहाँ भी लग्न में गोचर कर रहा है जो बहुत शुभ बात है।

दशमांश में–शुक्र पंचम भाव में दशमांश के शुक्र पर से ही गोचर कर रहा है जो महादशा नाथ है। शुक्र दशमांश का द्वितीयेश है। यह गोचर भी धन वृद्धि की पुष्टि करता है।

अन्तर्दशानाथ चन्द्रमा

(i) **लग्न से**–चन्द्रमा जन्म कुण्डली का सप्तमेश है तथा अष्टम भाव से गोचर कर रहा है। प्रायः एक दिन पहले ही चन्द्रमा सप्तम भाव से गोचर कर रहा था। प्रायः सप्ताह भर में यह चन्द्रमा दशम भाव में पहुँच जाएगा, जिस क्रम में यह नवम भाव में पहुँच कर सप्तमेश चन्द्रमा को देखेगा तथा लग्नेश शनि को भी–शनि की दृष्टि भी इस पर पड़ेगी। दशम भाव में पहुँच कर इसे दशमेश शुक्र की दृष्टि प्राप्त होगी तथा यह भी दशमेश को देखेगा।

(ii) **चन्द्र लग्न से**–गोचर का चन्द्रमा लग्न से षष्ठम भाव में है तथा वक्री लग्नेश गुरु से (धनु से देखने पर) दृष्ट है। दो दिनों में यह चन्द्रमा कन्या में जाकर चन्द्र कुण्डली के चन्द्रमा को देखेगा। एक दिन पहले यही चन्द्रमा मकर में बैठ कर लग्नेश गुरु को देख रहा था।

(iii) **नवांश में**–चन्द्रमा नवांश के सप्तमेश चन्द्रमा से गोचर कर रहा है।

(iv) **दशमांश में**–चन्द्रमा बुध के ऊपर से गोचर कर रहा है जो दशमांश का लग्नेश तथा दशमेश है।

प्रत्यन्तर्दशानाथ शनि–शनि की विस्तृत चर्चा पहले की जा चुकी है कि यह शनि गोचर के फल देने में कैसे सहायक है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोचर के जो सिद्धान्त लिखे गए हैं वे प्रत्येक कसौटी पर प्रायः सही उतरते हैं। हमने उदाहरण संख्या 1 को एक सारिणी के रूप में रखा है जिससे बहुत सी बातें सांख्यिकी रूप में स्पष्ट होंगी।

सारिणी–9.1 (कुण्डली में संभावनाएँ)

कहाँ देखा	किसे सिदृयु से प्रभावित किया						
	लग्न	लग्नेश	छठाभाव	षष्ठेश	दशम भाव	दशमेश	टिप्पणी और निष्कर्ष
	महादशा नाथ गुरु का प्रभाव						
लग्न से	√ दृष्टि	√ युति	√ दृष्टि	√ युति	√ बैठे हैं	√ दृष्टि	गुरु 24 में 19 हिस्सों को प्रभावित कर रहा है जो करीव 75% है। गुरु षष्ठम भाव, षष्ठमेश तथा लग्नेश को सभी प्रकार से प्रभावित कर रहे हैं।
चन्द्र-लग्न	×	√ दृष्टि	√ दृष्टि	√ दृष्टि	×	√ दृष्टि	
नवांश	×	√ दृष्टि	√ षष्ठेश है	√ षष्ठेश है	×	√ दृष्टि	
दशमांश	×	√ दृष्टि	√ षष्ठेश है	√ षष्ठेश है	√ दृष्टि	√ दृष्टि	
	अन्तर्दशा नाथ सूर्य का प्रभाव						
लग्न से	×	√ दृष्टि	×	√ दृष्टि	√ दृष्टि	√ दशमेश	सूर्य 24 में 10 हिस्सों को प्रभावित कर रहा है। सूर्य 10वें भाव का स्वामी है। वह लग्नेश तथा दशमेश को 4 में तीन-तीन बार प्रभावित कर रहा है।
चन्द्र-लग्न से	×	√ युति	√ बैठे हैं	×	×	√ युति	
नवांश	√ बैठे हैं	×	×	×	×	√ दृष्टि	
दशमांश	×	√ युति	×	×	×	×	

	प्रत्यन्तर्दशा नाथ मंगल का प्रभाव						
लग्न से	√ दृष्टि	√ लग्नेश	√ षष्ठेश	√ षष्ठेश	√ बैठे हैं	√ दृष्टि	प्रत्यन्तर्दशा नाथ का असर 24 में 17 हिस्सों पर है जो करीब 70% है। अतः मंगल की प्रत्यन्तर दशा में फल प्राप्ति की सम्भावना काफ़ी अधिक हो जाती है।
चन्द्र-लग्न	×	√ दृष्टि	√ दृष्टि	√ दृष्टि	×	√ दृष्टि	
नवांश	×	√ दृष्टि	×	×	×	√ दृष्टि	
दशमांश	√ दृष्टि	√ युति	√ बैठे है	√ दृष्टि	×	√ दृष्टि	

सारिणी–9.2 (गुरु-शनि का गोचर)

कहाँ देखा	किसे सिदृयु से प्रभावित किया						
	लग्न	लग्नेश	छठाभाव	षष्ठेश	दशम	दशमेश	टिप्पणी और निष्कर्ष
	गोचर का शनि अन्तर्दशा नाथ सूर्य का प्रभाव						शनि तया गुरु दोनों 6 में से 4 स्यानों को प्रभावित करते हैं अर्थात् 68% से अधिक असर।
लग्न से	×	√ दृष्टि	√ दृष्टि	√ दृष्टि	√ दृष्टि	×	
	गोचर का गुरु						
	×	√ दृष्टि	√ बैठे हैं	√ दृष्टि	√ दृष्टि	×	

सारिणी–9.3 (कुण्डली में संभावनाएँ)

गोचर के महादशा/अन्तर्दशा/प्रत्यन्तर्दशा नाथों का लग्न/लग्नेश, षष्ठम भाव/षष्ठेश, दशम भाव/दशमेश पर प्रभाव

कहाँ देखा	किसे देखा						
	लग्न	लग्नेश	छठाभाव	षष्ठेश	दशम	दशमेश	टिप्पणी और निष्कर्ष
	महादशा नाथ गुरु						
लग्न से	×	√ दृष्टि	√ युति	√ दृष्टि	√ दृष्टि	×	गुरु का प्रभाव 24 में से ग्यारह स्थानों में दिखता है। यह 50% से भी कम है। ताज्जुव है कि चन्द्र लग्न से गुरु का प्रभाव कुछ नहीं है।
चन्द्र-लग्न	×	×	×	×	×	×	
नवांश	√ दृष्टि	×	√ षष्ठेश	√ षष्ठेश	×	√ युति	
दशमांश	√ दृष्टि	×	√ षष्ठेश	√ षष्ठेश	×	×	
	अन्तर्दशानाथ सूर्य						
लग्न	√ दृष्टि	×	×	×	√ दशमेश	√ दशमेश	सूर्य का प्रभाव 24 में से 6 स्थानों में दिखता है जो मात्र 25% है। अतः बहुत कमजोर है। यहाँ भी चन्द्र लग्न से सूर्य का गोचर निष्फल है।
चन्द्र-लग्न	×	×	×	×	×	×	
नवांश	×	√ युति	×	√ दृष्टि	×	×	
दशमांश	×	×	×	√ युति	×	×	
	प्रत्यन्तर्दशा नाथ मंगल का प्रभाव						
लग्न	√ लग्नेश	√ लग्नेश	√ षष्ठेश	√ षष्ठेश	×	√ दृष्टि	प्रत्यन्तर्दशा नाथ मंगल के गोचर का प्रभाव 24 में से 14 स्थानों पर दिखता है। यह करीब 58% है जो ठीक-ठीक-सा है।
चन्द्र-लग्न	×	√ दृष्टि	√ दृष्टि	√ दृष्टि	×	√ दृष्टि	
नवांश	√ दृष्टि	×	×	×	√ बैठा है	×	
दशमांश	√ दृष्टि	√ दृष्टि	×	×	√ बैठा है	×	

अध्याय–10
वर्ग कुण्डलियों में गोचर *(ii)*

2. असाधारण नियमों के असाधारण प्रयोग

इस अध्याय के पहले तक तो हमने यह देखा है कि फल प्राप्ति के लिए गोचर के ग्रह किस प्रकार सहायक होते हैं। हमने गोचर के ग्रहों में महादशा/अन्तर्दशा/प्रत्यन्तर्दशा के अलावा शनि गुरु के प्रभाव तथा महत्व को भी देखा है। साथ ही, पहले हम कारकों के गोचर भी देख चुके हैं। आगे जब हम सूक्ष्मतर विवेचना की ओर बढ़े तो हमने वर्गों में भी गोचर देखा। यह भी देखा कि विशेष कार्यों के लिए विशिष्ट वर्ग देखने पड़ते हैं अर्थात् ग्रहों के गोचर का असर विशेष वर्गों में देखने से भाव सिद्धि काल का पता चलता है। अब तक हम गोचर के ग्रहों को सीधे जन्म कुण्डली, चन्द्र कुण्डली या वर्ग कुण्डली में लगा कर फल देखते थे। अब गंभीर और सूक्ष्मतम विवेचना भी हो जाए।

सूक्ष्मतम विवेचना के लिए हम गोचर के ग्रहों को अब और करीब से देखेंगे। सूक्ष्मतम गोचर का सिद्धान्त है कि किसी कार्य विशेष के लिए कारक ग्रह गोचर में होते हुए जिस नवांश में होगा वह जातक की नवांश कुण्डली के उस भाव विशेष में भी देखेंगे जो उस कार्य के लिए नियत किया गया है। जातक की उस वर्ग कुण्डली में गोचर के ग्रह को भी उसी वर्ग में ले जाकर देखेंगे। बात बहुत उलझने वाली लगने लगी है इसलिए हम इसे उदाहरण से समझेंगे। मान लीजिए, हमें व्यवसाय या नौकरी के बारे में देखना है। इसके लिए दशमेश महत्वपूर्ण हो जाता है। जन्म कुण्डली का दशमेश देखिए। उदाहरण कुण्डली 10.1 में यह गुरु है। अब जिस दिन का गोचर देखना है उस दिन के गुरु का नवांश देखिए। मान लीजिए, हमें 28.12.94 का गोचर देखना है। उस दिन गुरु, वृश्चिक राशि, तुला

नवांश और तुला दशमांश में था। उस जातक की नवांश कुण्डली में दशम भाव, दशमेश या षष्ठम भाव/ षष्ठेश से गोचर के नवांश में तुला में गए गुरु के साथ सम्बन्ध होने से भाव सिद्धि की संभावना बढ़ जाती है। इसी बात की पुष्टि के लिए जातक की जन्म कुण्डली के दशमेश यानी गुरु का गोचर के समय का दशमांश देखिए। यहाँ भी गुरु तुला में बैठा है। इसे जातक के दशमांश के दशम भाव/दशमेश या षष्ठम भाव/षष्ठेश को प्रभावित करना चाहिए।

पिछले अध्याय में हमने भारतीय दूर-संचार विभाग में 28-12-1994 को हुई प्रोन्नतियों के दस मामलों के बारे में चर्चा की थी। उस तारीख को गोचर के सभी ग्रहों का नवांश और दशमांश बना लेते हैं। इनमें से ही कोई न कोई ग्रह इन दसों जातकों के लिए दशमेश होगा।

सारिणी–10.1

दिनांक 28.12.94 को ग्रहों की स्थिति, उनके नवांश तथा दशमांश

	राशि	डिग्री	नवांश	दशमांश
सूर्य	धनु	$12^0 43'$	कर्क	मेष
चन्द्र	तुला	$17^0 28'$	मीन	मीन
मंगल	सिंह	$8^0 42'$	मिथुन	तुला
बुध	धनु	$20^0 55'$	तुला	मिथुन
गुरु	वृश्चिक	$10^0 14'$	तुला	तुला
शुक्र	तुला	$26^0 57'$	मिथुन	मिथुन
शनि	कुंभ	$13^0 55'$	कुंभ	मिथुन
राहु	तुला	$19^0 43'$	मीन	मेष
केतु	मेष	$19^0 43'$	कन्या	तुला

इसे एक उदाहरण से देखिए। हमने उन्हीं दस कुण्डलियों में से एक आगे दिखाई है।

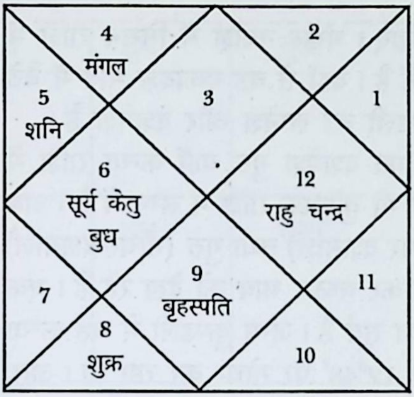

जन्म कुण्डली 10.1

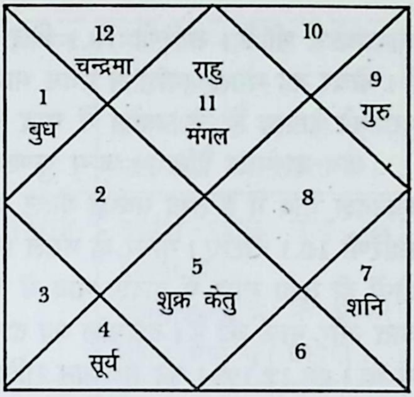

नवांश 10.2

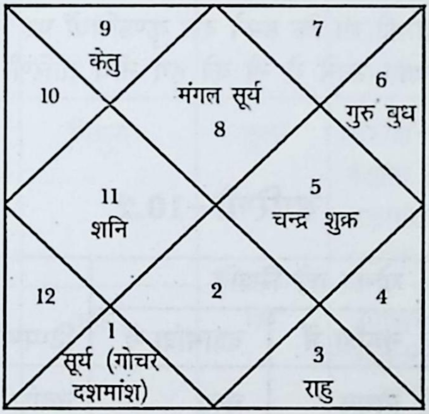

दशमांश 10.3

जन्म कुण्डली का दशमेश गुरु है। दिनांक 38-12-1994 को गुरु वृश्चिक राशि में $10^0 14'$ पर था अर्थात् तुला नवांश में और तुला दशमांश में ही था। जन्म कुण्डली का षष्ठेश मंगल है। दिनांक 28-12-1994 को मंगल सिंह राशि में $8^0 42'$ पर, अर्थात् मिथुन नवांश और तुला दशमांश में था।

अब नवांश कुण्डली देखते हैं। इसका दशमेश मंगल लग्न में बैठा है। सिद्धान्त के अनुसार गोचर के गुरु की नवमांश में जो स्थिति है उस स्थान से उसे नवांश कुण्डली के दशम भाव या दशमेश से सम्बन्ध बनाना चाहिए। सारिणी 10.1 देखें। गुरु (गोचर-नवांश) तुला राशि में है। यह नवांश कुण्डली के नवम भाव में बैठकर लग्न में बैठे दशमेश मंगल को देख रहा है। मंगल जन्म कुण्डली

का षष्ठेश भी है। सारिणी 10.1 फिर देखिए। मंगल नवांश में मिथुन राशि में है। गोचर का मंगल नवांश में पंचम भाव में है। वहाँ से वह एकादश भाव में बैठे गुरु को देखता है जो नवांश में चन्द्र कुण्डली का लग्नेश और दशमेश है।

अब दशमांश देखिए। जन्म कुण्डली का दशमेश गुरु यहाँ कन्या राशि में एकादश भाव में है तथा षष्ठेश मंगल यहाँ भी वृश्चिक राशि में लग्न में है। अब सारिणी 10.1 देखिए। गोचर के मंगल (गोचर दशमांश) तथा गुरु (गोचर-दशमांश) दोनों ही तुला राशि में द्वादश भाव में बैठ कर षष्ठम भाव को देख रहे हैं। एक बात और मार्के की है। दशमांश का दशमेश सूर्य है। जन्म कुण्डली में यह कन्या में था। 28.12.1994 को सूर्य धनु राशि में $12^{0}48'$ पर गोचर कर रहा था। अतः यह दशमांश में मेष राशि में था। दशमांश कुण्डली के षष्ठम भाव में है यह! इस प्रकार हम देखते हैं कि यह सिद्धान्त कार्य करता है।

हमने पहले चर्चा की थी कि हमने दस कुण्डलियों पर गोचर की सूक्ष्म वृत्ति का अध्ययन किया था। उनमें से नौ को हम नीचे सारिणी 10.2 में दिखा रहे हैं।

सारिणी–10.2

कुण्डली	दशमेश	गोचर की स्थिति		टिप्पणी/निष्कर्ष
		नवांश में	दशमांश में	
1	मंगल	मिथुन	तुला	नवांश में जन्म कुण्डली का षष्ठेश मंगल जन्म कुण्डली के दशमेश गुरु को देखता है। (दशमांश में मंगल दशमांश के षष्ठम भाव तथा दशमेश को देखता है)।
2	बुध	मिथुन	मिथुन	नवांश में–छठे भाव के स्वामी को देखता है। दशमांश में–दशम भाव को देखता है।

3	बुध	तुला	मिथुन	नवांश में–दशमेश है षष्ठेश को देखता है। दशमांश–में दशमेश तथा छठे भाव को देखता है।
4	बुध	तुला	मिथुन	नवांश–दशम भाव को देखता है। दशमांश–कर्क में आकर दशम भाव को देखेगा।
5	गुरु	तुला	तुला	नवांश-लग्न तथा लग्नेश दोनों को देखता है। दशमांश–दशमेश तथा षष्ठम भाव को देखता है।
6	मंगल	मिथुन	तुला	नवांश–दशम भाव को देखता है। दशमांश–दशम भाव तथा षष्ठम भाव को देखता है।
7	सूर्य	कर्क	मेष	नवांश–छठे घर में है। दशमांश–षष्ठेश है, लग्नेश तथा दशमेश को देखता है।
8	शुक्र	मिथुन	मिथुन	नवांश–षष्ठेश को देखता है। दशमांश–षष्ठेश को देखता है तथा अगले तीन दिनों में दशम भाव को देखेगा।
9	शनि	कुंभ	मिथुन	नवांश–दशम भाव को देखता है। दशमांश–षष्ठेश है, लग्न तथा लग्नेश को देखता है।

हम कुछ बातें जो देखते हैं वे निम्नांकित हैं–

(i) सूक्ष्म गोचर का सिद्धान्त हमने नौ कुण्डलियों पर परीक्षण करके सही पाया है–सिर्फ एक कुण्डली की विस्तृत चर्चा की गई है, अन्य के बारे में फल लिख दिए गए हैं। स्पष्ट रूप से कुण्डली क़ा दशमेश जब गोचर कर रहा होता है तो फल प्राप्ति के काल में उसके नवांश दशमांश क्रमशः नवांश कुण्डली तथा दशमांश कुण्डली के छठे भाव/षष्ठेश तथा/अथवा दशम भाव/दशमेश को अवश्य प्रभावित करते हैं।

अभी हमने मात्र व्यवसाय/ नौकरी पर चर्चा की है इसलिए नवांश और दशमांश पर ध्यान दिया है। किन्तु अन्य कार्यों के लिए अलग-अलग वर्ग कुण्डलियाँ महत्वपूर्ण हो जाती हैं। पराशर ऋषि ने विंशोपक बल की चर्चा करते हुए बताया है कि सप्तवर्गों में यदि देखे जाएँ तो 20 में 5 हिस्सा जन्म कुण्डली का होगा। नवांश कुण्डली की भाग़ीदारी 4.5 हैं। इस प्रकार यही दो कुण्डलियाँ मिलकर 20 का करीब-करीब आधा हिस्सा पूरा कर देती हैं। दशमांश का हिस्सा बीस में एक है। अतः यह भी जोड़ने से (लग्न+नवांश+दशमांश = 5+4+5+1 = 11.5/20) लगता है कि इन तीन कुण्डलियों पर आधारित विवेचना सामान्यतः सही फल देगी क्योंकि इनका योग 50% से अधिक हो जाता है।

इसी प्रकार सन्तानोत्पत्ति का मामला हो तो हम जन्म कुण्डली, नवांश तथा सप्तांश देखेंगे। सन्तान सुख के लिए हम पंचमेश पर ध्यान देंगे। इस पंचमेश को पंचम भाव/पंचमेश तथा/अथवा नवम भाव/नवमेश से नवांश तथा सप्तांश में सम्बन्ध बनाना चाहिए। आइए, हम जवाहर लाल जी की कुण्डली से उनकी पुत्री प्राप्ति की घटना सूक्ष्मतम गोचर के माध्यम से जाँचते हैं।

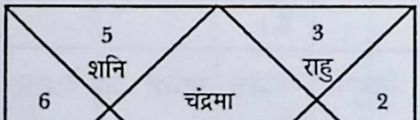

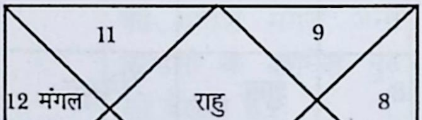

जवाहरलाल जी की जन्म कुण्डली 10.4 जवाहरलाल जी–नवांश 10.5

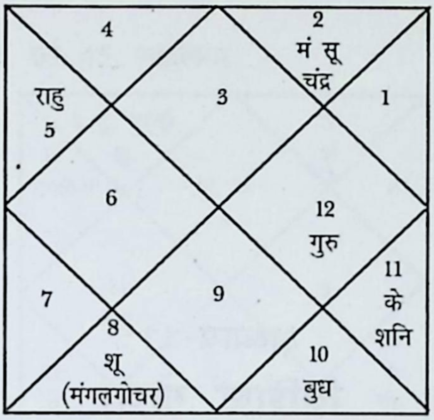

जवाहरलाल जी की सप्तांश कुण्डली 10.6

जब इन्हें कन्या रत्न की प्राप्ति हुई तो उनकी जन्मकुण्डली का पंचमेश मंगल गोचर में सिंह राशि में $15^{0}12'$ पर था। अर्थात् नवांश में वर्गोत्तम होकर सिंह में ही रहा और सप्तांश में वह वृश्चिक राशि में था।

नवांश देखिए। गोचर का मंगल नवांश में जाकर सिंह राशि में है तथा वहाँ से वह बुध और मंगल को अष्टम दृष्टि से देख रहा है। बुध नवांश कुण्डली का नवमेश है तथा मंगल जन्म कुण्डली का पंचमेश। नवांश कुण्डली में मंगल गुरु पर गोचर कर रहा है जो जन्म कुण्डली का नवमेश है।

सप्तांश देखिए—गोचर का मंगल षष्ठम भाव में वृश्चिक राशि में बैठकर सप्तांश के मंगल (जन्म कुण्डली का पंचमेश) को सप्तम दृष्टि से देखता है तथा सप्तांश के पंचमेश शुक्र से गोचर कर रहा है। मंगल चौथी दृष्टि से सप्तांश के नवम भाव को तथा वहाँ बैठे नवमेश शनि को भी देखकर सूक्ष्म गोचर की सारी शर्तें पूरी कर रहा है।

यदि कुण्डली सही हो तो सूक्ष्मतम गोचर का सिद्धान्त अवश्य प्रभावी होता है। यह विद्या हमारे ज्योतिष गुरु माननीय श्री के. एन. राव द्वारा काफी पहले प्रदत्त हुई पर शायद सही दशा और उचित गोचर के अभाव में आज तक सुप्त पड़ी थी—आज यह अध्याय लिखने के बाद लगता है कि श्री राव को इसे छपा देखकर बहुत सन्तोष हुआ होगा।

अध्याय-11
विशिष्ट गोचर

गोचर के इस अध्याय में हम कुछ विशिष्ट गोचरों का अध्ययन करेंगे। इस अध्ययन से पूर्व एक बार फिर यह दोहराना उचित होगा कि गोचर स्वयं किसी प्रकार के फल नहीं दे सकते हैं। फल तो कुण्डली में निहित होते हैं जो योगों द्वारा सँवारे जाते हैं और दशा द्वारा जातक के लिए तैयार करके गोचर के सुपुर्द कर दिये जाते हैं। इस तैयार फल को गोचर जातक को दे देता है।

विशिष्ट गोचरों में हम सबसे पहले शनि के गोचर से जुड़े दो फल देखेंगे।

शनि, बृहस्पति और दशम/दशमेश के सम्बन्ध

सबसे पहले नियम को समझ लें। नियम यह है–"शनि अपने 'गोचर में जब भी दशम भाव या दशमेश और जन्मकालीन बृहस्पति के साथ इकट्ठे PAC संबंध स्थापित करता है तब जातक के व्यवसाय में बदलाव आता है।"

यह बदलाव आमतौर पर सुखद होता है। अपवाद स्वरूप शनि जब अष्टम भाव में गोचर करते हुए दशम भाव को देखे और बृहस्पति भी उस कुण्डली के दुःस्थानों (6, 8, 12) का स्वामी हो तो नतीजा खराब हो सकता है। इस नियम का शोध भारतीय विद्या भवन के वरिष्ठ ज्योतिषी श्री शिवराज शर्मा ने किया है जो जनरफ ऑफ एस्ट्रॉलाजी के मार्च-2001 अंक में छपा है।

अब इसके कुछ दृष्टान्तों को देखते हैं

दृष्टान्त 1

25-12-1924, 05 45, ग्वालियर

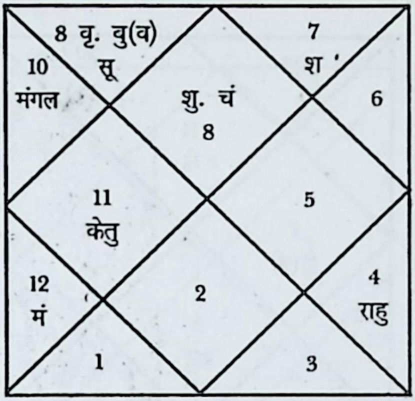

जब इस कुण्डली में शनि मार्च, 1998 में मीन में गोचर कर रहा था जो कुण्डली का पंचम भाव है। यहाँ से शनि दशमेश सूर्य और बृहस्पति को दसवीं दृष्टि से देखता है। उचित दशा होने के कारण इस काल में जातक भारत के प्रधानमंत्री बने।

दृष्टान्त 2

19 जुलाई, 1925

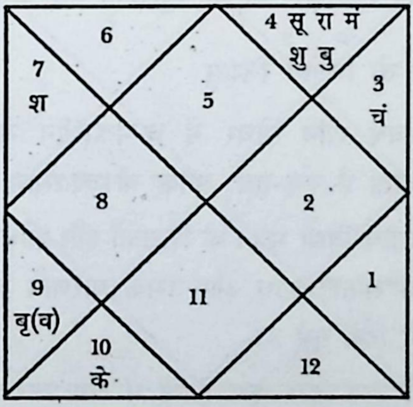

यह कुण्डली राजा दिनेश सिंह की है। 1967 में शनि मीन में था। मीन राशि से शनि ने दशम भाव और बृहस्पति दोनों को दृष्टि दी। राजा साहब केबिनेट स्तर के मन्त्री बने।

दृष्टान्त 3

11-10-42 इलाहाबाद

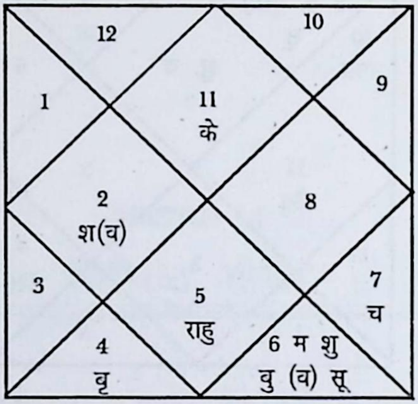

1999 तक भारी कर्जों में डूबे इस जातक को शनि ने वृषभ में आते ही उबार लिया। यह अमिताभ बच्चन की कुण्डली है। वृषभ के शनि ने बृहस्पति को और दशम भाव को दृष्टि दी और इस जातक का भाग्योदय कर दिया। शनि अपने गोचर में जब दशम/दशमेश और बृहस्पति के साथ इक्ठे सम्बन्ध (PAC) स्थापित करता है तो एक बदलाव की शुरुआत कर देता है।

शनि-सूर्य सम्बन्ध के विशेष नियम

नियम-"जब-जब शनि गोचर में जन्मकालीन सूर्य के साथ सम्बन्ध (PAC) स्थापित करता है तब-तब जातक के व्यवसाय में उन्नति होती है।"

यह नियम भारतीय विद्या भवन के शिक्षकों और शोधकर्ताओं को राव साहब ने दिया था। इसका सफल शोध और उसके परिणाम जून, 2000 के जनरल ऑफ एस्ट्रोलाजी में दिये गये हैं।

इस नियम को अब कुछ कुण्डलियों में लगा कर दिखाया जा रहा है।

1. 1981 के जून में जब शनि कन्या राशि में गोचर कर रहा था तब इनकी नौकरी लगी। शनि की दसवीं दृष्टि सूर्य पर है।

दृष्टान्त 1

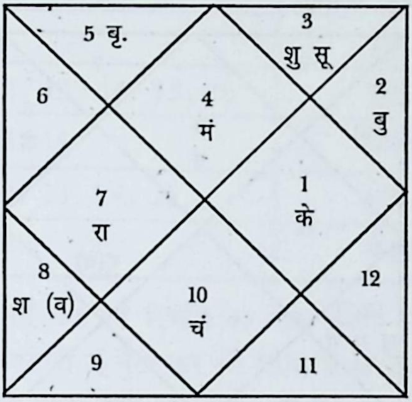

2. दिसम्बर 1989 में जब शनि धनु में गोचर कर रहा था और सूर्य को सातवीं दृष्टि से प्रभावित कर रहा था, इनकी पदोन्नति हुई।

दृष्टान्त 2

14-5-76, 13.00, दिल्ली

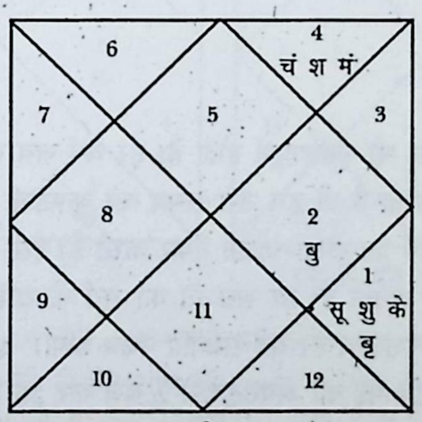

1 जून 1993 जब शनि गोचर में कुम्भ में था तो इस जातक को नौकरी मिली। शनि सूर्य को तीसरी दृष्टि से देख रहा था।

2. 1999 में जब शनि मेष में सूर्य के ऊपर आया तो जातक ने नौकरी बदल ली।

दृष्टान्त 3

16.4.69, 2045 कमनोर

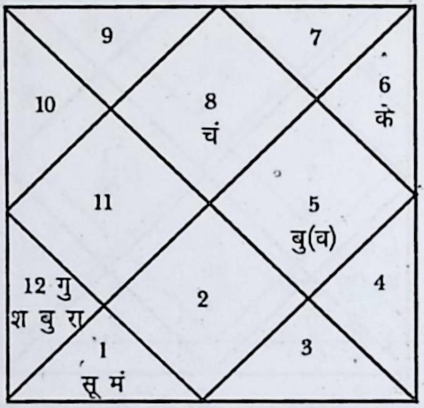

1 जुलाई, 1994 में अस्थाई नौकरी मिली। शनि गोचर में कुम्भ में थे और सूर्य को तीसरी दृष्टि से देख रहे थे।

2. फरवरी, 2000 में नौकरी पक्की हो गई। शनि तब सूर्य पर मेष में गोचर कर रहे थे।

सूर्य का गोचर

सूर्य का गोचर भी महत्त्वपूर्ण होता है। हर वर्ष जब सूर्य अपने जन्मकालीन अंशों पर गोचर करता है तो हम उस समय की कुण्डली से वर्ष फल बना कर जातक का एक वर्ष का लेखा-जोखा तैयार करते हैं। इसी सूर्य का हर माह राशि प्रवेश संक्रांति का जनक है। हर संक्रांति को सूर्य के राशि प्रवेश के समय देखें कि चन्द्रमा किस नक्षत्र में है। यह संक्रांति नक्षत्र होगा। इस वर्ष; 2004 में, सूर्य ने वृषभ राशि में 14 मई को अपराह्न में 2 बज कर 56 मिनट पर प्रवेश किया। इस समय चंद्रमा उत्तर भाद्रपद, अर्थात् संक्रांति नक्षत्र, से जातक के जन्म नक्षत्र तक गिने नीचे दी गई तालिका के अनुसार इसका फल मिलेगा।

1. संक्रांति नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गिनें 2. संक्रांति नक्षत्र 1 है।		
अ	2, 3, 4, 5, 6, 7	धन, यश लाभ
आ	9, 10	दुख, नुकसान
इ	11, 12, 13, 14, 15, 16	सुख समृद्धि
ई	17, 18, 19	कठिनाइयाँ
उ	21, 22, 23, 24, 25	धन, सुख
ऊ	26, 27	बेकार यात्रा

संक्रांति के समय की यह स्थिति का एक प्रयोग अष्टक वर्ग में संक्रांति के ग्रहों को जन्म कुण्डली में बैठा कर भी किया जाता है। यहाँ पर एक कुंडली और उसके सर्वाष्टक बिन्दु दिये गये हैं।

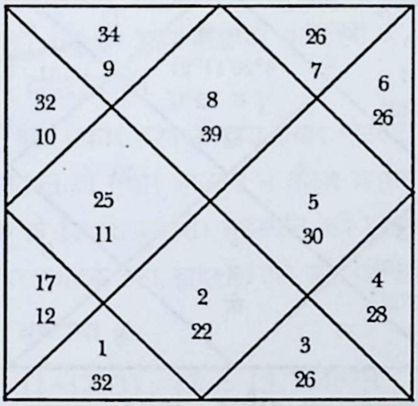

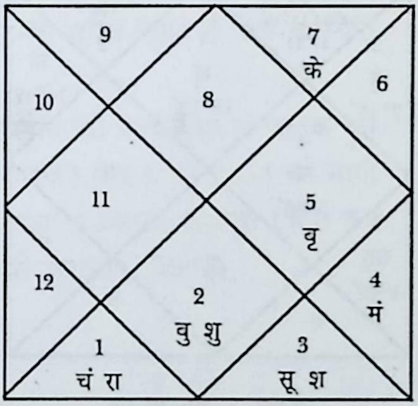

ग्रह स्थिति 14 जून 2004

मिथुन संक्रांति 14 जून, 2004 को रात्रि में 9 बज कर 33 मिनट में हुई है। उस समय ग्रहों की स्थिति साथ ही लिख दी गयी हैं। सभी नौ ग्रह जिन राशियों में गोचर कर रहे हैं, उन राशियों के सर्वाष्टक बिन्दु गिन लें संयोगवश 14.06.2004 को सारे ग्रह मेष तथा तुला के बीच ही स्थिति थे। मेष-32, वृषभ-22, मिथुन-26, कर्क-28, सिंह-30 और तुला-26 कुल जोड़ हुआ 1641 एक बात जान लें कि 112 का जोड़ सामान्य है। 112 से अधिक लाभ

और सुख बताते हैं तथा 112 से कम आपदा दिखाते हैं। इस जातक को 14 जून से 15 जुलाई तक सुख मिलेगा।

राहु-बृहस्पति का गोचर

नियम – ''जब-जब, राहु गोचर में जन्म कुंडली में स्थित बृहस्पति पर आता है तब-तब अचानक बृहस्पति के स्वामित्व के भावों के अशुभ फल सामने आने की सम्भावना हो जाती है। यही नतीजा बृहस्पति के राहु पर गोचर करने के समय भी मिलता है।''

राहु/केतु एक अक्ष है और गोचर में बृहस्पति से सम्बन्ध (PAC) होने पर एक से फल मिलते हैं।

दृष्टान्त 1

12 जून, 1942, 01.32, 89E35, 22N48

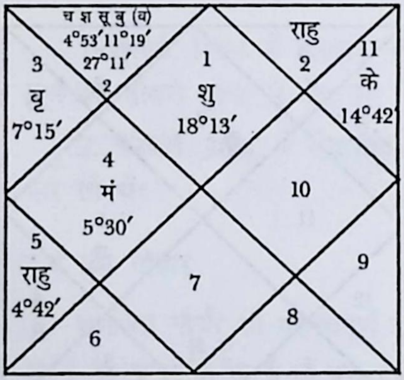

दशा : श/शु/वृ

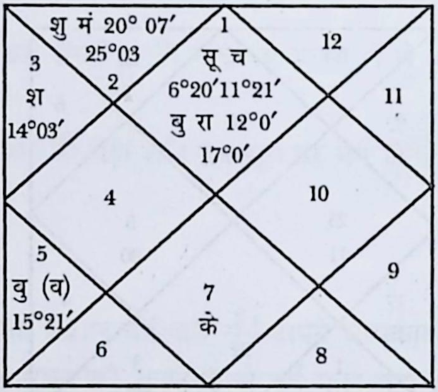

गोचर 20 अप्रैल, 2004

20 अप्रैल, 2004 को इस जातक के जीवन में एक बड़ा ही अप्रत्याशित और चौंकाने वाला बदलाव आया। जन्म कुण्डली और गोचर कुण्डली ऊपर दी गई है। उस दिन वक्री बृहस्पति जन्मस्थ राहु पर सिंह में गोचर कर रहे हैं। बृहस्पति इस कुण्डली में द्वादश भाव के स्वामी है। द्वादश भाव अस्पताल भी दर्शाता है। यूँ भी कहा जा सकता है कि जिस स्थान में रहने से किसी भी प्रकार से सामान्य कार्यकलापों पर कोई रोक लगे, वह सब द्वादश भाव का प्रताप है। जेल, अस्पताल, आश्रम जैसे सभी स्थान, जहाँ रहने-सहने पर अंकुश रहता है, 12वें भाव से संबंध रखते हैं।

सिंह राशि में जब गोचर के बृहस्पति जन्म कुण्डली के राहु के, जो 14° 42′ पर स्थित है, नजदीक पहुँचे (1° के अंदर) भाव ने अपना फरमान सुना कर इन को अस्पताल की राह दिखा दी।

गोचर में राहु, इस समय मेष में 17° पर थे। मेष में जातक का शुक्र 18° 12′ पर है और यह शुक्र द्वितीयेश और सप्तमेश है। दोनों स्थानों के मारकत्व के कारण जातक के अस्पताल जाने के रास्ते सरल और सुगम करने में शुक्र का योगदान राहु से प्राप्त होगा। सूर्य जन्म कुण्डली का पंचमेश है तथा राहु जन्म कुण्डली में सिंह राशि में स्थित है अत: राहु के प्रभाव सूर्य पर भी हैं। सूर्य स्वयं राहु के साथ मेष में गोचर कर रहे थे। 19 अप्रैल को जब राहु ने सूर्य को ग्रह में ग्रसित किया तो जातक एम्बुलेन्स बुलाने पर मजबूर हो गया।

गोचर दशा की बनायी पोटली को ही आप तक पहुँचाता है। इस समय जातक की दशा थी, शनि, शुक्र और बृहस्पति। शनि और शुक्र आपस में द्विर्द्वादश है। शनि और शुक्र की आपसी दशा के परिणाम वैसे भी सुखद नहीं होते। बृहस्पति जो प्रत्यन्तरदशानाथ हैं, सिंह में गोचर कर रहे हैं। जन्म कुण्डली में यहाँ राहु हैं। बृहस्पति को कुण्डली में अष्टमेश मंगल देखते हैं तथा बृहस्पति स्वयं द्वादशेश हैं।

इस प्रकार दशाओं द्वारा तैयार पोटली बृहस्पति की अन्तरदशा में जातक को अस्पताल ले गयी। डाक्टरों ने कैंसर बताया। बृहस्पति जब 5 मई 2004 को मार्गी हुआ तो स्थिति सुधरी। बृहस्पति की प्रत्यन्तर दशा 5 अगस्त को पूरी होगी। तब जाकर जातक को द्वादशेश के बुरे परिणामों से छुटकारा मिलेगा।

दृष्टान्त 2

11–12–31, 17 : 13 जबलपुर

अब एक दूसरा उदाहरण देखें। इस कुण्डली में बृहस्पति अष्टमेश है और वक्री है। यह बृहस्पति 29°44′ पर राश्यान्त में भी है।

जातक ने जनवरी, 1990 में अपने साठवें वर्ष में प्रवेश किया। 9 जनवरी, 1990 को केतु कर्क राशि में गोचर कर रहे थे। जातक की कुण्डली में बृहस्पति कर्क में है। केतु का बृहस्पति पर गोचर बृहस्पति के अष्टम भाव के स्वामित्व को उजागर करने में सहायक हुआ। इसी समय गोचर में राहु लग्नेश शुक्र के साथ–साथ थे।

जातक की दशा थी–बृहस्पति/सूर्य/सूर्य। महादशानाथ बृहस्पति जातक के अष्टमेश हैं तथा राश्यान्त में हैं। बृहस्पति अष्टम से अष्टम अर्थात् तृतीय भाव में हैं। गोचर में केतु ने इस भाव में आकर बृहस्पति को मारकत्व प्रदान कर दिया।

अन्तरदशा और प्रत्यन्तर दशा भी सूर्य की थी। सूर्य जन्म कुंडली में सप्तम भाव में है और 9 जनवरी को धनु अर्थात् अष्टम भाव में गोचर कर रहे थे।

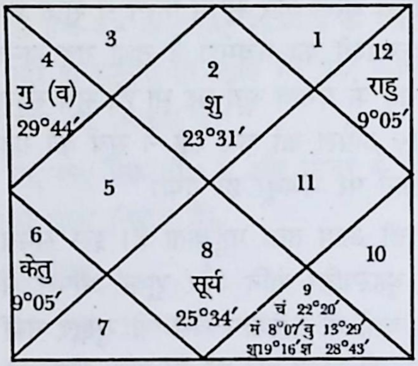

दशा : बृ/सू/च

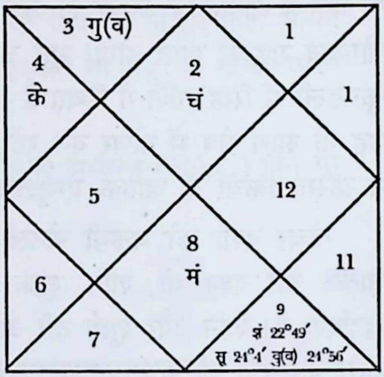

गोचर 9–1–90

जातक की मृत्यु 9 जनवरी 1990 को हुई। दशा ने अष्टम भाव को उभारा और केतु में अष्टमेश बृहस्पति के साथ मिलकर जातक को महाप्रयाण की राह दिखा दी।

बृहस्पति–राहु–केतु की गोचर वश मुलाकात काफी फेरबदल करती है। बृहस्पति का वक्री होना, सूर्य/चंद्र का ग्रसित होना और गोचर में इनकी अंशों तथा कला में निकट होना घटना को साकार कर देता है।

❑

अध्याय-12

सर्वतोभद्र चक्र

सर्वतोभद्र यानी वह जो चारों ओर से एक-सा हो। शास्त्रों में 64 कोष्ठकों, 81 कोष्ठकों और 144 कोष्ठकों के सर्वतोभद्र चक्र की चर्चा क्रमशः खंड, अखंड तथा खंडाखंड नाम से की गई है। इनमें अखंड सर्वतोभद्र चक्र 81 कोष्ठकों का है जो सामान्यतः सर्वमान्य है। इस अध्याय में गोचर फल की सूक्ष्म विवेचना के लिए अखंड सर्वतोभद्र चक्र की चर्चा ब्रह्मयामल ग्रन्थ के वर्णन के अनुसार की जा रही है।

गोचर का प्रयोग इस चक्र पर करके ग्रहों के प्रभाव को सूक्ष्म रूप से जाना जा सकता है। इस चक्र का स्वरूप और प्रयोग इस प्रकार से है–

स्वरूप–81 कोष्ठकों में नीचे दिए गए पाँच तत्वों का प्रयोग किया जाता है–

(i) स्वर,
(ii) नक्षत्र,
(iii) नामाक्षर (वर्ण)
(iv) राशि तथा
(v) तिथि और वार।

सर्वतोभद्र चक्र बनाकर इन तत्वों पर गोचर के ग्रहों का प्रभाव देखा जा सकता है। इनके विन्यास का क्रम इस प्रकार है–

स्वर–स्वरों का विन्यास ईशान कोण से शुरू हो जाता है। अ, आ, इ, ई ईशान (उत्तर-पूर्व का कोना) से शुरू करके क्रमशः आग्नेय, नैऋत्य तथा वायव्य कोणों में लिखे जाते हैं। ये स्वर सबसे बाहरी कोनों पर लिखे जाते हैं। ठीक बाद

वाले ख़ानों में इसी क्रम से उ, ऊ, ऋ, ॠ रखे गए हैं। इससे बाद वाले ख़ाने में उसी क्रम से लृ, लॄ, ए, ऐ रखे गए और चौथे खाने में आए बाकी के चार स्वर–ओ, औ, अं, अः। इसको ठीक से समझने के लिए एक बार संलग्न चक्र को देख लें। ये स्वर चार आवृत्तियों के प्रदक्षिणा क्रम में लिखे गए हैं। ईशान कोण में इसे आवृत्तियों में देखेंगे तो पाएँगे कि अ सबसे बाहर की आवृत्ति में है और फिर उ, लृ और ओ क्रमशः अन्दर की आवृत्तियों में हैं। 16 स्वरों को इस प्रकार बैठाने के बाद अब बारी आती है नक्षत्रों की।

नक्षत्र–सर्वतोभद्र चक्र में 28 नक्षत्र प्रयुक्त होते हैं। अभिजित शामिल कर अट्ठाइस नक्षत्र बनते हैं। सबसे ऊपर की पंक्ति में कृतिका से शुरू कर प्रदक्षिणा क्रम में 28 नक्षत्रों को लिख दिया जाता है। इस प्रकार हर दिशा में सात-सात नक्षत्र हो जाते हैं।

वर्ण–20 अक्षर 'अ' से शुरू कर। (यह 'अ' नामाक्षर का बोधक है और ईशान कोण (ऊपरी बाएँ कोने) वाला 'अ' स्वर बोधक है। 'ल' तक अब लिखे जाते हैं। इनका क्रम स्पष्ट नहीं है। पूरब दिशा में अ, ब, क, ह, ड, दक्षिण दिशा में; म, ट, प, र, त, पश्चिम दिशा में न, य, भ, ज, ख तथा उत्तर दिशा में ग, स, द, च तथा ल वर्ण हुए। अब 12 अक्षर 'घ, ङ, छ' आदि पूर्व से शुरू कर चक्र के बाहर लिखे जाते हैं। घ, ङ और छ आर्द्रा नक्षत्र के सामने हुए। दक्षिण में हस्त नक्षत्र के सामने ष, ण, ठ; पश्चिम में पूर्व आषाढ़ नक्षत्र के आगे ध, फ और ढ़ और उत्तर दिशा में उत्तर भाद्रपद नक्षत्र के सामने थ, झ और ञ लिख दें। एक बार फिर संलग्न चक्र को देख लें और स्वर, नक्षत्र वर्ण के विन्यास को ठीक से बैठा लें।

राशि–वृष से शुरू करके राशियाँ तीन-तीन की संख्या में लिखी जाती हैं। वृष, मिथुन, कर्क ऊपर की तरफ पूर्व में और मकर, धनु, वृश्चिक नीचे की तरफ पश्चिम में हैं। सिंह, कन्या, तुला दक्षिण में दाईं तरफ और मेष, मीन, कुंभ बाईं तरफ उत्तर में रखी गई हैं।

तिथि और वार–अब तिथियाँ और वार क्रम से भरे जाते हैं। पूर्णा तिथि बीच में रखकर नन्दा, भद्रा, जया और रिक्ता पूर्व से प्रारंभ करके भर दी जाती हैं। इन्हीं तिथियों के साथ वे ग्रह भी लिखे जाते हैं जो वारों के द्योतक हैं। यह हुआ सर्वतोभद्र चक्र का खाका।

अब सर्वतोभद्र चक्र को व्यवहार में लाने के नियमों को पूर्ण रूप से समझते हैं।

नियम–1. सूर्य, मंगल, शनि और केतु पाप ग्रह हैं। बुध पाप ग्रहों के साथ पापी हो जाता है। क्षीण चन्द्र भी पाप ग्रह हैं।

नियम–2. ग्रहों की गतियाँ क्रमशः शीघ्र, सम और वक्री होती हैं। उसी प्रकार ग्रहों की दृष्टियाँ भी तीन प्रकार की ही होती हैं

(i) वाम अर्थात् बाईं ओर

(ii) सन्मुख तथा

(iii) दक्षिण अर्थात् दाहिनी ओर।

सम या सामान्य गति वाले ग्रह सिर्फ सन्मुख दृष्टि से वेध करते हैं। सन्मुख दृष्टि में सिर्फ नक्षत्र वेध होता है। इसे एक उदाहरण से समझते हैं। कोई ग्रह, जैसे बृहस्पति, 1 नवम्बर, 2001 को पुनर्वसु नक्षत्र में हैं। सर्वतोभद्र चक्र में पुनर्वसु पूरब दिशा में दिखाया गया है। यह सन्मुख दृष्टि से 'मूल' नक्षत्र का वेध करेगा। किन्तु बृहस्पति किसी वर्ण, स्वर आदि का वेध नहीं करेगा क्योंकि उस दिन वे सम गति से चल रहे हैं।

अभी हमने बताया कि गुरु के सामान्य या सम गति से चलने के कारण उनकी दृष्टि सन्मुख होगी। किन्तु ग्रहों की वाम या दक्षिण दृष्टि भी होती है। शीघ्रगामी ग्रह की वाम तथा वक्री ग्रह की दक्षिण दृष्टि होती है।

1. सूर्य और चन्द्र को सदा शीघ्रगामी कहा गया है इसलिए इनकी सदैव वाम दृष्टि होती है।
2. राहु-केतु की सदैव दक्षिण दृष्टि होती है क्योंकि ये सदा वक्री कहे गए हैं।
3. बाकी पाँच ग्रह अपनी गति के अनुसार, वक्र होने पर दक्षिण दृष्टि, सामान्य रूप से सन्मुख दृष्टि और शीघ्रगामी होने पर वाम दृष्टि वाले हो जाते हैं। एक समय में किसी ग्रह की एक ही दृष्टि हो सकती है।

वाम, सन्मुख व वक्री दृष्टियां: जब किसी ग्रह के साथ अथवा उससे अगली राशि में सूर्य हो तो वह ग्रह शीघ्र गति से चलता है। सूर्य से तीसरे और चौथे स्थान में सूर्य होने से ग्रह की गति सम रहती है। ग्रह से पंचम से दशम स्थान तक सूर्य हो तो ग्रह वक्र गति से चलते हैं। ग्रह से 11वें तथा 12वें में सूर्य हों तो वह ग्रह फिर शीघ्र गति से चलने लगता है। याद रहे कि ये नियम सिर्फ मंगल, गुरु और शनि पर लागू होते हैं। बुध व शुक्र की गति पंचांग देख कर समझनी चाहिए।

इसको इस प्रकार भी समझें। सूर्य को लग्न मानें। जैसा अभी हमने जाना है, ग्रह सूर्य से 11, 12, 1 तथा 2 में शीघ्र गति से चलते हैं। वे तीसरे और चौथे

स्थान में आकर सम और पाँचवें से मन्द होना शुरू कर वक्र गति में आ जाते हैं तथा 10वें स्थान तक वक्र रहते हैं। इस प्रकार ग्रह सूर्य से पाँचवें से दसवें रहने तक दक्षिण वेध करते हैं।

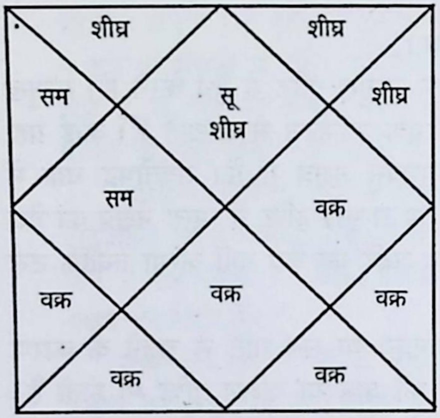

शीघ्र–वाम भेद
वक्र–दक्षिण भेद
सम–सम्मुख भेद
(सिर्फ नक्षत्र का ही)

एक दृष्टान्त देखें। पहली नवम्बर 2001 को शनि वृषभ और मंगल मकर में है। 1 नवम्बर, 2001 को शनि $20^0 01'$ पर रोहिणी नक्षत्र में वक्री हैं। शनि दक्षिण वेध करेगा क्योंकि गति वक्र है। सर्वतोभद्र चक्र देखें। रोहिणी से दाहिनी ओर तिरछी रेखा में चलें। रोहिणी से दाहिनी ओर 'उ' स्वर तथा अश्विनी नक्षत्र है। शनि इन्हीं का वेध करते हैं। मंगल मकर में $9^0 04'$ पर सूर्य के नक्षत्र उत्तर आषाढ़ में है। सूर्य स्वयं तुला में है। इससे चौथे घर में होने से मंगल की गति सम हैं अतः मंगल सन्मुख दृष्टि करेगा और मृगशिरा का वेध होगा। अगर कोई ग्रह रोहिणी में वाम दृष्टि से वेध करता है तो वेध क्रामश 'व' (अक्षर) मिथुन (राशि), 'औ' (स्वर) कन्या (राशि) 'र' (अक्षर) तथा स्वाति (नक्षत्र) का वेध होगा।

4. जब 'क' 'प', 'भ' और 'द' में किसी भी एक स्वर का वेध होता है तब बाहर लिखे गए अक्षर अर्थात् 'घ, ङ, छ' का 'क' के साथ 'ष ण ठ' का 'प' के साथ 'ध, फ, ढ़' का 'भ' के साथ, और 'थ, झ ञ' का 'द' के साथ वेध होता है। जब-जब ग्रह आर्द्रा, हस्त, पूर्वा आषाढ़ और उत्तर भाद्रपद नक्षत्रों में आते है; तब-तब वे इन अक्षरों का वेध करते हैं। इसी प्रकार बुध के द्वारा 'प' (अक्षर) का वेध होने के कारण 'ष', 'ण' तथा 'ठ' का भी वेध हुआ।

नक्षत्र पाद और पूर्णा तिथि

एक बार फिर से चक्र को देखें। चारों कोनों में आठ नक्षत्र हुए। जैसे ईशान कोण

में भरणी और कृतिका, आग्नेय कोण में आश्लेषा और मघा, नैऋत्य में विशाखा और अनुराधा तथा वायव्य में श्रावण और धनिष्ठा हुए। ये नक्षत्र पाद 16 स्वरों का वेध करते हैं। भरणी नक्षत्र का चौथा पाद और कृतिका का पहला पाद उस कोने से शुरू होने वाले स्वर 'अ' 'उ' 'लृ' और 'ओ' का वेध करते हैं। अगले कोने में आश्लेषा का चौथा और मघा का पहला पाद उस कोने से शुरू होने वाले स्वर 'आ', 'ऊ', 'लृ' और 'औ' का वेध करते हैं। अगले काने में विशाखा नपक्षत्र का चौथा अनुराधा नक्षत्र का पहला पाद 'इ' से शुरू होने वाले स्वरों का वेध करता है। आखिरी कोने में श्रवण नक्षत्र का चौथा और धनिष्ठा नक्षत्र का पहला पाद 'ई' 'ॠ' 'ऐ' और 'अः' का वेध करते हैं। इन चारों स्थितियों में पूर्णा तिथि का भी वेध होता है।

वर्ण स्वर चक्र—हमने पहले देखा कि सर्वतोभद्र चक्र में जिन पाँच तत्वों का प्रयोग किया जाता है, उनमें सबसे प्रथम है—स्वर। यह स्वर है क्या? व्याकरण के अक्षरों को स्वरों और व्यंजनों में बाँटा गया है। व्यंजन को वर्ण भी कहा गया है। नीचे के चक्र से पता चलेगा कि किस वर्ण के लिए कौन-सा स्वर सर्वतोभद्रचक्र के लिए माना जाएगा। मान लीजिए किसी का नाम है—दामोदर। नीचे दी गई सारणी में वर्ण 'द' देखें। उसके सामने स्वर के कॉलम में लिखा है। 'ओ' इस प्रकार दामोदर का वर्ण स्वर होगा 'ओ'। इसी प्रकार तरुण नाम के व्यक्ति का वर्ण स्वर होगा 'उ'। किसी व्यक्ति का नामाक्षर यदि स्वर है तो उस स्वर को छोड़ कर आगे के अक्षर का स्वर लें। जैसे उमेश नाम में 'उ' छोड़ दें। 'म' का स्वर 'इ' है।

सारिणी-12.1

वर्ण						स्वर
क	छ	ड	ध	भ	व	अ
ख	ज	ढ	न	म	श	इ
ग	झ	त	प	य	ष	उ
घ	ट	थ	फ	र	स	ए
च	ठ	द	ब	ल	ह	ओ

अस्त दिशा—सर्वतोभद्र चक्र को देखें। पूर्व दिशा में वृष, मिथुन व कर्क राशियाँ हैं। जब सूर्य इन में से किसी भी एक राशि में होता है तो पूर्व दिशा अस्त हो जाती है और साथ ही अस्त होते हैं—ईशान कोण के स्वर अ, उ, लृ और ओ। यही क्रम बाकी तीन दिशाओं में भी रहता है।

जो राशियाँ अस्त हैं उनकी दिशा के नक्षत्र, स्वर, वर्ण, तिथि सब अस्त ही रहते हैं।

अस्त दिशा में यात्रा नहीं करनी चाहिए। अस्त नामाक्षर असफलता की ओर ले जाता है।

ग्रहों से वेध और उनके परिणाम

हम पहले बता आए हैं कि वेध में पाँच तत्व देखे जाते हैं। विभिन्न ग्रहों से इन तत्वों के वेध होने के परिणाम नीचे लिखे गए हैं।

सूर्य	–	विरोध
चन्द्र	–	शुभाशुभ दोनों नतीजे
मंगल	–	धन हानि
बुध	–	ज्ञान-वर्धन, शुभ
बृहस्पति	–	शुभ, सब ओर उन्नति
शुक्र	–	कपड़े, स्त्रियाँ, आभूषण की प्राप्ति
शनि	–	बीमारी

ग्रहों का स्थान बल

ग्रह अपनी स्थिति के अनुरूप नीचे दी गई सारिणी के अनुसार फल देने का सामर्थ्य रखते हैं। अर्थात् स्वगृही शुभ ग्रह 100 प्रतिशत अच्छे फल देगा तो शत्रुगृही अशुभ ग्रह 100 प्रतिशत बुरे फल। इन्हें ग्रहों का स्थान बल कहा गया है। स्थान बल देने वाला ग्रह वक्री हो तो फल दूना, उच्च राशि में हो तो तीन गुना, नीच राशि में हो तो आधा और शीघ्र गति में, हो तो जितना नीचे लिखा गया है, उतना ही फल जानना चाहिए।

सारिणी-12.2

	शुभ ग्रह/ अच्छे फल	अशुभ ग्रह/ बुरे फल
स्वगृही	100%	25%
मित्र गृही	75%	50%
सम	50%	75%
शत्रु गृही	25%	100%

नक्षत्र दृष्टि

1. सभी ग्रह जिस नक्षत्र में बैठे हैं वहाँ से 15वें नक्षत्र को देखते हैं। इस दृष्टि के अलावा अलग-अलग ग्रह नीचे दी गई सारिणी के अनुसार, अपने आप से दी हुई गिनती के बराबर दूर स्थित नक्षत्रों को भी दृष्टि देते हैं।

सारिणी-12.3

ग्रह	नक्षत्र
सूर्य	5
मंगल	7, 8, 10
बुध	9, 12
गुरु	10 19,
शुक्र	9, 12
शनि	3, 5, 19
राहु	9

3. शुक्ल पक्ष में शुभ ग्रह अपने से अगले नक्षत्र को दृष्टि देता है और कृष्ण पक्ष में पिछले को। अशुभ ग्रह उल्टा करता है। अर्थात् अशुभ ग्रह कृष्ण पक्ष में आगे वाले नक्षत्र तथा शुक्ल पक्ष में पीछे वाले नक्षत्र को देखता है। ग्रहों के फल पक्ष पर भी निर्भर करते हैं। शुक्ल पक्ष में पूर्ण और कृष्ण पक्ष में आधा असर होता है।

4. सूर्य और चन्द्र के नक्षत्रों के लिए विशेष नियम—अश्विनी से रेवती पर्यन्त 27 नक्षत्रों में जिस पर सूर्य स्थित हो उससे 5वें पर विद्युन्मुख, 8वें पर शूल, 14वें पर सन्निपात, 18वें पर केतु, 21वें पर उल्का, 22वें पर कम्प, 23वें पर वज्र और 24वें पर निर्घात—ये आठ उपग्रह माने जाने चाहिए। ये सूर्य के अतिरिक्त आठ ग्रहों चन्द्र, मंगल आदि की छाया हैं। अशुभ ग्रहों से इनका वेध अच्छा नहीं माना जाता।

आठ उपग्रहों के अशुभ ग्रहों से वेध के फल

सारिणी—12.4

सूर्य के नक्षत्र से	उपग्रह	फल
1. पंचम	विद्युन्मुख	1.ऊपर से गिरना 2. पुत्र शोक
2. अष्टम	शूल	1. रक्त विकार 2. पति से अनबन
3. चौदहवाँ	सन्निपात	1. रोग, बुखार (ज्वर) 2. पति शोक,
4. अठारहवाँ	केतु	बीमारी
5. इक्कीसवाँ	उल्का	भय, धन-नाश
6. बाईसवाँ	कम्प	शीत
7. तेईसवाँ	वज्र	जहर, परदारा-रत
8. चौबीसवाँ	निर्घात	वंश-नाश, आयुध-भय

नोट

1. जब अशुभ ग्रह इन नक्षत्रों पर गोचरवश आते हैं तो काम में रुकावट और नुकसान कराते हैं।

2. यहाँ अभिजित नक्षत्र नहीं लिया जाता।

चन्द्र के नक्षत्र–सारिणी-12.5

जन्म नक्षत्र से	नाम	अशुभ वेध का फल
प्रथम	जन्म/मानक	मृत्यु तुल्य कष्ट
दशम	कर्म	दुःख, सन्ताप
16 वाँ	संघातिक	अनचाहे बुरे काम
18 वाँ	सामुदायिक	घर छोड़ना, अपनों से दूरी
19 वाँ	आधान	अपनों से झगड़ा/प्रवास
23 वाँ	विनाश	अपनों से झगड़ा
26 वाँ	जाति	वंश नाश
27 वाँ	देश	देश निकाला, देश हानि
28 वाँ	अभिषेक	कारागार

नोट

1. इनमें तीन या उससे अधिक नक्षत्रों का एक समय ही अशुभ ग्रहों से वेध हो तो मृत्यु तुल्य कष्ट होता है।
2. 16वाँ, 18वाँ, 23वाँ नक्षत्र बुरे नतीजे देने में अधिक प्रभाव रखते हैं। इन तीनों का एक साथ अशुभ ग्रहों के द्वारा वेध बड़े खतरे का सूचक है।
3. यहाँ अभिजित नक्षत्र भी लिया जाता है।

प्रयोग

1. जातक के विषय में इन तत्वों को लें–

(a) नामाक्षर

(b) राशि (जिस राशि में चन्द्र जन्म-कुण्ड़ली में है)

(c) तिथि (जन्म काल की तिथि)

(d) नाम नक्षत्र

(e) स्वर।

जब इन पाँचों तत्वों का अशुभ ग्रहों से वेध होता है तो मृत्युतुल्य कष्ट होता है। किन्हीं चार का वेध बीमारी लाता है। तीन का वेध घाटा/नुकसान करता है। दो अशुभ ग्रहों के वेध से खिन्नता रहती है। एक का वेंध निम्नलिखित नतीजे देता है–

नक्षत्र – असमंजस

राशि – रुकावट

तिथि – डर

नामाक्षर – नुकसान

स्वर – बीमारी

एक उदाहरण लें–

(a) जन्म	=	हस्त
(b) राशि	=	मकर
(c) तिथि (जन्म के समय)	=	एकादशी
(d) नामाक्षर	=	क
(e) स्वर	=	अ (सारिणी 11.1 देखें)

1 नवम्बर, 2008 को सूर्य तुला राशि में 14^0 $57'$ पर गोचर कर रहा था अर्थात् नक्षत्र था स्वाति। हम पहले कह आए हैं कि सूर्य और चन्द्र सदा वाम वेध करते हैं इसलिए सर्वतोभद्र चक्र में स्वाति पर सूर्य को बैठाइए। स्वाति दक्षिण दिशा में है। वहाँ से बाएँ देखिए। वेध हुआ 'ऋ' और ज्येष्ठा का सूर्य तुला में है। अतः दक्षिण की तीनों राशियाँ, अर्थात् सिंह, कन्या और तुला अस्त हैं। जातक के लिए ऊपर दिए गए पाँचों तत्वों में किसी का वेध नहीं हो रहा इसलिए यह वेध प्रभावहीन है। एक और उदाहरण में मंगल मीन में $9^0 45'$ के है। नक्षत्र हुआ उत्तर भाद्रपद। सूर्य धनु में था अतः मंगल सूर्य से चौथे घर में हुआ। मंगल सूर्य से चौथे घर में था अतः गति सम हुई। चूंकि सम गति है अतः दृष्टि सन्मुख हुई। सन्मुख दृष्टि होने के कारण सिर्फ नक्षत्र का वेध हुआ और वह नक्षत्र है हस्ता। अतः मंगल द्वारा इस जातक के जन्म नक्षत्र का वेध हुआ। अगर इस जातक की कुण्डली में मंगल अशुभ है तो वह असमंजस पैदा

करेंगा (पीछे बनी टेबल में देखें)। इसी प्रकार बाकी ग्रहों का प्रभाव भी देखा जा सकता है।

यह सर्वतोभद्र चक्र के निर्माण और व्यवस्था के आंशिक प्रयोग का एक प्रयास है। इसका प्रयोग देश-विदेश के मेदिनी ज्योतिष में बहुत ही सटीक तरीके से होता है। हम सर्वतोभद्र चक्र का विशेष प्रयोग कूर्म चक्र में आगे करेंगे।

सर्वतोभद्र चक्र हिन्दू ज्योतिष की एक अनुपस देन है। इसका प्रयोग कुछ कम ही होता है। गोचर के फलों को जानने के लिए इसका प्रयोग अवश्य ही उन्हें सटीक बना देगा।

सर्वतोभद्र चक्र

	अ		इ		उ		ए		ओ
	नन्दा		भद्रा		जया		रिक्ता		पूर्णा
	पूर्णा		नन्दा		भद्रा		जया		रिक्ता

पूर्व
य ङ छ

ईशान — आग्नेय

अ	कृतिका अ इ ऊ ए	रोहिणी ओं या यी यू	मृगशिरा ये यो क की	आर्द्रा कू घ ङ छ	पुनर्वसु कं कों हा ही	पुष्य हू हे हों डा	अश्लेष डी डू डे डो	आ
भ लो लू रि ले ली णी	उ	अ	व	क	ह	ङ	ऊ	म मी म मू मं घा
अ ला यो श्वि ये चू नी	ल	लृ	वृषभ	मिथुन	कर्क	लॄ	म	मों टा पूर्व टी टू फा ल्गुनी
रे ची च व दो दे ती	च	मेष	ओ	नन्दा सूर्य मंगल	औ	सिंह	ट	टे टो उ पा पी फाल् गुनी
उ. ञ झ भा. थ दू प.	द	मीन	रिक्ता शुक्र	पूर्णा शनि	भद्रा चन्द्र बुध	कन्या	प	पू ष ह ण ठ स् त
पू. दी दा भा. सो से प.	स	कुंभ	अः	जया गुरु	अं	तुला	र	पे पो चि रा री त्रा
श सू सी त सा गों भिषा	ग	ऐ	मकर	धनु	वृश्चिक	ए	त	रु रे स् रो ता वा ति
ध गे गू नि गी ग ष्ठा	ॠ	ख	ज	भ	य	न	ऋ	ति तू वि ते तो शा खा
ई	खो खे खू खी श्रवण	ख जो जे जु अभिजीत	जी ज भो भे उ. अ.	ट फ ध भू पू. अ.	भी भ यो ये मूल	यू यी य नो ज्येष्ठा	ने नू नी ना अनुराधा	इ

उत्तर — ष झ ञ

र प दक्षिण — ण ठ

वायव्य — नैऋत्य

ध फ ढ
पश्चिम

अध्याय-13

कतिपय दुर्लभ किन्तु उपयोगी चक्र

कोट चक्र

इस अध्याय में हम कुछ ऐसे चक्रों के बारे में जानेंगे जो दुर्लभ हो गये हैं परन्तु वे बड़े 'उपयोगी' हैं।

अभी-अभी हमने सर्वतोभद्र चक्र से परिचय किया है। वह एक बड़ा प्रभावशाली चक्र है जिसको बनाकर हर यज्ञ में इसी पर कलश स्थापना की जाती है। अत: सर्वतोभद्र चक्र का पूजा-पाठ में बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। अब हम एक और वैसे ही चक्र के बारे में जानेंगे जिसका बड़ा शुद्ध और पूर्णत: ज्योतिषीय आधार है। इस चक्र को सामान्यत: ''कोट चक्र'' के नाम से जाना जाता है। कोट चक्र को ''दुर्ग चक्र'' भी कहते हैं। दुर्ग या कोट का अर्थ किला होता है। इस चक्र में भी गोचर के ग्रह, राशि चक्र में नियति और दशा द्वारा तैयार किए गए नतीजों को, जातक तक पहुंचा देते हैं।

हम जानते हैं कि कमजोर ''दुर्ग'' या ''कोट'' पर कोई बाहरी राजा हमला करके जीत सकता है लेकिन यदि शक्तिशाली सेना दुर्ग के अन्दर हो तो हमला नाकाम भी हो जाता है। हमारा शरीर भी एक प्रकार का ''कोट'' ही है जिस पर बीमारी हमला कर सकती है और इस चक्र की सहायता से हम यह सहजता से ही पता कर सकते हैं कि ऐसे युद्ध में किसकी विजय होगी। यह चक्र बड़े काम का है। अगर सरकार पर मुश्किल आई है तो इस चक्र का प्रयोग कर के हम देख सकते हैं कि क्या सरकार गिरेगी? कोर्ट के झगड़ों में भी यह बखूबी काम में लाया जा सकता है। प्रत्येक कोट का एक स्वामी होता है जिन्हें हम

''कोट स्वामी'' कहते हैं। कोट की रक्षा करने वाले को 'कोट पाल' कहते हैं। कोट चक्र में भी क्रमशः 'कोट स्वामी' तथा 'कोट पाल' होते हैं। जातक की जन्म कुण्डली में चन्द्रमा जिस राशि में बैठे हों उसके स्वामी 'कोट स्वामी' कहे जाते हैं। इसी प्रकार जन्म नक्षत्र के आधार पर ''कोट पाल'' का निर्धारण होता है। जन्म नक्षत्र के आधार पर 'कोटपाल' की सारणी आगे दी गयी है।

1. तीन वर्गाकार आकृतियां खींचे जिसमें एक वर्ग दूसरे के अन्दर हो। अर्थात् पहले एक बड़ा वर्ग बनायें। इसके अन्दर एक अन्य वर्ग बनाकर उसके अन्दर भी एक और वर्ग बना लें।

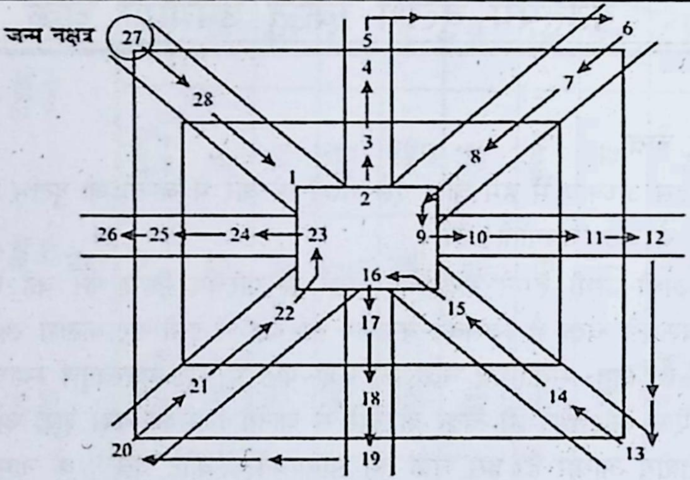

जातक का जन्म नक्षत्र उत्तर भात्र पद (27) होने या कारण यहां 27 लिखा गया है।

2. जैसा चित्र में दिखाया गया है, अब इस आकृति के चारों कोनों और चारों मुख्य दिशाओं—(पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर) में आठ रास्ते/पथ (वीथी) बनाएं।
3. इस कोट (दुर्ग) के कोने वाले पथ अन्दर आते हैं (इन्हें हम आगमन पथ कहेंगे) और चारों सीधे जाने वाले पथ बाहर जाते हैं (इन्हें हम प्रस्थान पथ कहेंगे)। अर्थात् ईशान, आग्नेय, नैऋत्य एवं वायव्य दिशाओं के पथ आगमन पथ हुए। इसी प्रकार पूरब, दक्षिण, पश्चिम

तथा उत्तर के पथ प्रस्थान पथ हुए। अन्दर आने वाले पथों पर तीन-तीन और बाहर जाने वाले पथों पर चार-चार नक्षत्र रहते हैं।

4. इन आठों पथों पर चित्रानुसार 28 नक्षत्र बैठाएं। पहला नक्षत्र जो जातक का जन्म नक्षत्र होता है, ईशान क़ोण (बाएं हाथ के कोने वाले पथ) में सबसे ऊपर, आगमन पथ पर, रखा जाता है।
5. कोट के सबसे अन्दर वाले स्थान को ''स्तम्भ'' कहते हैं जिसमें 4 नक्षत्र रहते हैं। 'स्तम्भ' के बाद वाले गलियारे को ''मध्य'' कहा जाता है जिसमें 8 नक्षत्र होते हैं। इससे अगला गलियारा, जो सबसे बाहर होता है, ''प्रकार'' है। इसमें भी आठ नक्षत्र रहते हैं। गलियारों से परे, सबसे बाहर वाले क्षत्र को 'बाह्य' कहते हैं, जहाँ आठ नक्षत्र होते हैं।

प्रयोग विधिः गोचर के सभी ग्रहों को कोट चक्र में बैठा कर देखें कि ये कोट चक्र में कहाँ स्थित हैं।

1. अशुभ ग्रह अन्दर आने वाले अर्थात् आगमन पथों पर हों तो ये कोट में सेंध लगाते हैं। मंगल शनि, राहु, केतु तथा सूर्य अशुभ ग्रह हैं जो बाहर जाएं, अर्थात् प्रस्थान पथ पर हों, तो भले।
2. शुभ ग्रह अन्दर आएं अर्थात् आगमन पथों पर हों तो कोट को बल प्रदान करते हैं परंतु यदि वे बाहर जाते हुए हों अर्थात् प्रस्थान पथ पर हों तो कोट को निर्बलता देते हैं। सुधी पाठक जानते हैं कि बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्र शुभ ग्रह हैं।
3. ''स्तम्भ'' और 'मध्य' में बैठे गोचर के शुभ ग्रह ''दुर्ग भंग'' होने से बचाते हैं। इन बारह नक्षत्रों पर शुभ ग्रह का होना आपदा से उद्धार करता है।
4. शुभ फलों के लिए गोचर के ''कोट स्वामी'' (चन्द्र लग्न का स्वामी) को कोट के अन्दर, अर्थात् 'स्तम्भ' में होना चाहिए। कोटपाल (नामाक्षर नक्षत्र के स्वामी) बाहर (बाह्य या प्रकार) रहकर कोट की रक्षा करते हैं। 'कोटस्वामी' बाहर और 'कोटपाल' अन्दर ('मध्य' या 'स्तम्भ' में) होने से कोट की सुरक्षा पर आँच आने की संभावनाएं प्रबल हो जाती हैं।
5. वक्री ग्रह—अन्दर आने वाले पथ (आगमन पथ) पर शुभ ग्रह वक्री हो जाएं तो अशुभ फल होते हैं क्योंकि फिर वह बाहर जाने को उद्यत हो जाते हैं। अशुभ ग्रहों का इन पथों पर (अन्दर आने वाले) वक्री होना शुभता प्रदान करता है। बाहर जाने वाले पथ पर यह प्रणाली पूर्ण रूप से विपरीत परिणाम देती है।

कोटपाल सारिणी
प्रत्येक चरण के लिए कोटपाल

जन्म नक्षत्र	प्रथम चरण	दूसरा चरण	तृतीय चरण	चतुर्थ चरण
1. अश्विनी	शुक्र	शुक्र	शुक्र	चन्द्र
2. भरिणी	चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र
3. कृतिका	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
4. रोहिणी	सूर्य	चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र
5. मृगश्रृरा	चन्द्र	चन्द्र	मंगल	मंगल
6. आर्द्रा	मंगल	मंगल	मंगल	शुक्र
7. पुनर्वसु	मंगल	मंगल	राहु	राहु
8. पुष्य	राहु	राहु	राहु	बुध
9. आश्लेषा	बुध	बुध	बुध	बुध
10. मघा	शनि	शनि	शनि	शनि
11. पूर्व फाल्गुनी	शनि	बुध	बुध	बुध
12. उत्तर फाल्गुनी	बुध	बुध	शनि	शनि
13. हस्ता	शनि	राहु	बुध	बुध
14. चित्रा	शनि	शनि	चन्द्र	चन्द्र
15. स्वाती	चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र	गुरु
16. विशाखा	गुरु	गुरु	गुरु	गुरु
17. अनुराधा	गुरु	गुरु	गुरु	गुरु
18. ज्येष्ठा	गुरु	चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र
19. मूला	चन्द्र	चन्द्र	शनि	शनि
20. पूर्वा-षाढा	शनि	गुरु	शनि	बुध
21. उत्तराषाढ़ा	शनि	शनि	शुक्र	शुक्र
22. अभिजित	शुक्र	शुक्र	शुक्र	शुक्र
23. श्रवण	मंगल	मंगल	मंगल	मंगल
24. धनिष्ठा	मंगल	मंगल	मंगल	मंगल
25. शतभिषा	मंगल	राहु	राहु	राहु
26. पूर्वभाद्रपद	राहु	राहु	गुरु	गुरु
27. उत्तर भाद्रपद	गुरु	गुरु	शुक्र	शुक्र
28. रेवती	गुरु	गुरु	शुक्र	शुक्र

6. आम तौर पर गोचर के चन्द्रमा का 'मध्य' या 'स्तम्भ' स्थानों पर रहना कोट को सुदृढ़ पर रहना कोट को सुदृढ़ बनाता है। सूर्य का दो बाहरी स्थानों पर रहना कोट को दृढ़ता देता है। यदि सूर्य अन्दर हो अथवा चन्द्रमा बाहर हों तो यह स्थिति कोट को क्षीणता देती है। कोटपाल निकालने के लिए नामाक्षर का प्रयोग किया जाता है। जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, आजकल बहुत से लोगों के नाम जन्म नक्षत्र पर आधारित नहीं होते इसलिए एक सारणी (देखें पृष्ठ 182) दी जा रही है जिसमें कोटपाल जन्म नक्षत्र से निर्धारित कर दिए गए हैं।

एक अन्य मत के अनुसार कोटपाल निर्धारण के लिए नामाक्षरों को स्वामी के लिए नीचे दी गयी सारणी देखनी चाहिए।

'अ' वर्ग–सूर्य, 'क' वर्ग–मंगल, 'च' वर्ग–'श' वर्ग–राहु।

आइए, कोट चक्र का प्रयोग पिछले दिनों हुई एक चुनावी प्रत्याशी, सुश्री हिलेरी क्लिंटन की कुण्डली पर करते हैं।

1. जन्म कुण्डली (हिलेरी क्लिंटन 26 अक्टूबर 1947, 20:00 शिकागो)

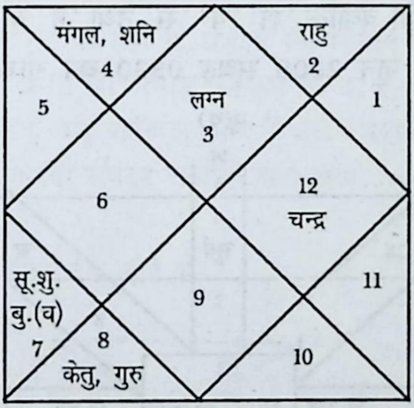

चुनाव में हार

2008 में अमेरिका में डेमोक्रेटिक पार्टी के राष्ट्रपति पद के दावेदार के चुनाव में हिलेरी क्लिंटन और बाराक ओबामा में कांटे की टक्कर हुई। 7 जुन 2008 को हिलेरी क्लिंटन ने हार मान ली।

सुश्री हिलेरी की कुण्डली में 7 जून 2008 को सूर्य में राहु का अन्तर था। उस दिन सूर्य वृषभ में, जन्मकालीन राहु पर, गोचर कर रहे थे। यह हिलेरी की जन्म कुण्डली के तृतीयेश सूर्य, जन्म कालीन चन्द्र से तृतीय स्थान पर होने के

कारण जातक के अहंकार में वृद्धि कर रहे थे। अन्तदरशानाथ राहु ने 5 मई 2008 को मकर में प्रवेश कर हिलेरी के विजय अभियान को हिला कर रख दिया क्योंकि मकर सुश्री हिलेरी का अष्टम भाव है। महादशानाथ सूर्य के द्वादश और अंतदरशानाथ राहु के अष्टम भाव में गोचर करने से हार का मुख तो देखना ही था।

अब इस घटना की पुष्टि कोट चक्र से करते हैं। सुश्री हिलेरी का जन्म नक्षत्र है उत्तर भाद्रपद। इनके लिए कोट स्वामी गुरु हैं क्योंकि चन्द्रमा मीन में हैं। सारणी देखने से पता चलेगा कि उत्तर भाद्रपद के पहले चरण में जन्में जातकों के लिए गुरु ही कोटपाल भी हैं। कोट स्वामी तो वे है ही। नियमानुसार कोट की सुरक्षा के लिए कोट स्वामी को अन्दर तथा 'कोटपाल को बाहर होना चाहिये पर यहाँ गुरु के ही दोनों पदाधिकारी होने के कारण बड़ी असमंजस की स्थिति है। सामान्य बुद्धि से माना जा सकता है कि ऐसी परिस्थिति में ''कोट स्वामी'' को प्राथमिकता दी जाये क्योंकि दूसरी सारणी के अनुसार राहु कोटपाल हो जाते हैं तथा वे 'मध्य' में स्थित होकर, वक्री होने के कारण, बाहर जाना चाहते हैं। अतः वे दुर्ग को कमजोर बना रहे हैं। दूसरी सारणी के अनुसार हिलेरी के लिये राहु दूसरे कोटपाल हुए क्योंकि 'श' 'ष' 'स' तथा 'ह' के कोट स्वामी राहु हैं।

7 जून 2008 सुबह 0530 का गोचर

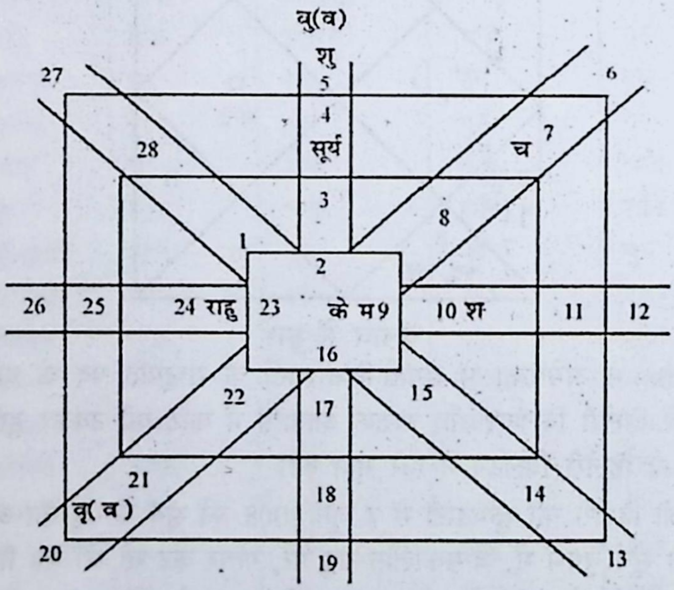

हमने पहले सुश्री हिलेरी के जन्म नक्षत्र उतर भाद्र पद (27वें नक्षत्र) को प्रथम आगमन पथ पर रख कर बाकी नक्षत्रों को क्रमवार ढंग से लगा दिया है। तत्पश्चात् 7 जून 2008 को गोचर के ग्रहों को कोट चक्र में यथा स्थान बैठा दिया है। आप अवश्य सहमत होंगे क़ि उस दिन सुश्री हिलेरी के कोट चक्र में चारो अशुभ ग्रह केतु, मंगल, शनि और राहु कोट के अन्दर "स्तम्भ" और 'मध्य' में हैं। दुर्भाग्य वश शुभ ग्रह बुध और शुक्र दोनों बाह्य क्षेत्रों में हैं। चन्द्र भी 'प्रकार' में हैं। सुधी पाठकों को स्पष्ट हो गया होगा कि सुश्री हिलेरी का दुर्ग भंग के कगार पर है तथा बृहस्पति, जो आगमन पथ पर हैं और अन्दर आ रहे हैं। पर 9 मई 2008 को बृहस्पति वक्री हो गए और उनका रुख बाहर की तरफ हो गया जिससे उनका रक्षा कवच हिलेरी से छिन गया और हिलेरी को 3 जून को हार का मुख देखना पड़ा–अहंकार वश (सूर्य चन्द्र से तीसरे घर में गोचर कर रहे हैं) हिलेरी ने 7 जून को ही हार मानी।

संघट्ट राशि चक्र

अब तक हम गोचर का प्रभाव कई चक्रों के माध्यम से देख चुके हैं। मेदिनीय ज्योतिष में गोचर के ग्रहों के प्रभावों को परखने के लिए हम संघट्ट राशि चक्र का प्रयोग करते हैं। संघट्ट संस्कृत के दो शब्दों सम् तथा घट् के संयोग से बना है जिसके कई शाब्दिक अर्थ हैं जैसे–मिलाना, चोट मारना, क्षति पहुँचाना, मार डालना आदि। संघट्ट चक्र से दोनों बातों, अर्थात् मिलन और क्षति का बोध होता है।

पहले इसकी बनावट देख लेते हैं

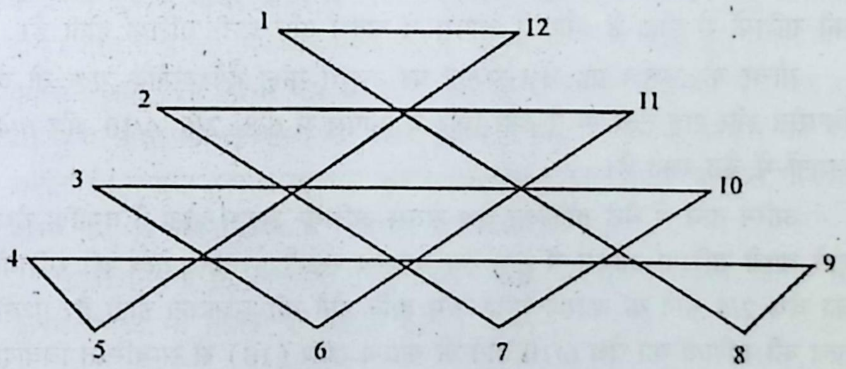

सबसे पहले हम चार सीधी समानान्तर रेखाएं खींचते हैं। इन्हें हम 1-12, 2-11, 3-10 तथा 4-9 कहेंगे, जो ऊपर से नीचे जाते-जाते बड़ी होती जाती हैं।

1 से 12 तक क्रमशः मेष से मीन तक की बारह राशियां समझनी चाहिए। इसी प्रकार चार अन्य तिरछी रेखाएं खींचते हैं जो नीचे से ऊपर जाते-जाते बड़ी होती जाती हैं। उन्हें हम 4-5, 3-6, 2-6 तथा 1-8 कहेंगे। इसी प्रकार अन्य तिरछी रेखाएं, 8-9, 7-10, 6-11 तथा 5-12 खींचते हैं।

आप इस चित्र को देख कर स्वयं समझ सकते हैं कि प्रत्येक राशि दो अन्य राशियों से जुड़ी हैं। दरअसल किसी भी राशि तक पहुंच रही ये दो रेखाएं उस राशि का वेध कर रही होती हैं। अर्थात् (मेष) का वेध 12 (मीन) तथा 8 (वृश्चिक) राशियों और वहां पर बैठे ग्रहों से तथा 5 (सिंह) का वेध 4 (कर्क) और 12 (मीन) राशियों से होता है। इसी प्रकार अन्य वेध देखे जाते हैं। अब एक बात गौर करने की है इस चक्र में अग्नि तत्व की राशियों का वेध जल तत्व की राशियों से हुआ। अग्नि और जल एक दूसरे के शत्रु हैं ही। एक और कमाल देखिए–मेष से मीन और वृश्चिक क्रमशः द्वादश और अष्टम राशियां हैं। इसी प्रकार सिंह से कर्क और मीन के बीच भी ऐसे ही संबंध हैं और धनु से वृश्चिक व कर्क का भी द्वादश/अष्टम का सम्बन्ध हैं। इसी प्रकार जल तत्व राशियों का वेध अग्नि तत्व राशियों से होता है और ये आपस में द्वितीय/षष्ठम हैं।

पृथ्वी तत्व की राशियों का वेध वायु तत्व राशियों से होता है और ये आपस में षष्ठम और दशम हैं। वायु तत्व की राशियों (3, 7, 11) का वेध पृथ्वी तत्व की राशियों से होता है और ये आपस में चतुर्थ और छठी राशियां होती हैं।

गोचर के अशुभ ग्रह वेध स्थानों पर अशुभ फल देंगे क्योंकि एक तो वे विपरीत और शत्रु तत्व के हैं और फिर वे आपस में 6/8, 2/6, 6/10 और 6/4 स्थानों में बैठ जाते हैं।

अग्नि तत्व में बैठे ग्रहों का वेध सबसे अधिक अशुभ होता हैं क्योंकि वेध होने वाली राशियां आपस में 6/8 का सम्बन्ध रखती हैं। जल तत्व की राशियों का वेध 2/6 होने के कारण कुछ कम हानि होने की संभावना होती है। पृथ्वी तत्व की राशियों का वेध 6/10 होने के कारण राज्य (10) से सम्बन्धित विवादों (6) का पता चलता है और वायु तत्व (3, 7, 11) राशियों का वेध आपस

में 4/6 राशियों से होने के कारण जनता/आम आदमियों का विरोध सामने लाकर सुख को विवादास्पद बना सकता है। एक उदाहरण देखें–

13 दिसम्बर 2001 को भारतीय संसद भवन पर हमला:

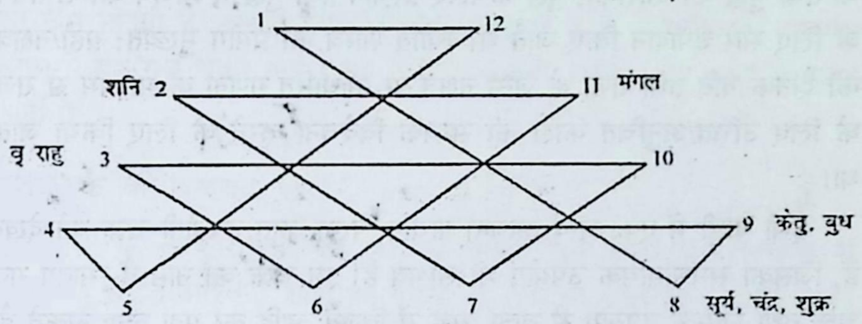

इस दिन गोचर के ग्रहों को संघट्ट चक्र में ऊपर दिखाया गया है।

देश की लोक सभा का प्रतीक चतुर्थ भाव होता है। भारत की जन्म कुण्डली (15 अगस्त 1947) में सिंह राशि चतुर्थ स्थान पर है। सिंह राशि का कोई वेध नहीं कर रहा अतः लोक सभा के भवन और सांसदों को कुछ नहीं हुआ। भारत की कुण्डली के चतुर्थेश सूर्य – जो सरकार के द्योतक हैं, वृश्चिक में गोचर कर रहे थे। धनु में गोचर कर रहे बुध और केतु से इनका वेध हुआ। बुध भारत की कुण्डली के द्वितीयेश हैं और वे धनु राशि में, जो भारत की कुण्डली की अष्टम राशि है, केतु के साथ मिलकर सूर्य (चतुर्थेश –जनता का मानस/सरकार), चन्द्र और शुक्र (लग्नेश) का वेध कर रहे थे। शनि के भारत के लग्न वृष में गोचर करने से लग्न और वहां बैठे जन्म कालीन राहु प्रभावित होकर तरह तरह की अफवाह फैला रहे थे। कुम्भ में गोचर करते हुए मंगल जन्म कालीन लग्न, वहाँ गोचर कर रहे शनि तथा जन्म कालीन राहु का वेध कर रहे थे। कुंभ भारत की कुण्डली का दशम स्थान है जहां से हमारी सरकार का पता चलता है। हमारी सरकार पर यह कुठाराघात था। संघट्ट राशि चक्र से मेदिनीय गोचर का आकलन करने में सहायता ली जाती है।

इन्हीं नियमों के अनुसार संघट्ट राशि चक्र का प्रयोग किसी जातक की कुण्डली पर भी किया जा सकता है।

कुछ अन्य उपयोगी चक्र

हमें यह स्मरण रखना होगा कि पूर्वकाल का ज्योतिषशास्त्र आज से सर्वथा भिन्न था। तब ज्योतिष चर्चा के केन्द्र में राजा तथा राज्य की सुरक्षा को रखा जाता था तथा युद्ध की आशंका, युद्ध के लिए प्रस्थान तथा युद्ध में विजय की संभावना के लिए सारे उपादान किए जाते थे। ज्योति शास्त्र का प्रयोग मुख्यतः ग्रहों/नक्षत्रों की दैनिक गति तथा राजा के जन्म नक्षत्र पर आधारित गणना के माध्यम से राजा के लिए उचित/अनुचित काल की सम्यक विवेचना करने के लिए किया जाता था।

इसी कड़ी में एक अन्य अत्यन्त प्राचीन, परन्तु बहुत उपयोगी चक्र को देखते हैं, जिसका समसामयिक उपयोग भी सम्भव है। इस चक्र का नाम हैं—मातंग गज चक्र तथा जिसके उपयोग से यात्रा, युद्ध में विजय आदि का पता लगा सकते हैं।

मानसागरी में इस चक्र की प्रशंसा में कहा गया है कि जैसे पृथ्वी का भूषण पर्वत, मनुष्यों का भूषण विद्या तथा रात्रि का भूषण चन्द्रमा है, वैसे ही सेना का भूषण गज है। आइए, इस चक्र में प्रवेश करने से पहले यह समझते हैं कि इस चक्र को मातंग गज चक्र क्यों कहते हैं।

मातंग का शाब्दिक अर्थ हुआ मतंग के वंशज। मतंग (मद् + अगंच्) के कई अर्थ हैं जिनमें दो क्रमशः हाथी तथा बादल है। मतंग एक ऋषि का भी नाम बताया जाता है, कहा जाता है कि मतंग ऋषि ने आर्य संस्कृति को उत्तर से दक्षिण की ओर फैलाया। ब्रह्माण्ड पुराण में मतंग ऋषि, जिनके पुत्र का नाम मातंग था, को शबरी का गुरु बताया गया है। मतंग ऋषि के ऋष्यमूक पर्वत पर तपस्या करने के समय बालि ने दुंदभि राक्षस पर ऐसा प्रहार किया कि उसके शरीर से रक्त की कुछ बूंदें ऋषि के शरीर पर पड़ गईं जिससे क्रुद्ध होकर मतंग ऋषि ने बालि को शाप दिया कि यदि वह ऋष्यमूक पर्वत पर प्रवेश करेगा तो उसकी मृत्यु हो जाएगी। इसी कारण बालि से पराजित सुग्रीव ऋष्यमूक पर्वत पर रहने लगे थे जहां श्री राम तथा श्री लक्ष्मण से उनकी भेंट हुई थी।

आइए, इनके पुत्र मातंग के बारे में भी जान लें। मातंग ऋषिसंभवतः पहले ऋषि हुए जिनका उपदेश स्पष्ट था—वीर पुरुषों को उद्योग करना चाहिए क्योंकि उद्योग करना ही पुरुषार्थ है। उसे किसी के आगे पराजय स्वीकार नहीं करनी चाहिए। यह तो थी मातंग ऋषि की विचारधारा।

अंत में हम एक अन्य मातंग की बात करेंगे तो इस चक्र की उत्पत्ति अधिक स्पष्ट होगी। कश्यप ऋषि की पत्नी क्रोधवशा को नौ कन्यायें हुयीं। उनमें एक का नाम मातंग रखा गया। कहा जाता है कि वे ही हाथियों की माता हैं।

एक अन्य सूत्र में कहा गया है कि दस महा-विद्याओं में नवम महाविद्या का नाम मातंगी है। अर्थात् विद्या, विवेक, पुरुषार्थ एवं गज शक्ति का अद्‌भुत संगम है यह गज चक्र। अब देखते हैं कि इसे कैसे बनाया और प्रयोग में लाया जाता है।

गज चक्र की बनावट

हाथी के आकार का चक्र बनाकर उसके मुख आदि सब अवयवों में अभिजित् सहित अश्विनी आदि 28 नक्षत्रों का क्रम से न्यास करें। (चित्र देखें)

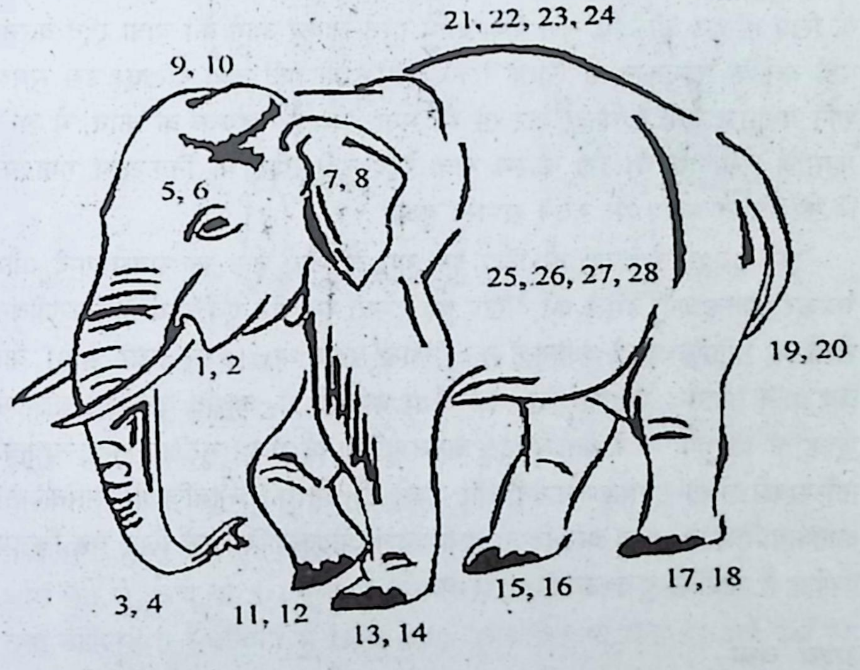

अश्विनी से आरम्भ करके 2 नक्षत्र मुख, 2 नक्षत्र शुण्ड (सूँड) के अग्रभाग; 2 नेत्र, 2 कानों के ऊपर, 2 मस्तक, 2-2 नक्षत्र चारों पैरों में, 2 पुच्छ,

4 पीठ तथा 4 पेट में न्यास करें। फिर इस गज चक्र में युद्ध में प्रस्थान के समय शनि के नक्षत्र को देखें। शनि का नक्षत्र जिस अंग में पड़े तदनुसार फल समझें।

फल

मुख, सूंड नेत्र, मस्तक, उदर में यदि शनि का नक्षत्र पड़े तो उस समय यात्रा करने से राजा युद्ध में अवश्य विजयी होता है। पीठ, पैर, पुच्छ और कान में शनि का नक्षत्र पड़े तो मृत्यु तुल्य कष्ट और पराजय होती है। मान सागरी में तो यहां तक कहा गया है कि ऐसे समय में कैसी भी विशाल सुदृढ़ सेना क्यों न हो, असफलता निश्चित है इसलिए जिस समय शनि दुष्ट स्थान में हो उस समय में पटबन्ध, अभिषेक, युद्ध–यात्रा त्याग देना चाहिए। अब इस चक्र का प्रयोग आधुनिक काल में देखते हैं।

उदाहरण के तौर पर 15 अगस्त 2007 को 8 लोग हवन, पूजा–पाठ आदि के लिए हरिद्वार की ओर चल पड़े। आधे रास्ते जाकर आगे की यात्रा रद्द करनी पड़ी क्योंकि भूस्खलन के कारण रेलगाड़ी रोक दी गई। तथ्य देखिए। उस समय शनि महाराज मघा में गोचर कर रहे थे। मघा, अर्थात् गजचक्र के कान, में शनि महाराज घुसे हुए थे। इस कारण यात्रा रद्द हुई। फिर भी निकटतम गंगा के किनारे नियत समय पर हवन सम्पन्न हुआ।

इसी प्रकार उदाहरण के लिए इस युग के अब तक के सबसे गन्दे और भयंकर आतंकवादी हमले को देखिए यह हमारी स्वाधीन एवं सार्वभौमिक जीवन शैली पर प्रतिक्रियवादी शक्तियों का घिनौना प्रहार था। 11 सितम्बर 2001 को जब शनि महाराज रोहिणी नक्षत्र पर गोचर कर रहे थे, अर्थात् वह गज चक्र में शुण्ड के अग्रभाग पर स्थित थे, उस समय दुनिया के सबसे सुरक्षित शहर न्यूयार्क की सबसे ऊंची इमारत पेंटागन और डब्लू टी ओ की बहुमंजिली इमारतों को आतंकवादियों ने ध्वस्त कर दिया। दुर्भाग्यवश आतंकवादियों के लिए यह विजय दर्शाता है क्योंकि युद्ध उन्होंने छेड़ा था।

अश्व चक्र

अभी हमने मातंग गज चक्र को समझा–जिसका प्रयोग युद्ध, युद्ध के लिए प्रस्थान अथवा पटबन्ध के लिए शुभाशुभ विचार में होता है। पारम्परिक युद्ध की बात हो और हाथी–घोड़े के बिना युद्ध हो, यह संभव ही नहीं! गज चक्र के बाद

आइए अब अश्व चक्र को भी समझें। इस चक्र को व्यवहार भी, गज चक्र की भांति, पट्टबन्ध, गमन तथा यात्रा युद्ध में विजय आदि देखने के लिए किया जाता है। फिर भी दोनों में बड़ा अन्तर है जिसे हमने इस अध्याय के अन्त में समझाया है।

अश्व चक्र की बनावट

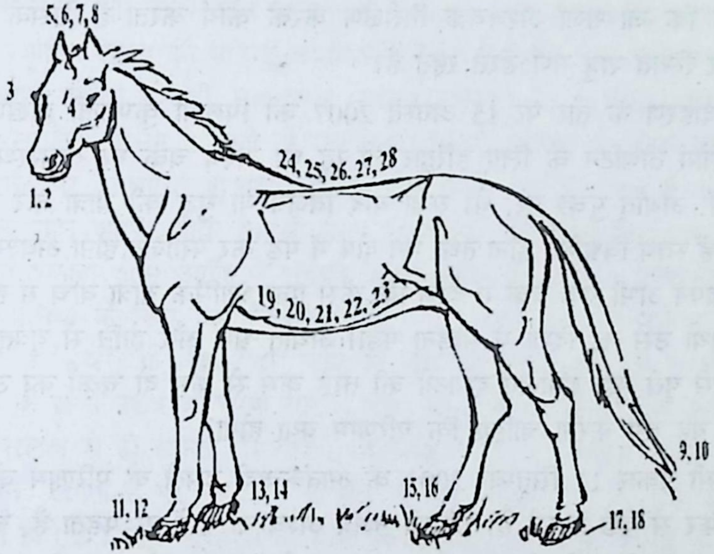

घोड़े की आकार का एक चक्र लिखकर उसमें मुख से पैर तक अश्विनी आदि अभिजित सहित 28 नक्षत्रों का न्यास करें। इसको लिखने की विधि इस प्रकार है (कृपया चित्र देखें) – अश्विनी, भरणी 2 नक्षत्र मुख में, कृतिका, रोहिणी 2 नक्षत्र नेत्रों में, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु तथा पुष्य मस्तक में, आश्लेषा तथा मघा पुच्छ में, पूर्व तथा उत्तर फाल्गुनी से लेकर ज्येष्ठा तक दो–दो नक्षत्र चारों पैरों में, बाद के 5 (मूला से अभिजित सहित श्रवण तक) नक्षत्र उदर में तथा आखिरी 5 (धनिष्ठा से रेवती तक) नक्षत्र पीठ पर बैठा दें। अब देखें कि गोचर के शनि किस अंग पर हैं। तथा उत्तर फाल्गुनी से लेकर ज्येष्ठा तक दो–दो नक्षत्र चारों पैरों में, बाद के 5 (मूला से अभिजित सहित श्रवण तक) नक्षत्र उदर में तथा आखिरी 5 (धनिष्ठा से रेवती तक) नक्षत्र पीठ पर बैठा दें। अब देखें कि गोचर के शनि किस अंग पर हैं।

अश्व चक्र में यदि शनि का नक्षत्र मुख, नेत्र, कर्ण अथवा मस्तक पर में हो तो शत्रु–सेना के नाश होने तथा शत्रु के वश में हो जाने की सम्भावना होती है। पेट, पैर, पीठ अथवा पूँछ में शनि पड़ें तो उस समय युद्ध यात्रादि से हानि होती है तथा पराजय या भ्रम की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।

मानसागरी में कहा गया है कि जिस समय में शनि अनिष्ट स्थान में हो उस समय में पट्टबन्ध, युद्ध–यात्रादि जैसे कार्य छोड़ देने चाहिए। वहाँ यह भी कहा गया है कि जो राजा अश्वचक्र निरीक्षण करके कार्य करता है, उसके देश–देशान्तर स्थित शत्रु गण डरते रहते हैं।

उदाहरण के तौर पर 15 अगस्त 2007 की पिछली कुण्डली देखिए जब कुछ लोग तीर्थाटन के लिए हरिद्वार जा रहे थे। अश्व चक्र पर गोचरस्थ शनि मघा में, अर्थात् पुच्छ पर, थे। राजा यदि विजय या युद्ध की यात्रा कर रहे थे तब उन्हें स्वयं विभ्रमित होना तथा भंग दोष में पड़ कर पराजित होना अवश्यंभावी था। आपने अभी गज चक्र में देखा कि कैसे एक धाार्मिक यात्रा बीच में ही छूट गयी तथा उसे नई दिशा में मोड़ना पड़ा। अर्थात् भ्रम और हानि से युक्त यात्रा जैसे तैसे पूरी हुई। इसलिए दशाओं की तरह कम से कम दो चक्रों का उपयोग करके यह तय करना चाहिए कि परिणाम क्या होगा?

इसी प्रकार 11 सितम्बर 2001 के आतंकवादी हमले के परिणाम को हम यहां फिर से देख सकते हैं। रोहिणी नक्षत्र अश्व के नेत्रों पर पड़ता है, जो कि आक्रमण करने वाले के लिए विजय बताता है। अतः दुर्भाग्यवश ही सही, पर आतंकवादी अपने उद्देश्य में सफल हुए।

सुधी पाठक अवश्य सोच रहे होंगे कि आखिर गज तथा अश्व चक्र में क्या अन्तर हैं? अगर आप निकट से देखेंगे तो दोनों चक्रों में नक्षत्रों की शुभता में बहुत थोड़ा अन्तर है। यह अन्तर अन्त के पाँच नक्षत्रों, अर्थात् शतभिषाँ से लेकर रेवती तक, में पड़ता है। आप दोनों का अन्तर समझने के लिए शतरंज का खेल स्मरण कीजिए। हाथी का काम है शत्रुओं को रौंदते हुए सीधे दौड़ते जाना। घोड़ा ढाई घर ही चलता है, पर उसका इस्तेमाल रणनीति निर्धारण में किया जाता है। घोड़े से सीधा आक्रमण न करके उससे शत्रु पक्ष को संकट में डालने की योजना बनायी जाती हैं। इसी प्रकार अश्व चक्र से रणनीति का निर्धारण किया जाता है किन्तु गज चक्र से युद्ध तथा आक्रमण के निर्णय लिए जाते हैं।

शतपद चक्र

जब हम सवतोभद्र चक्र सीख रखे थे तो यह देखा था कि वह वक्र राष्ट्र के संभावित शुभाशुभ फलों का कितना सुन्दर निरूपण कर सकता है। तब यह प्रश्न मन में आता था कि क्या सामान्य शक्ति के जीवन में भी शुभाशुभ फलों का निरूपण इतनी ही सरलता से हो सकता है, विशेष तौर से तब, जब उस सामान्य व्यक्ति के पास कोई भी ज्योतिषय आधार, जैसे उसकी जन्मपत्री उपलब्ध न हो और उसके पास पहचान के लिए मात्र उसका नाम हो। आप जानते हैं कि ज्योतिष शास्त्र की महिमा अपरम्पार है—वहां हर प्रश्न का, हर समस्या का चाहे बहुत सटीक न सही, एक उत्तर अवश्य उपलब्ध है। तो ऐसी अवस्था में, जब अन्य कोई रास्ता न मिले तो उस समय किसी जातक के जीवन में, ग्रहों के गोचर पर आधारित शुभाशुभ विचार हेतु एक चक्र उपलब्ध है—जिसका शास्त्रीय नाम शतपद चक्र है। श्री नारद पुराण के स्कन्ध ज्योतिष प्रकरण के अन्तर्गत श्लोक 509 आदि में शतपद चक्र बताया है जिसका प्रचिलित नाम पंचांग प्रेमियों के लिए 'अ' 'व' 'क' 'ह' 'डा' चक्र है—सुधी पाठक जानते हैं कि 'अ' 'व' 'क' 'ह' 'डा' चक्र से नाम के प्रथम अक्षर के आधार पर जातक के जन्म नक्षत्र के चरण सहित, वर्ण, वश्य, नाड़ी, योनि, गण आदि का बोध सरलता से हो सकता है। यद्यपि यह चक्र देखने में प्रचलित शतपद चक्र से भिन्न लगता है पर मूल रूप से दोनों में कुछ अन्तर नहीं है। इस चक्र में सौ वर्ग होते हैं जिन्हें ग्यारह सीधी तथा ग्यारह पड़ी रेखाओं से बनाया जाता है। पृष्ठ 194 पर दिए गए चक्र को देखें।

इस सौ वर्ग के खाके को हम पहले 25-25 वर्गों के चार भागों में बाँट देते हैं। इन्हें सुविधा के लिए हम ईशान (उत्तर-पूर्व), आग्नेय (दक्षिण-पूर्व), नैऋत्य (दक्षिण-पश्चिम) तथा वायव्य (उत्तर-पश्चिम) के नाम से जानेंगे। अब सुधी पाठकों से अनुरोध है कि वे कृपया विश्व विजय पंचांग खोलकर पृष्ठ 96 पर स्थित अवकहड़ा चक्र को देखें। वहाँ हम अश्विनी की बजाय कृतिका नक्षत्र पर ध्यान दें तो पाएंगे कि उसके चार चरणों के चरणाक्षर क्रमशः 'अ' 'इ' 'उ' तथा 'ए' हैं। रोहिणी के पहले चरण का अक्षर 'ओ' है। श्री नारद पुराण में वर्णित व्याकरण स्कन्धा में इन्हें 'स्वर' कहा गया। 'अ' स्वर से 'आ, 'इ' स्वर से 'ई', 'उ' स्वर से 'ऊ', 'ए' स्वर से 'ऐ' तथा 'ओ' स्वर से 'औ' का भी बोध होता है।

उत्तर पूर्व **दक्षिण पूर्व**

अ	व	क	ह	ड	म	ट	प	र	त
इ	वि	कि	हि.	डि	मि	टि	पि	रि	ति
उ	वु	कु घ ड छ	हु	डु	मु	टु	पु ष ण ठ	रु	तु
ए	वे	के	हे	डे	मे	टे	पे	ने	ते
ओ	वो	को	हो	डो	मो	टो	पो	रो	तो
न	य	भ	ज	ख	ग	स	द	च	ल
नि	यि	भि	जि	खि	गि	सि	दि	चि	लि
नु	यु	भु व फ ढ	जु	खु	गु	सु	दु थ झ ञ	चु	लु
ने	ये	भे	जे	खे	गे	से	दे	चे	ले
नो	यो	भो	जो	खो	गो	सो	दो	चो	लो

उत्तर पश्चिम **दक्षिण पश्चिम**

अब शतपद चक्र के उत्तर–पूर्व हिस्से को देखिए। सबसे बायीं कतार, जो ऊपर से नीचे उतर रही है, उसमें यही पाँच स्वर लिखे गए हैं जो कृतिका के चारों पदों तथा रोहिणी के प्रथम पद का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। अब रोहिणी के शेष तीन तथा मृगशिरा के प्रथम दो चरणों के अक्षरों को पंचांग में देखिए। यही अक्षर ईशान कोण के दूसरे कॉलम में ऊपर से नीचे लिखे हुए हैं। अब शतपद चक्र का तीसरा कॉलम देखिए। 'क' से प्रारंभ करते हुए 'कि' तथा मृगश्रृरा नक्षत्र के चारों चरण पूरे हुए। इसके बाद जब हम नीचे आते हैं तो वहां एक ही खाने में चार अक्षर, क्रमशः 'कु' 'घ' 'ड' तथा 'छ' लिखे हैं। सुधी पाठकों ने समझ लिया होगा कि ये दरअसल आर्द्रा के चारों चरणों के अक्षर हैं। इसके नीचे 'के' तथा 'को' आते हैं जो पुनर्वसु के प्रथम दो चरणों के अक्षर हैं। अगले खाने में 'ह' तथा 'ही' पर पुनर्वसु शेष हुए। इसी प्रकार हम आगे चलें तो 'डा' तक पहुँच कर आश्लेषा के भी चारों चरण पूरे हो जाते हैं तथा ईशान कोण के सभी खाने पूरे हो जाते हैं। सुधी पाठक पाएंगे कि जैसे एक ही खाने में आर्द्रा के चारों चरण आते हैं, ऐसे ही चार अक्षरों वाले खाने हमें चारों दिशाओं में मिलते हैं जिन्हें स्तंभ

कहते हैं। आप देखेंगे कि स्तंभ के अन्दर के चारों अक्षर एक ही नक्षत्र के चारों चरणों के अक्षर हैं। ईशान दिशा में आर्द्रा, आग्नेय (दक्षिण-पूर्व) के स्तंभ में हस्ता, नैऋत्य (दक्षिण-पश्चिम) के स्तंभ में उत्तर भाद्र पद तथा वायव्य (उत्तर-पश्चिम) स्तंभ में पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रों के चारों पद आ गए हैं।

जैसा हम पहले कह आए हैं, उत्तर-पूर्वी खाने की आखिरी व्यंजन अक्षर 'डो' आता है। जहां आश्लेषा नक्षत्र शेष हो जाता है। यही कहानी दक्षिण पूर्व के खाने में भी दुहराई जाती है। वहाँ 'म' से प्रारंभ करके 'तो' तक आते-आते अगले सात नक्षत्र, अर्थात् मघा से विशाखा तक के सभी नक्षत्रों के चारों चरणाक्षर लिखे गए हैं। यहाँ तक तो कहानी बहुत सीधी है पर उत्तर-पश्चिम खाने में थोड़ा ध्यान देने की आवश्यकता है। आप स्वयं देख सकते हैं कि इस खाने के पहले कॉलम में स्थित 'ना', 'नी', 'नू', 'ने' तथा 'नो' क्रमशः अनुराधा के चारों चरण तथा ज्येष्ठा के प्रथम चरण दर्शाते हैं। इसी प्रकार दूसरे तथा तीसरे कॉलम में, स्तंभ सहित, कोई कठिनाई नहीं है। यहाँ 'भो' तक आकर उत्तराषाढ़ा के दूसरे चरण तक के अक्षर पूरे हो जाते हैं। पंचांग में इसके बाद उत्तराषाढ़ा के दो चरण 'जा' और 'जी' बताए गए हैं। वहाँ 'जू', 'जे' और 'जो' की चर्चा नहीं है। उसके बाद पंचांग में श्रवण नक्षत्र का पहला चरणाक्षर 'खी' से प्रारंभ होता है। 'ख' कहीं खो गया है। परन्तु शतपद चक्र में ये सारे अक्षर, अर्थात् 'जू', 'जे', 'जो' और 'ख' आते हैं। ये चारों अभिजित नक्षत्र के चारों चरणों के अक्षर हैं और शतपद चक्र में अभिजित का प्रतिनिधित्व करते हैं। उसके बाद तो 'खी' से 'खो' श्रवण नक्षत्र का चक्र पूरा होता है। आखिरी, अर्थात् दक्षिण-पश्चिम, खाने का हिसाब बड़ा सीधा है, वहाँ आखिरी सात नक्षत्रों, धनिष्ठा से लेकर भरणी तक, के सभी चरणों के सभी अक्षर आ जाते हैं। यह तो हुई शतपद चक्र की बनावट जिसमें 28 नक्षत्रों के 108 पद एक सौ कोष्ठों में लिखकर फलादेश कहे जाते हैं।

इसकी प्रयोग करने की विधि बहुत सरल है। किसी भी दिन, किसी व्यक्ति के बारे में किसी जानकारी के लिए उस दिन के गोचर के ग्रहों को शतपद चक्र में नक्षत्रों के चरणों में बैठा देते हैं। तत्पश्चात् जातक के नाम के सभी अक्षरों को शतपद चक्र में बैठा कर देखते हैं कि इन अक्षरों का वेध किन-किन ग्रहों से हो रहा है। वेध जानने के लिए सर्वतोभद्र चक्र में लगने वाले सिद्धान्तों का प्रयोग किया जाता है। यदि जातक के नाम के अक्षरों का शुभ ग्रहों से वेध हो रहा हो

तो शुभ अथवा अशुभ ग्रहों से वेध होने पर अशुभ फल जानने चाहिए। दोनों प्रकार के वेध से सामान्य फल तथा वेध न होने पर शुभ तथा अशुभ दोनों प्रकार के फल मिलते हैं।

इसे हम एक उदाहरण से समझेंगे। दिनांक 22.07.2008 को सायँ 4:00 बजे संसद में भारतीय गणतन्त्र की अस्मिता परीक्षा हुई। उस दिन मित्र–शत्रु में भेद न रहा। भारत में एक बार फिर से महाभारत हुआ। आइए देखते हैं, उस समय ग्रहों की स्थिति क्या थी?

ग्रह	नक्षत्र	चरण	चरणाक्षर
सूर्य	पुष्य	1	हे
चन्द्र	पू. भा. प.	2	सो
मंगल	पू. फा.	2	टा
बुध	पुनर्वसु	3	हा
गुरु	पू. षा.	3	फा
शुक्र	आश्लेषा	1	डी
शनि	मघा	4	मे
राहु	धनिष्ठा	1	गा
केतु	आश्लेषा	3	डे

इन चरणाक्षरों में ग्रहों को बैठा लें। पहले हम शनि के प्रभाव तथा वेध को देखते हैं। शनि 'मे' में बैठे हैं। वहाँ से पहले वाम वेध देखिए। जो अक्षर विद्ध हो रहे हैं वे है 'टु', 'पी' तथा 'र'। सन्मुख वेध 'टे', 'पे', 'रे' तथा 'ते' का हो रहा है। दक्षिण वेध 'टो', 'द', 'ची' तथा 'लु' का हो रहा है। अब 'ट' में बैठे मंगल के वेध देखिए। मंगल से वाम वेध होने वाले अक्षर है 'पि' 'रू' तथा 'ते'। सन्मुख वेध 'टि', 'टू', 'टे', 'टो', 'स', 'सी', 'सु', 'से' तथा 'सो' एवं दक्षिण वेध 'मि', 'डु', 'हें' 'को', 'य' तथा 'नि' का हो रहा है। ये तो अशुभ वेध हुए ।

अब शुभ वेध के लिए गुरु को देखते हैं जो आश्लेषा के स्तंभ में बैठे हैं तथा 'भू' 'ध', 'ढ़' तथा 'फ' के अतिरिक्त 'जे', 'खो' का वाम वेध, 'भे' तथा 'भो' का सन्मुख वेध तथा 'ये' एवं 'नो' का दक्षिण वेध कर रहे हैं। अभी

इतना ही यथेष्ट है। अगर हम राहु, केतु, शुक्रादि सभी ग्रहों के वेधों को देखें तो यद्यपि बहुत सही, किन्तु भ्रामक स्थिति, बनेगी। इसलिए अभी मात्र ये तीन वेध ही देखते हैं। हम पाते हैं कि इस समय 'भारत' नाम में 'रे'अक्षर का पाप ग्रह से वेध हो रहा है। कोई शुभ वेध नहीं है। इसलिए ऐसी संभावना लगती थी कि 22 जुलाई की शाम 4 बजे के मतदान के बाद भारत की प्रतिष्ठा को धक्का पहुँचेगा। 'मनमोहन सिंह' पर कोई शुभ या अशुभ प्रभाव नहीं था। इसी प्रकार करात के तीनों अक्षर अशुभ प्रभाव में थे। अगर उस दिन के घटना क्रम का स्मरण करें तो मनमोहन सिंह विजेता की तरह उभरे। 'करात' की बहुत किरकिरी हुई और भारतीय गणतन्त्र का एक काला अध्याय भी सदन में लिखा गया जब भारतीय जनता पार्टी के तीन सांसदों ने नोटों की गड्डियों का सदन में प्रदर्शन किया। यदि इस चक्र का सावधानी पूर्वक प्रयोग किया जाये तो मोदिनीय ज्योतिष के चमत्कारिक परिणाम पाए जा सकते हैं।

कूर्म चक्र

कूर्म का अर्थ है कच्छप या कछुआ। श्री वेद व्यास द्वारा विरचित अठारह महापुराणों में पन्द्रहवें महापुराण का नाम 'कौर्म' या कूर्म पुराण है। भगवान विष्णु पृथ्वी पर नौ अवतार ले चुके हैं। महर्षि पराशर ने दशावतार का जो वर्णन किया है, उसकी चर्चा अन्यत्र की जा चुकी है। इनमें से शनि महाराज का पृथ्वी पर कूर्म या कछुए के रूप में अवतरण हुआ। इस अवतार की चर्चा कूर्म पुराण के अतिरिक्त विष्णु, श्रीमद्भागवत, ब्रह्म, और वराह पुराणों के साथ-साथ महाभारत में भी है। कहा गया है कि देवताओं को जब अमृत की आवश्यकता हुई तो राक्षसों के साथ मिल कर उन्होंने मंदार पहाड़ की मथानी बनाई औ वासुकि नाग की रस्सी से समुद्र का मन्थन किया लेकिन वह मथानी समुद्र में अपने भार से डूबने लगी। मंदराचल पाताल में चले गए। तब भगवान ने विशाल कछुए का रूप धारण किया तथा उस पर मंदराचल को स्थापित किया। पुराणों के अनुसार प्रभु का यह कच्छप अवतार एक लाख योजन में, जम्बूद्वीप के समान, फैला हुआ था।

कई बार मन मे एक प्रश्न उठता है कि आखिर सर्वशक्ति सम्पन्न, अजर-अमर देवताओं को अमृत की क्यों आवश्यकता हुई जिसके कारण भगवान को अवतार लेना पड़ा। यह बड़ी मनोरंजक कथा है जो कई पुराणों में वर्णित हैं। आइए यही कथा संक्षेप में सुनते हैं।

पुरातन काल की बात है कि स्वनाम धन्य दुर्वासा ऋषि को एक परम सुन्दरी विद्याधरी (एक देवयोनि विशेष तथा अर्ध्य देवता को विद्याधरी कहा जाता है) ने परिजात पुष्पों की एक माला श्रद्धापूर्वक भेंट में दी जो अभूतपूर्व रूप से सुगन्धित तथा कभी न मुरझाने वाली थी। इस प्रकार किसी को माला दिया जातना उसके प्रति सम्मान का सर्वोच्च प्रतीक माना जाता है। वही माला लेकर दुर्वासा ऋषि देवताओं के राजा इन्द्र से मिलने गए जो स्वयं ऐरावत हाथी पर चढ़कर कहीं और जा रहे थे। इन्द्र का यह भव्य स्वरूप देखकर सामान्यतः क्रोधी रहने वाले दुर्वासा बहुत प्रसन्न हुए और आशीर्वाद स्वरूप वह माला, जो श्री, ऐश्वर्य तथा शक्ति से भरी हुई थी, इन्द्र को भेंट कर दी। इन्द्र, जो कहीं जाने की जल्दी में थे, ने वह माला अनमने भाव से स्वीकार करके स्वंय न पहनकर अपने मदमस्त हाथी के सर पर रख दी। ऐरावत हाथी तो मदमस्त था– उसने वह माला जो श्री, ऐश्वर्य, शक्ति और न जाने कितने गुणों से भरी पड़ी थी, अपनी सूँड से खींच कर जमीन पर फेंकी और कुचल डाली। दुर्वासा तो ठहरे ही महाक्रोधी, इस दिव्य माला का ऐसा घोर अपमान देखकर उन्होंने तत्काल शाप दे दिया। ऐसा घोर शाप कि इन्द्र के त्रिभुवन का साम्राज्य श्री हीन हो गया। तीनों लोकों से लक्ष्मी क्षण भर में ही विलुप्त हो गई। इन्द्र सभी देवताओं के राजा थे इसलिए सभी देवताओं की लाख प्रार्थनाओं के बाद भी टस से मस नहीं हुए। उधर राक्षसों के राजा बलि ने अच्छा अवसर देखकर देवतओं पर आक्रमण कर दिया और उनकी अच्छी खासी मरम्मत कर दी। लुटे–पिटे देवतागण ब्रह्मा जी को साथ लेकर बैकुण्ठ वासी श्री नारायण के पास गए और उनकी विभिन्न प्रकार से स्तुति करके अपना कष्ट बताया। श्री नारायण ने उन्हें समुद्र मन्थन करके लक्ष्मी तथा अमृत प्राप्त करने का आशीर्वाद दिया। शक्तिहीन देवताओं में समुद्र मन्थन का सामर्थ्य ही कहाँ था, इसलिए श्री भगवान के आदेशानुसार उन्होंने असुरों को अमृत का प्रलोभन देकर, उनकी शक्ति की सहायता से, समुद्र मन्थन किया और अमृतादि प्राप्त किए। इसी क्रम में भगवान का कूर्मावता हुआ।

वाराहीसंहिता के 64वें अध्याय में भगवान कूर्म के स्वरूप की चर्चा की गयी है। इनका रंग स्फटिक तथा चाँदी के समान शुक्ल वर्ण का है। वंश (पीठ की हड्डी) लाल रंग की तथा पीले बिन्दुओं से सजी हुई है। इनका पूर्ण विग्रह नीली रेखाओं से चित्रित नीलम के कलश जैसा लगता है। शास्त्रों में कहा गया

है कि ऐसा विग्रह घर में रखने से राजा के समान सम्मान प्राप्त होता है। भगवान का यह विग्रह आजकल बाजार में भी उपलब्ध है। वाराही संहिता में भी कूर्म चक्र का विशद वर्णन है।

श्री नारद पुराण के पूर्व भाग, द्वितीय पाद के 6 श्लोकों (739 से 745) में पृथ्वी के आधार, कूर्म देवता, के अंगों का वर्णन है। इन श्लोकों में बताया गया है कि भारत भूमि के नौ विभाग कूर्म देवता के नौ अंगों द्वारा निरूपित होते हैं। इन्हीं नौ अंगों में कृतिकादि तीन-तीन नक्षत्रों का न्यास करके देखना चाहिये कि किन-किन नक्षत्रों में अशुभ तथा शुभ ग्रह गोचर कर रहे हैं। जहाँ अशुभ ग्रहों का प्रभाव है, उन स्थानों में अशुभ तथा जहाँ शुभ ग्रहों का प्रभाव है वहाँ शुभ फल जानने चाहिए। ये फल तब तक रहते हैं जब तक शुभ या अशुभ ग्रह गोचर में अपना स्थान परिवर्तित नहीं कर लेते। ठीक यही बातें नारद संहिता के अध्याय 36 (कूर्म विभागाध्याय) के 6 श्लाकों में कही गई है। ज्योतिष शास्त्र की अनूठी प्रकाश शिखा वराहमिहिर, की अद्वितीय पुस्तक, बृहद्संहिता के 14वें अध्याय का नाम ही है कूर्म विभाग। वहाँ 33 श्लोकों में भारत वर्ष के विभिन्न खण्डों को विस्तृत वर्णन है। किन्तु वहाँ भी निष्कर्ष एक ही है कि नक्षत्रों से विभिन्न भूखण्डों का ज्ञान होता है। ये नक्षत्र एक काल्पनिक कूर्म (कछुए) के शरीर पर आरोपित किए जाते हैं। ये इतने ही बड़े हैं कि उनकी पीठ के एक भाग पर शेषनाग कमल की डंडी की तरह स्थित हैं। इन शेषनाग के सर पर भगवान के एक अन्य अवतार, वराह, जो कच्छप के बाद ही पृथ्वी पर आये, मक्ष्छर की तरह स्थित हैं तथा इन वराह ने अपने दाँतों पर पृथ्वी को उठा रखा है। अगर प्राचीन ग्रन्थों का विश्वास किया जाए तो भगवान कूर्म का विस्तार 10×10^{19} किमी होना चाहिए-अर्थात् हमारी आकाश गंगा से तुलनीय विस्तार है इस कूर्म का। कूर्म के विग्रह में नक्षत्रों की स्थापना का ध्येय भी यही प्रतीत होता है। क्योंकि हमारा सौर मंडल तथा आकाश गंगा, सभी, कछुए की पीठ की भाँति, अण्डाकार हैं कछुए का मध्य भाग, जिसे हम इनकी नाभि समझ सकते हैं, उसको मध्य देश मानना चाहिए। मध्य देश आदि काल से कर्क रेखा पर स्थित उज्जैन नगरी को माना जाता है। अगर हम प्राचीन भारत का नक्शा देखें तो उज्जैन पूर्णतः भारत की नाभि के स्थान पर पड़ेगा। किन्तु कूर्म चक्र में भारत से बाहर के देशों के नाम भी बताए गए हैं जिनमें विघटन से पहले का रूस, वर्तमान चीन,

ईरान, अरब की खाड़ी के देश, वर्तमान श्री लंका आदि का वर्णन है। वर्तमान पाकिस्तान, अफगानिस्तान, म्याँमार, नेपाल, बांग्ला देश आदि उस समय भारतवर्ष के ही अंग थे। जहाँ कुछ विद्वान कूर्म चक्र को पूरे विश्व पर लगाने की संस्तुति करते हैं, वहीं कुछ अन्य वर्तमान एशिया महाद्वीप तक ही इसकी सीमा मानते हैं। बहरहाल, कूर्म चक्र को पूरे विश्व पर लगाने की संस्तुति करते हैं, वहीं कुछ अन्य वर्तमान एशिया महाद्वीप तक ही इसकी सीमा मानते हैं। बहरहाल, कूर्म चक्र भारत भूमि के लिए तो सर्वथा उपयोगी है, यह निर्विवाद है। अतः अधिक समय सिद्धान्तों में न लगाते हुए सीधे इस चक्र को समझ लेते हैं।

सबसे पहले मान लीजिए कि नीचे दिए गए चित्र के अनुसार श्री कच्छप भगवान बैठे हैं जिनकी नाभि में तीन नक्षत्र, क्रमशः तिका, रोहिणी और मृगशिरा स्थापित कीजिए। कच्छप भगवान का मुख पूर्व दिशा में है। वहाँ अगले तीन नक्षत्र, अर्थात् आर्द्रा, पुनर्वसु तथा पुष्य की कल्पना करें। पूर्व और दक्षिण के मध्य में, जिसे हम अग्नि या आग्नेय दिशा जनते हैं, कच्छप भगवान का अगला दाहिना पाँव है। उस दिशा में अगले तीन नक्षत्र अर्थात् आश्लेषा, मघा तथा पूर्व फाल्गुनी स्थापित कर लें। अब दक्षिण दिशा, जो कच्छप भगवान के दाहिने अगले और पिछले पाँवों के बीचो बीच है, में अगले तीन नक्षत्र, अर्थात् उत्तर फाल्गुनी, हस्ता तथा चित्रा की कल्पना करें। श्री कच्छप भगवान का दाहिना पिछला पाँव

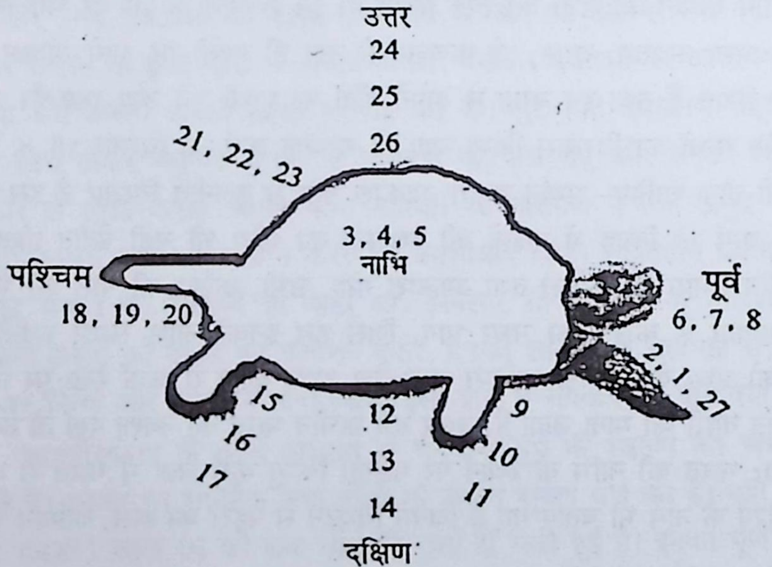

दक्षिण–पच्छिम दिशा अर्थात् नैऋत्य दिशा बताता है। वहाँ का निर्धारण अगले तीन नक्षत्रों, अर्थात् स्वाति, विशाखा और अनुराधा से होता है। इसी प्रकार पच्छिम (ज्येष्ठा मूला पू० षाढ़ा), वायव्य अर्थात उत्तर–पच्छिम (उ० षा०, श्रवण, धनिष्ठा), उत्तर तथा ईशान (उत्तर–पूर्व) दिशाओं में जो क्रमशः कच्छप भगवान की पूँछ, पिछला बायाँ पाँव, बायें पाँवों का मध्य तथा अगला बायाँ पाँव बताते हैं, क्रम से तीन–तीन नक्षत्र बैठा लें। इस प्रकार ईशान के नक्षत्र पूर्व भाद्र पद, उत्तर भद्रपद तथा रेवती हो गये। इस प्रकार कूर्म चक्र से नौ देशों का पता चलता है। प्रत्येक देश के तीन नक्षत्रों के नाम हमने पहले बता दिये हैं। इन्हें हम वराह मिहिर के कूर्म विभाग अध्याय के अन्तिम दो श्लोकों (32–33) में फिर से देखते हैं।

(1) मध्य देश (कृतिका, रोहणी, मृगश्रृरा)– पांचाल, (2) पूर्व देश (आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य)– मगध, (3) दक्षिण पूर्व (आग्नेय) देश (आश्लेषा, मघा, पूर्व फाल्गुनी)– कलिंग, (4) दक्षिण (उत्तर फाल्गुनी, हस्त, चित्रा)– अवन्ति, (5) दक्षिण पश्चिम नैऋत्य देश (स्वाति, विशाखा, अनुराधा)– अनार्त, (6) पश्चिम देश (ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा)–सिन्धु सौवीर, (7) पश्चिम उत्तर (वायव्य) देश (उत्तराषाढ़ा श्रवण, धनिष्ठा)–हारहौर (सिन्धु तथा झेलम नदी के बीच का क्षेत्र तथा जो नमक के पहाड़ों से लगा है।), (8) उत्तर देश (शतभिषा, पू० भाद्रपद, उत्तर भाद्रपद)–मद्र तथा (9) उत्तर–पूर्व (ईशान देश रेवती, अश्वनी, भरणी)–कौणिन्द।

यह तो हुआ वृहद् कूर्म चक्र। इसे "पृथ्वी कूर्म चक्र" कहते हैं। इसका आरंभ मध्य देश (कृतिकादि तीन नक्षत्रों) से होता है तथा ईशान कोण में भरणी नक्षत्र में इसकी इतिश्री होती है। इसमें फलादेश बहुत सरल है। कहा गया है कि **"कृतिकादि त्रिकाद्ये मे क्रूर विद्धे च कूर्मतः। देशा नाभिस्थ देशाद्या विनश्यन्ति यथा क्रमम्"**। अर्थात् जो भी नक्षत्र क्रूर ग्रह से पीड़ित हों (जहाँ क्रूर ग्रह बैठे हों या जिसका वेध कर रहे हों) उस नक्षत्र की दिशा में पीड़ा होने की संभावना है।

हम जब इसे अत्यन्त स्थूल स्तर पर देखते हैं। तो मात्र उस दिशा का ध्यान करते हैं जो पीड़ित नक्षत्र से पता चलती है। उदाहरण के लिए 12 मई 2008 की ग्रह स्थिति देखें। उस दिन शनि, मंगल, राहु तथा सूर्य क्रमशः मघा (आग्नेय कोण), पुष्य (पूर्व), धनिष्ठा (उत्तर) तथा कृतिका (मध्य क्षेत्र) नक्षत्रों में थे।

उसी समय म्यांमार में भंयकर बाढ़ और वर्षा, चीन में भूकम्प, बांग्लादेश में समुद्री तूफान आदि आए। उसके ठीक बाद भारत में ही राजस्थान में 5 जून को जनाक्रोश आया। तत्काल बाद ही जम्मू कश्मीर में श्राईन बोर्ड का झगड़ा प्रारम्भ हुआ जिसकी परिणति कांग्रेसी सरकार के त्यागपत्र से हुई। इस वर्ष बेमौसम की बरसात के कारण उत्तर भारत, उत्तर पूर्वी भारत, दक्षिण पूर्वी भारत तथा मध्य भारत बहुत तबाही झेलते रहे। यह तो हुआ पृथ्वी कूर्म चक्र।

इसी प्रकार के चार अन्य कूर्म चक्रों की चर्चा भी है– इनके नाम हैं 'देश', 'नगर', 'ग्राम' तथा 'क्षेत्र' कूर्म चक्र। इन्हें बनाने की विधि भी सरल है। मान लीजिए इन्द्रपस्थ नगर का कूर्म चक्र बनाना है। 'इन्द्रप्रस्थ' शब्द का पहला अक्षर 'ई' शब्द कृतिका नक्षत्र के द्वितीय चरण का द्योतक है। सुधी पाठकों को नक्षत्रों के चरणाक्षरों को देखने के लिए अ, व, क, ह, डा, चक्र की शरण में जाना होगा जो सभी पांचांगों में उपलब्ध है। अतः "इन्द्रप्रस्थ नगर" का कूर्म चक्र पृथ्वी कूर्म चक्र जैसा ही होगा क्योंकि कृतिका, रोहिणी तथा मृगशिरा इसके मध्य में ही आएंगे। वैस भी उज्जैन और इन्द्रप्रस्थ में अधिक अन्तर नहीं है। किन्तु यदि पाटलिपुत्र नगर का कूर्म चक्र बनाना हो तो चूँकि 'पा' उत्तर फाल्गुनी के तीसरे चरण का अचर है इसलिए मध्य देश में उत्तर फाल्गुनी, हस्त, चित्रा तीन नक्षत्र पूर्व में स्वाति, विशाख तथा अनुराधा, पूर्व दक्षिण (आग्नेय) में ज्येष्ठा, मूल तथा पूर्वाषाढ़ा, दक्षिण में उत्तरषाढ़ा, श्रवण तथा धनिष्ठा, दक्षिण पच्छिम (नैऋत्य) में शतभिषा, पूर्व भाद्र पद तथा उत्तर भाद्रपद, पच्छिम में रेवती, अश्विनी तथा भरणी, पच्छिम उत्तर (वायव्य) में कृतिका, रोहिणी तथा मृगशिरा, उत्तर में आर्द्रा, पुनर्वसु तथा पुष्प एवं उत्तर–पूर्व (ईशान) में आश्लेषा, मघा तथा पूर्वफाल्गुली स्थापित करना होगा। अब इनमें जिस दिशा के द्योतक नक्षत्र पर घातक प्रभाव होंगे, उस दिशा में प्राकृतिक आपदाओं तथा शत्रु के प्रकोप की संभावना होगी।

यह तो कूर्म चक्र का सामान्य प्रयोग हुआ। लेकिन ऊपर लिखा श्लोक अगर ध्यान से पढ़ा जाए तो लगता है बात इतनी सरल नहीं है। श्लोक में कहा गया है कि क्रूर ग्रह जिस नक्षत्र पर बैठे हों या जिस नक्षत्र का वेध कर रहे हों, उससे निरूपित दिशा प्रभावित होगी। कूर्म चक्र में ग्रहों द्वारा नक्षत्र वेध का वर्णन नहीं है किन्तु कूम्र चक्र से पहले ही हमने सर्वातोभद्र चक्र की विशद चर्चा की ओर ले चलते हैं जहाँ किसी ग्रह के नक्षत्र विशेष में हाने से पाँच वेध हो सकते हैं जो क्रमशः (1) स्वर (2) नक्षत्र (3) नामाक्षर (वर्ण) (4) जन्म राशि तथा

(5) तिथि एवं वार कहे गए। हम वात, दक्षिण तथा सम्मुख वेध के बारे में जान चुके हैं। आइए, एक बार फिर से स्मरण करें कि मार्च 2008 से 28 जुलाई 2008 तक शनि मघा में तथा इसके बाद पूर्व फाल्गुनी में आ गए। शनि इस बीच कभी भी वक्री नहीं हुए तथा सदा सिंह राशि में रहे। इन दिनों सूर्य क्रमशः कुम्भ, मीन, मेष आदि राशियों में भ्रमण करते रहे। मई के मध्य में सूर्य वृषभ में रहे जब शनि सिंह में होने के कारण सम गति से चल रहे थे तथा सम्मुख वेध (वह भी नक्षत्रों की ही) कर रहे थे। इस प्रकार शनि से प्रभावित नक्षत्र मघा एवं सम्मुख वेध के कारण भरणी हुए। ये नक्षत्र क्रमशः आग्नेय तथा ईशान दिशा की ओर संकट इंगित करते हैं। मघा के अक्षर हैं– मा, मी, मू, तथा में एवं भरणी के अक्षर हैं– ली, लू, ले तथा लो। अगर हम तालिका में देखेंगे तो आश्चर्य होगा कि आग्नेय के संकट में होने का अर्थ है बंगाल की खाड़ी से प्रारंभ करके झारखण्ड, बिहार तथा मध्य प्रदेश में अमर कण्टक तक यह प्रभाव दिखना चाहिए। सच्चाई भी यही है कि इन दिनों ही इन इलाकों में अकल्पनीय वर्षा तथा आँधी का प्रकोप हुआ। इसी ईशान का अर्थ है चीन से लेकर कश्मीर, नेपाल, असम तथा म्यानमार तक। अगर हम अखबार के पन्नों को पलटें तो पाएंगे कि प्रायः इन सभी स्थानों में प्राकृतिक आपदा के अतिरिक्त कमोबेश राजनैतिक उथल–पुथल चलती ही रही। यह तो मात्र शनि की कृपा के फल हुए। आइए अब दुष्ट शिरोमणि मंगल महाराज, शनि तुल्य राहु तथा सूर्य भगवान के प्रभावों का भी अध्ययन करते हैं मंगल भी 21 जून तथा 14 जुलाई 2008 को क्रमशः मघा और पूर्व फाल्गुनी में रह कर शनि की भांति ही पूर्वी, उत्तर पूर्वी तथा उत्तरी भारत को प्रभावित करते रहे। राहु का प्रभाव देखना बड़ा विस्मयकारी होगा। लम्बे अन्तराल तक एक ही नक्षत्र में रहने वाले राहु अप्रैल, जून, जुलाई 2008 आदि मासों में धनिष्ठा (मकर राशि) में रहे। धनिष्ठा पच्छिम दिशा की ओर इंगित करते हैं। धनिष्ठा के अक्षर 'गा' 'गी' 'गू' तथा 'गे' हैं। उत्तरी पच्छिम दिशा से कूर्म चक्र में हिमालय, अफगानिस्तान, पाकिस्तान की नमक की पहाड़ी, बिलोचिस्तान आदि का वेध होता है। सभी पाठक जनते हैं कि रावलपिण्डी में बेनजीर भुट्टो मारी गयी, रूस में आग लगी, जम्मू कश्मीर में ध्वज भंग हुआ अर्थात् जुलाई की शुरुआत में ही वहाँ की कांग्रेसी सरकार का त्याग पत्र हुआ तथा ठीक उसके बाद ही, अफगानिस्तान स्थित भारतीय दूतावास के आगे, मानव बम फटने से जान माल की भारी हानि हुई। अब इसे सर्वतोभद्र चक्र में देखते

हैं। राहु सदैव वक्री होते हैं तथा उनकी मात्र दक्षिण दृष्टि होती है। राहु को ध निष्ठा में बैठाने से उनकी दक्षिण दृष्टि के कारण श्रवण का वेध हो रहा है। श्रवण नक्षत्र वायव्य दिशा (उत्तर पच्छिम) बताता है। कूर्म चक्र में यह क्षेत्र क्रमशः हिमालय, ईरान, अफगानिस्तान, तिब्बत से लेकर राजस्थान तक फैला हुआ है।

सजग पाठक परिचित ही हैं कि चीन के ओलम्पिक को लेकर तिब्बत में हिंसा तथा राजस्थान का गुर्जर आन्दोलन इन्हीं दिनों अपने प्रचण्ड रूप में तांडव करता रहा। यह सब कुछ राहु के सर्वतोभद्र चक्र पर प्रयोग करने से स्पष्ट हो जाता है। अन्त में सूर्य को कूर्म चक्र पर रखकर देखते हैं। जून 2008 में सूर्य मृगशिरा (वृषभ, मिथुन) में रहे। बाद में वे आर्द्रा (मिथुन) में जुलाई 2008 में आ गए। अर्थात् पूरब्र दिशा अस्त हो गयी तथा इस दिशा के नक्षत्र भी अस्त हो। मृगशिरा मध्य देश का परिचायक है। यह उत्तर में कुछ क्षेत्र तक, कुरूक्षेत्र तथा पश्चिम में राजस्थान में दूर तक फैला हुआ है। इन क्षेत्रों में आन्दोलन के अतिरिक्त खाद्य पदार्थों के मूल्यों में अत्यधिक वृद्धि हुई। सर्वतोभद्र चक्र में मृगशिरा नक्षत्र पर सूर्य को रखें। सूर्य सदा तीव्र गामी कहे गए अतः इनमें मात्र दक्षिण दृष्टि हुई जिससे रेवती नक्षत्र का वेध हुआ। कूर्मा चक्र में रेवती उत्तर पूर्व दिशा (ईशान कोण) दर्शाती है। हमने पहले ही देखा है कि ईशान कोण में नेपाल, असम, म्यानमार, कश्मीर, गढ़वाल आदि क्षेत्र आते हैं। हमने यह भी देखा कि इन क्षेत्रों में यह कुछ बड़ा अशान्त और असुरक्षित रहा। इन क्षेत्रों में आई अभूतपूर्व बाढ़ ने अकल्पनीय विनाश तो किए ही, प्राकृतिक उत्पातों के अतिरिक्त ये इलाके राजैतिक उथल-पुथल के शिकार रहे। यह है कूर्म चक्र तथा सर्वतोभद्र चक्र का सम्मिलित तथा सूक्ष्म प्रयोग।

एक प्रश्न मन में स्वाभाविक रूप से उठता है कि क्या कूर्म चक्र से मात्र आपात स्थिति का पता चलता है या कि यह चक्र कुछ शुभ फलों की ओर भी इशारा कर सकता है क्योंकि कूर्मावतार तो शुभता, सत्य की रक्षा तथा धर्म की स्थापना के लिए हुआ था तथा सर्वतोभद्र चक्र का प्रयोग सभी पूजा-पाठ में कलश स्थापना के लिए किया ही जाता है। यद्यपि आर्ष साहित्य में मात्र पाप ग्रहों के गोचर फल की चर्चा है पर ज्योतिष शास्त्र का वैज्ञानिक उपयोग भी परमावश्यक है। अनुभव में आया है कि जिन नक्षत्रों में शुभ ग्रह होते हैं, कूर्म चक्र में उन्हें देखने से जिन स्थानों का पता चलता है, वहाँ शुभता आती है। इस शुभता से तात्पर्य यह है कि उन दिशाओं में कोई आपदा, विपदा नहीं आती। वहाँ

मौसम सामान्य रहता है, न अधिक न कम वर्षा, समय से ऋतु परिवर्तन तथा राजा पर कोई आपदा नहीं रहती। इसे भी हम अप्रैल से जुलाई 2008 के बीच बृहस्पति ग्रह के गोचर से समझेंगे। गुरु 9 मई से वक्री होकर पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में रहे। पूर्वाषाढ़ा पच्छिम दिशा के द्योतक हैं। कूर्मचक्र में पच्छिम के देशों की ओर दृष्टिपात करें तो उधर ईरान, बलूचिस्तान, स्यालकोट, नार्थ वेस्ट फ्रन्टियर आदिश प्रदेश आते हैं। जो अपेक्षाकृत शान्त रहे। अब बृहस्पति को सर्वतोभद्र चक्र पर लगा कर देखते हैं। वक्री ग्रह होने के कारण गुरु वाम भेद करेंगे। वहाँ नक्षत्र है उत्तराभाद्रपद जो उत्तर दिशा का प्रतीक है। अब देखिए उत्तर दिशा पर बृहस्पति के प्रभाव हाने के कारण उक्त समय में उत्तराखण्ड, सिक्किम आदि राज्यों में शान्ति बनी रही। यह है गोचर, कूर्म चक्र तथा सर्वतोभद्र चक्र का सम्मिलित प्रयोग। नीचे की तालिका में बृहद्संहिता के आधार पर विभिन्न देशों में वर्णित स्थानों को आधुनिक स्थानों से जोड़ने का प्रयास किया गया है। जिन स्थानों का पता नहीं चल पाया वहाँ × चिह्न लगा दिया गया है।

मध्य देश (कृतिका, रोहिणी तथा मृगशिरा) : भद्र–×, अरिमेद– मथुरा के पास, माण्डव्य–गढ़ मुक्तेश्वर, साल्व–अलवर (राजस्थान), नीप–×, उज्जिहान–उज्जैन, संख्यात–छत्तीसगढ़, मरु–राजस्थान का मरुस्थल, भू–×, वत्स–इलाहाबाद, घोष–मथुरा, यामुना–यमुना का पूर्वीतट, सारस्वत–कुरुक्षेत्र, मत्स्य–जयपुर भरतपुर, माध्यमिक–चित्तौड़, माधुरक–मथुरा के उत्तर, उपज्योतिषा–×, धर्मारण्य–हाजारी बाग, शूरसेन–मथुरा, गौरग्रीव–राजस्थान का पर्वतीयभाग, उद्देहिक–बुलन्दशहर, पाण्डुगुड–गढ़वाल, अश्वस्थ–कानपुर, पांचाल–गंगा के उत्तर से लेकर कन्नौज तथा चम्बल नदी, साकेत–अयोध्या, कंक–×, कुरु–कुरुक्षेत्र, कालकोटि–×, कुकुर–चित्तौड़/उदयपुर, परियात्र पर्वत–अरावली/राजस्थान, औटुम्बर–×, कापिष्ठल–मेरठ, गजाहय–हस्तिनापुर,

पर्व देश (आर्द्रा, पुनर्वसु और पुष्य)- अंजन–×, वृषभध्वज–बिहार, माल्यावान पर्वत–आसाम, व्याघ्रमुख–×, सुह्य–चटगाँव, कर्वट–बंगाल में दामोदर नदी के पास, चन्द्रपुर–बंगाल में रानीगंज के निकट, शूर्पकर्ण–×, खस–आसाम, मगध–पटना/गया/राजगीर, शिविर गिरि–×, मिथिला–दरभंगा/भागलपुर, समतर–24 परगना/सुन्दरवन, उड्र–उडीसा, अश्ववदन–बिहार (शाहाबाद), अतुरक–पुरी (उडीसा), प्रागज्योतिष–गौहाटी (कामख्या देवी), लौहित्तय–लोहित नदी/आसाम, क्षीरोद–समुद्रतट (ब्रह्मपुत्र नदी), पुरुषाद–आरा, उदयगिरि–भुवनेश्वर के निकट,

भद्र–सोन नदी के पास, गोडक–ढाका/मुर्शिदाबाद/मालदा, पौंड्र–मिदनापुर, उत्कल–उड़ीसा, काशी–वाराणसी, मेकल–अमरकण्टक, अम्बष्ट शाहाबाद (बिहार), एकपद–उड़ीसा (इन्द्रावती नदी के पास), ताम्रलिख–मिदनापुर, कोशलक–महानदी के निकट महाकौशल, वर्द्धमान–बंगाल के क्षेत्र।

दक्षिण पूर्व (आश्लेषा, मघा तथा पूर्वाफाल्गुनी): कौशल–आधुनिक अवध (लखनऊ) का पास/विलासपुर, कलिंग–भुवनेश्वर तथा जगन्नाथपुरी, बंग–मुर्शिदाबाद/जेसोर, उपबंग–गंगा डेल्टा का पूर्वी भाग, जठरांग–अंगदेश का मध्यभाग, शौलिक–उडीसा का एक भाग, विदर्भ–वरार/खानदेश, वत्स–यह भी बरार में हुआ, आन्ध्र–गोदावरी तथा कृष्णा का मध्य भाग चेदिक–बुन्देलखण्ड, उर्ध्वकण्ठ–महेन्द्र पर्वत (उड़ीसा), वृष–राजगीर, नालिकेर–नीकोबार द्वीप, चर्मद्वीप–अंडमान टापू, विन्ध्यान्तवासी–बघेलखण्ड/विन्ध्याचल; त्रिपुरी–नर्मदा के तट पर, श्मश्रुधर–पंचमढ़ी (मध्प्रदेश), हेमकुड्य–×, व्यालग्रीव–×, महाग्रीव–×, किष्किन्धा–बेलारी जिले में विजय नगर, कण्टकस्थल–अमरकण्टक; निषादराष्ट्र–विन्ध्याचल और सतपुड़ा पर्वत के बीच का भ्ळााग, पुरिक–सतपुड़ा पर्वत, दशार्ण–छतरपुर (म॰ प्र॰), नग्नशबर–×, पर्णशबर–×।

उत्तर पच्छिम (उत्तराषाढ़ा, श्रवण तथा धनिष्ठा): माण्डव्य–जोधपुर के पास, तुषार–अफगानिस्तान, ताल–तिब्बत, हल–तिब्बत, मद्र–रावी और झेलम का मध्यवर्ती भाग, अश्मक–सिन्धुनदी के निकट का प्रदेश, कुलूत–कुल्लू, हलड–×, स्त्रीराज्य–हिमाचल में सतलुज के निकट, नृसिंहवन–ईरान, वेणुमती–उत्तरी अफगानिस्तान, खस्य–ईरान, फल्गुलुक–कुरुक्षेत्र, गुलुह–आबू पर्वत, मरुकुच्य–सांभर झील, चर्मरगांख्य–राजस्थान, एकविलोचन–बलूचिस्तान, शूलिक–बलूचिस्तान, दीर्घग्रीव/दीर्घास्य/दीर्घकेश–सिन्धु घाटी बलूचिस्तान।

दक्षिण दिशा (उत्तरा फा॰ हस्त एवं चित्रा): लंका–श्रीलंका, कालीजन–मद्रास के पास, सौरिकृष्णा–नासिक के पास, तालिकट–बीजापुर, गिरिनगर–गिरनिार पर्वत, मालय–दर्दुर नीलगिरि, महेन्द्र–गंजाम से तिनेवेली तक, मालिन्द्य–तंजावुर, मरुकच्छ–×, कंकट–दण्डकारण्य में गोदावरी के दक्षिण, टंकण–चेनैई, वनवासी–×, शिविक–×, फणिकार–चेनैई, कोंकण–महाराष्ट्र, आभीर–गुजरात/महाराष्ट्र, आकर–खानेदश, वेणा–बेनगंगा जो गोदावारी में मिलती है, आवर्त्तक–मध्यप्रदेश में, दशपुर–मन्दसोर, गोनर्द–कोयम्बटूर, केरलक–केरल, चित्रकूट–चित्रकूट, नासिक्य–नासिक, कोल्लगिरि–त्रिवेन्द्रम, चोल–महेन्द्र पर्वत,

चेर–मालावार, क्रौंचद्वीप–×, जटाधर–रामेश्वरम्, कावेरी–दक्षिण भारत की नदी, ऋष्यमूक–पर्वत वैदूर्य/शंख/मुक्ता–समुद्रतटा, अत्रि–चित्रकूट, वारिचर–जलगाँव, धर्मपट्टन–कालीकट, द्वीप–×, गणराज्य–चेर/चोल/पांडय आदि, कृष्णावेल्लूर –विल्वपुर, पिशिक–गोदावरी जिले में, शूर्पादि–सतपुड़ा की पहाड़ी, कुसुमनग–रायचूर, तुम्बवन–नर्मदा का किनारा, कार्मप्यक–×, याम्योदधि–दक्षिण का महासागर, तापस आश्रम–×, ऋषिक–×, काञ्ची–कांची, मरुचीपततन–मद्रास के निकट, कार्यक–नासिक के निकट, सिंघल–श्रीलंका, ऋषभ–मध्यप्रदेश में, बलदेवपत्तन–कावेरी के निकट, दण्डक वन–दण्डकारण्य, तिमिगलाशन–मध्य प्रदेश में, भद्र–×, कच्छ–इसे नैऋत्य में हानो चाहिए, कुञ्जरदरी–एलिफेंटा, ताम्रपर्णी–×।

दक्षिण पश्चिम (नैऋतय) - (स्वाती, विशाखा एवं अनुराधा): पल्वह–सौराष्ट्र, काम्बोज–खम्भात (गुजरात), सिन्धुसौवीर–सिन्धु और झेलम के बीच का भाग, बडवामुख–लालसागर, आरव–अरब, अम्बष्ट–गिरिनार पर्वत पर अम्बा देवी का स्थान कपिल–नासिक के निकट कपिल धारा, नारी मुख×, आनर्त–साबरमती, फेणगिरि–सिन्धु नदी के अन्तिम हिस्से का एक पर्वत, यवन–अरब देश, मार्गर–बलूचिस्तान का एक भाग, कर्ण प्रावेय–काठियावाड़, पारशव–फारस/ईरान, शुद्र–सिन्धु नदी का दक्षिणी भाग, बर्बर–सिन्धुतट पर, किरातखण्ड–कराची के पास, क्रव्याद–नासिक के पास, आभीर–गुजरात में अनार्त से उत्तर, चंचूक–आन्ध्रप्रदेश, हेमगिरि–मैसूर, सिन्धु–सिन्ध, कालक–×, रैवतक, गिरिनार के निकट, सौराष्ट्र, सूरत, बादर–अजमेर के आसपास, द्रविड़–मैसूर का भूखण्ड, महार्णव–महासागर।

पश्चिम (ज्येष्ठा–मूल एवं पूर्वाषाढा): मणिमान–पश्चिम का पर्वत, मेघवान–मालवा में पर्वत, वनौघ–जंगली प्रदेश, क्षुरार्णण–खुरासन, अस्तगिरि–माउण्ट आबू, अपरान्तक–सह्याद्रि पर्वत हैहय–माहिष्मती का क्षेत्र, प्रशस्ताद्रि–सुलेमान पर्वत, वोक्काण–मक्का, पंचनद–पंजाब, रमठ–गजनी के पास का क्षेत्र, पारत–ईरान, तारक्षिति जृग–बलूचिस्तान के दक्षिण में पर्वत, वैश्य–×, कनक–मालवा में, शक–ईरान और अफगानिस्तान की सीमा स्यालकोट, निर्मर्वादित/म्लेच्छ–नार्थ वेस्ट फ्रन्टीयर।

उत्तरः (शतमिषां, पू० भाद्रपद एवं उत्तरभाद्र पद): कैलास–पर्वत–मानसरोवर, हिमवान्/वसुमान्/धनुष्मान्/क्रौचगिरि–ये सब हिमालय पर्वत तथा उसके हिस्से हैं; मेरु पर्वत–उत्तरी ध्रुव, उत्तर कुरु–रूस का दक्षिणी भाग,

क्षुद्रमीन–×, कैकय–झेलम/शाहपुर, वसाति–रावलपिण्डी, यामुन–यमुना का पच्छिम तट, भोगप्रस्थ–×, अर्जुनायन–भरतपुर, आग्नीध्र–टिहरी गढ़वाल, आदर्श–×, अन्तर्द्वीप–हिमालय में, त्रिगर्त–सतलुज, रावी और व्यास के मध्य का भूभाग, तुरगानन–तुर्कमान–(रूस में), अश्वमुख–झेलम के निकट, केशधन–काशीपुर (नैनीताल), चिपिट नासिक–तिब्बत/भूटान/सिक्किम, दासरेक–×, वाटधान–सतलुज के पूर्व का प्रदेश, शरधान–हिमालय में, तक्षशिला–रालपिण्डी के पास, पुष्करावर्त्त–पेशावर के पास, कैलावर्त–हिमालय में, कष्टधान–जम्मू, अम्बर–अबरावत, मुदक–झेलम के निकट मुद देश, मालव–रावी और चिनाव के बीच का दोआब/लायलपुर (पाकिस्तान), गौरव–झेलम एवं चिनाव के बीच का राज्य, वत्स–×, कच्छार–×, (कान्धार हो सकता है), दर्णपिंगलक–×, माणहल (माणा दर्रा) हिमालय में, हूण –मध्य एशिया, कोहल–कोहाट, शीतल–हिमालय में, माण्डव्य–माण्डू ऋषि का आश्रम–(वर्त्तमान पौण्टा साहब) भूतपुर–भूटान, गान्धार–कंधार, यशोवति–देवप्रयाग, हेमताल–हिमालय, राजन्यखचर–होशियारपुर, गव्य–पंजाब में गुजरात जिला, यौधेय–बहावलपुर, दासलेय–जलंधर, श्यामाक–चित्राल, धूर्त्तदेश–×।

ईशान (रेवती, अश्विनी एवं भरणी): मेरुक–उत्तर दिशा में आ चुका है, नष्टराज्य–चीन का रेगिस्तानी भाग, पशुपाल–उत्तर दिशा में पशु चराने वालों का स्थान, हिमालाकीर–त्रिगर्त के पास का क्षेत्र (पंजाब), काश्मीर–कश्मीर, या उत्तर पूर्व का कोई नगर, अभिसार–राजौरी (कश्मीर), दरद–कश्मीर, तंगण–हिमालय, कुलूत–कुल्लू, सैरिन्ध–×, वनराष्ट्र–असम, डामर–असम, किरात–नेपाल या असम, कौणिन्द–×, भल्ल/पटोल–असम, जटासुर–नेपाल में, कुनट–असम की आदिवासी जाति, खस–असम में खासी जाति, घोष–असम, एक चरण–×, अनुविद्ध–×, सुवर्ण भू–बर्मा (म्यानमार) इरावदी के निकट का भाग, वसूधन–नेपाल में, दिविष्ठ–×, पौरव–भूटान, चीर निवसन–चेरापूंजी, त्रिनेत्रा–त्रिपुरा, मुंजादि–पूर्वी असम, गान्धर्व–मणिपुर/असम।

त्रिनाड़ी चक्र

हम जानते हैं कि आयुर्वेद में शरीर में तीन दोष, क्रमशः वात, पित्त तथा श्लेष्म या कफ कहे गए हैं। इनको तीन नाड़ी कहा गया है। जब विवाह के लिए

कन्या तथा वर की कुण्डली मिलान करते हैं तब भी तीन नाड़ियाँ जिन्हें क्रमशः आद, मध्य तथा अन्त्य कहा जाता है, विचारणीय होती है। इन्हें एक चित्रकार रूप में प्रस्तुत किया जता। है। हमारे ऋषियों ने नक्षत्रों को कई प्रकार से विभाजित किया. है। इसका एक प्रकार त्रिनाड़ी चक्र कहलाता है जिससे कई प्रकार की सटीक सूचनाएं, शीघ्र और बिना अधिक श्रम के, प्राप्त हो जाती हैं। इसे बनाना बहुत सरल है।

अर्दाद्यं विलिखेचक्रं मृगान्तं च त्रिनाड़िकम्।
भुजङ्गसदृशाकारं मध्ये मूलं प्रतिष्ठितम्।।1।।
यद्दिने एकनाड़ीस्थाश्चन्द्र नामर्क्षभास्कराः।
तद्दिनं वर्जयेत्तस्य विवादे विग्रहे रणे।।2।।
रोगिणो जन्मऋक्षस्य एकनाड्यां यदा शशी।
तदा पीड़ां विजानीयादष्टप्राहरिकी ध्रुवम्।। 3।।
रोगिणो जन्मऋद्वक्षस्य एकनाड्यां यदारविः।
यावदृक्षं भवेभ्दोग्यं तावत्पीड़ा विनिर्दिशेत्।।4।।
रोगिणां जन्मऋक्षस्य एकनाड्यां यदा भवेत्।
जन्मऋक्षं रविश्चन्द्रस्तदा मृत्युं समादिशेत्।।5।।
जन्मऋक्षं रविश्चन्द्रो भवेद्यदि कथञ्चन।
अन्यास्वन्यासु नाड़ीषु तदा नीरोगता भवेत् ।।6।।

उपर्युक्त श्लोकों का अर्थ हुआ कि नीचे दिए गए चित्र के अनुसार एक सर्पाकृति बना कर उसमें आर्द्रा से मृगशिरा तक के 27 नक्षत्रों को इस प्रकार बैठाते हैं कि 'मूल' नक्षत्र इस आकृति के बीच में पड़े।

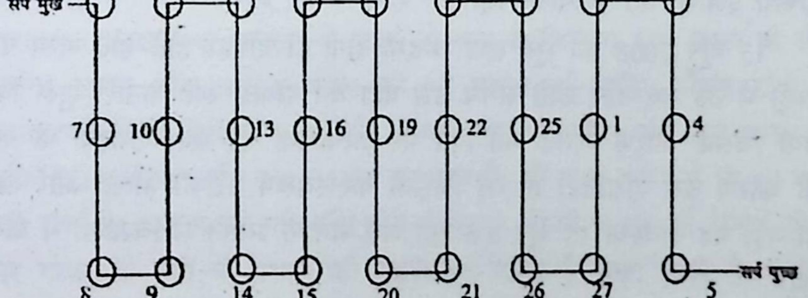

अब इसके फल देखिए। यदि नाम नक्षत्र, सूर्य तथा चन्द्रमा एक ही नाड़ी में पड़ जाएं तो उस दिन विवाद, विग्रह (झगड़ा) तथा रण (लड़ाई) से बचना चाहिए।

इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति ज्वर से पीड़ित हो तथा उसका जन्म नक्षत्र तथा चन्द्रमा एक ही नाड़ी में पड़ जाएं तो उसकी पीड़ा आठों प्रहर (या जब तक चन्द्रमा नाड़ी परिवर्तन न कर ले) बढ़ती रहेगी। इसी प्रकार जब तक गोचर के जन्म नक्षत्र तथा गोचर के सूर्य एक ही नाड़ी में हैं तब तक रोगी की पीड़ा बनी रहती है।

यदि कोई व्यक्ति बहुत बीमार है तथा उसका जन्म नक्षत्र, चन्द्रमा एवं सूर्य एक नाड़ी में आ जाए तो जातक की मृत्यु की सम्भावना हो जाती है। यदि ये तीनों अलग-अलग नाड़ियों में आ जाए तो जातक निरोग हो जाता है। इसकी अनुभूति कई ज्योतिष मर्मज्ञों को भी हुई है।

आइये इसे एक उदाहरण से समझते हैं। एक जातक का जन्म 16 सितम्बर 1977 को सुबह 6:40 मिनट पर बिहार में हुआ। इनका जन्म नक्षत्र चित्रा है। 21 मार्च 2008 को जातक ने अपना रूट कनाल खत्म करवा के नया दांत लगवाया किन्तु उनको कोई राहत नहीं मिली। 22/23 मार्च 2008 को जैसे ही सूर्य उत्तर भाद्रपद और चन्द्रमा हस्त से जन्म नक्षत्र चित्रा में आए, जातक को नए दांत के कारण अत्यधिक पीड़ा सहनी पड़ी। अर्थात् तीनों एक ही नाड़ी में आ गए थे। दर्द तक कम होने लगा जब चन्द्रमा विशाखा नक्षत्र में पहुंचे।

जातक ने महीने भर कभी-कभी हल्का-हल्का दर्द महसूस किया और जब-जब इस दौरान चन्द्रमा जन्म नक्षत्र की नाड़ी से गुजरे हर बार जातक को पीड़ा हुई किन्तु सूर्य के उसी नाड़ी में नहीं होने के कारण जातक को उस समय दोबारा इलाज नहीं करवाना पड़ा।

13 जून 2008 को सूर्य तथा चन्द्रमा दोनों ही दोपहर होते-होते जन्म नक्षत्र नाड़ी में आ गए ओर उसी समय उस दांत का दोबारा रूट कनाल शुरू किया गया जिसके कारण जातक को दिन भर अत्यधिक दर्द रहा। दवाइयों के असर के कारण उसे ऐसिडिटी हो गई जिसके फलस्वरूप उसकी हालत और खराब हो गई। यह अवस्था 15 जून तक रही जब चन्द्रमा स्वाति से विशाखा में प्रविष्ट-हुए।

19 जून 2008 को, जब सूर्य मृगशिरा में थे, गोचरस्थ चन्द्रमा मूल से पूर्वा आषाढ़ में शाम को 6 बजे आए तब धीरे-धीरे जातक की तबीयत खराब होने लगी और करीब आठ प्रहर तक खराब ही रही हालत ऐसी हुई कि कोई भी दवा काम नहीं आई। जन्म नक्षत्र, चन्द्र और सूर्य तीनों एक ही नाड़ी में थे। आठ प्रहर के बाद हालात में सुधार तक आना शुरू हुआ जब चन्द्रमा ने उत्तर आषाढ़ में प्रवेश किया। हालात पूरी तरह काबू में तब आए जब सूर्य भी मृगशिरा को छोड़ कर 21 जून की रात 9:45 बजे आर्द्रा नक्षत्र में गए।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि त्रिनाड़ी चक्र में दैनिक स्थिति का अच्छा खासा आभास हो जाता हैं।

चन्द्रकालानल चक्र

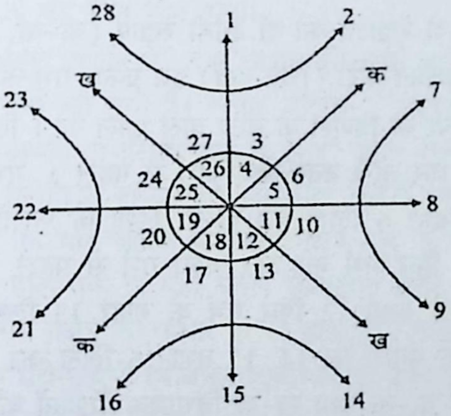

अभी हमने कई सुन्दर चक्रों के बारे में सीखा जिनसे हम देश-देशान्तर के लाभ-हानि की विवेचना यथार्थ रूप से कर सकते हैं। शास्त्रों में चन्द्रमा तथा सूर्य प्रभु के नेत्र कहे गए हैं। ये काल का भी विनाश कर सकते हैं। कालानल दरअसल काल तथा अनल, दो शब्दों से बना है जिसका अर्थ काल के लिए अग्नि समान होना अथवा काल को भी पचाने की शक्ति रखना होता है। मानसागरी में दो विशिष्ट प्रकार के, क्रमशः चन्द्र कालानल तथा सूर्य कालानल, चक्रों का संक्षिप्त वर्णन तथा उपयोग उपलब्ध है। श्री नारद पुराण में भी इन चक्रों की चर्चा है। चन्द्रमा की गति तीव्र होने के कारण किसी जातक के दैनिक जीवन पर गोचर के ग्रहों के प्रभाव की महत्वपूर्ण जानकारी मिल जाती है। क्योंकि

चन्द्रमा एक नक्षत्र में प्रायः एक दिन ही रहते हैं, इसलिए इस चक्र की उपादेयता दैनिक मानसिकता निर्धारण में प्रबल रूप से सहायक होती है।

चन्द्र कालानल चक्र

किसी भी दिन अगर हम जानना चाहें कि आज हानि होगी या लाभ, दिन अच्छा गुजरेगा या मुसीबत भरा होगा, विजय होगी या पराजय, तो गोचर के ग्रहों को चन्द्र कालानल चक्र में बैठा कर यह जानकारी ली जा सकती है।

चन्द्र कालानल चक्र की बनावटः

1. सबसे पहले एक गोला बनाएं- यह चन्द्र चक्र का गर्भ है।
2. इस गोले में एक खड़ी (1, 15) और एक पड़ी (22, 8) रेखा खीचें। इन दो रेखाओं के चारों आरंभिक स्थानों पर एक-एक त्रिशूल बनाएं।
3. अब इन दो रेखाओं को दो आड़ी रेखाएं (क-क, ख-ख) खींच कर फिर विभाजित करें। (चित्र देखें) इस प्रकार गर्भ के आठ भाग हो गए।
4. सबसे ऊपर के त्रिशूल के बीच वाले फाल पर 1 लिखें। वहाँ से दाहिने 2 लिख कर नीचे उतर जाएं। गर्भ से पहले 3, गर्भ में 4, 4 के बाद 5 तथा बाहर 6 लिख कर दक्षिण दिशा के फालों पर 7, 8 तथा 9 लिखकर फिर गर्भ की ओर चलें। गर्भ से पहले 10, गर्भ के अन्दर 11, उसके आगे 12 फिर गर्भ के बाहर 13 लिख कर पश्चिम के त्रिशूल के फालों पर 14, 15 तथा 16 लिख कर अन्दर जाएं। बताए तरीके से क-क तथा ख-ख विभाजक रेखाओं को छोड़कर चित्र के अनुसार 28 तक की संख्या लिख कर चन्द्र कालानल चक्र तैयार कर लें। अब देखें कि इस चक्र में जन्म नक्षत्र कहाँ पड़ा है?

प्रयोग विधि

जिस दिन इस का प्रयोग करना हो उस दिन के नक्षत्र को ऊपर की ओर बने त्रिशूल के बीच वाले फाल पर लिखें। अब बाकी के नक्षत्र अभिजित सहित सिलसिलेवार ढंग से लिख दें। (चित्र देखें) आइए इसे विस्तार से समझते हैं। जन्म नक्षत्र को चक्र पर हम बैठा चुके हैं। यहाँ तीन संभावनाएँ हो सकती हैं।

1. जन्म नक्षत्र एक दम बाहर, त्रिशूलों की नोक पर आ गया हो।

2. जन्म नक्षत्र त्रिशूल तथा गर्भ के बीच के आठ नक्षत्रों (3, 6, 10, 13, 17, 20, 24 तथा 27) पर आ जाए तब जातक का दिन न अच्छा होगा न बुरा। सामान्य से नतीजे होंगे।
3. तीसरी संभावना है कि जन्म नक्षत्र गर्भ क्षेत्र में पड़े। गर्भ में शिशु सुरक्षित रहता है अतः जन्म नक्षत्र गर्भ के अन्दर होना शुभ है। यह आठों स्थान (4, 5, 11, 12 18, 19, 25, 26) धन, सम्पदा सुख (4, 5), विजय, भाग्योदय (11, 12), मान, सम्मान, आदर (18, 19), उपलब्धियाँ भाग्य, शुभ नतीजे (25, 26) देते हैं।

यह चक्र एक तरह से उस दिन के चन्द्रमा से जातक के जन्म कालीन चन्द्र का मिलान कर रहा है और अगर जन्म कालीन चन्द्र (जन्म नक्षत्र) उस दिन के नक्षत्र (चन्द्र के) से 1, 2, 7, 8, 9, 14, 15, 16, 21, 22, 23 और 28वें नक्षत्र पर नहीं है तो वह दिन शुभ होगा।

मानसागरी के मूल श्लोक में 'जन्म' नक्षत्र की चर्चा नहीं की गयी है। उसमें 'नाम' नक्षत्र की चर्चा की गयी है। श्लोक देखिए– ''नामाक्षरं तु स्थियत्र, ज्ञेयं तत्र शुभाशुभम्'' अर्थात् प्रचलित नाम से पता चलने वाले नक्षत्र की चन्द्र कालानल चक्र में स्थिति से शुभता और अशुभता जाननी चाहिए। ऐसा संभवतः इसलिए कहा गया कि यदि जातक को जन्म नक्षत्र याद ना भी हो तो कोई बात नहीं क्योंकि अभी हाल तक तो यही प्रबल सम्भावना होती थी कि व्यक्ति का नामकरण उसके जन्म नक्षत्र के आधार पर ही होता था। आगे मानसागरी में कहा गया है, **''त्रिशूले तू भवेन्मृत्युर्मध्यमं बहिराष्ट्रके। आयुः प्रजा जयो लाभश्चन्द्रगर्भे न संशयः।''** अर्थात् यदि नाम नक्षत्र त्रिशूल पर पड़े तो मृत्यु (मृत्यु तुल्य कष्ट) गर्भ से बाहर के आठ नक्षत्रों (3, 6, 10, 13, 17, 20, 24, 27) पर पड़े तो मध्यम तथा गर्भ में पड़े लाभ होने में संशय नहीं होना चाहिए।

कई बार जो प्रश्न मन में आते हैं कि आखिर इतने सारे उपलब्ध उपादानों में किसका प्रयोग किया जाए? आखिर यह दिन कैसा बीतेगा, इसके लिए हमारे पास समुदाय अष्टक वर्ग पर आधारित सारणी है– अब यह चन्द्र कालानल चक्र एक नया तमाशा हुआ! सत्य यही है कि जैसे एक बीमारी का नतीजा जानने के लिए हम एक से अधिक डाक्टर के पास जाते हैं, वैसे ही कई रास्तों से चल कर सत्य तक अवश्य पहुँचा जा सकता है। चन्द्र कालानल के अद्भुत फल प्राप्त होते देखे गए हैं।

सूर्य कालानल चक्र

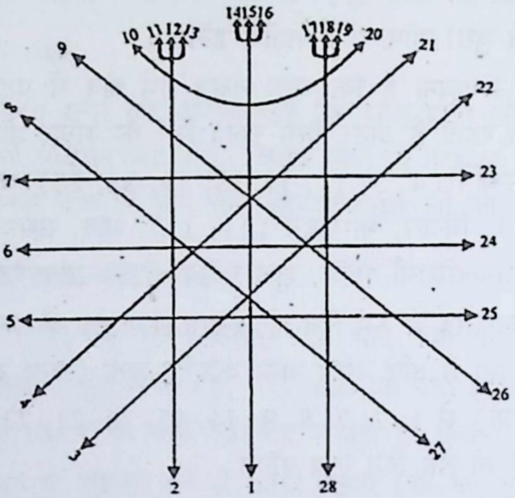

अभी हमने चन्द्रकालानल चक्र देखा जो जातक की दैनिक मानसिक अवस्थाएँ समझने में विशेष सहायक होता है। अब एक नजर उसी के भाई, अर्थात् सूर्य कालानल चक्र, पर भी डाल लेते हैं। सूर्य सतह पर ही इतने ताप से भरे हैं तो उनके गर्भ की क्या अवस्था रहेगी? इसलिए सूर्य कालानपल चक्र में गर्भ नहीं होता- सिर्फ फाल या नोक ही नोक होते हैं।

सूर्य कालानल चक्र की बनावट:

इसे बनाने के लिए पहले तीन-तीन रेखाएँ पूर्व-पच्छिम तथा उत्तर-दक्षिण दिशाओं में खींचते हैं। पूर्व की दिशा में खड़ी रेखाओं पर त्रिशूल बना कर अन्य छोरों पर मात्र फाल बना लेते हैं। अब दो-दो तिरछी रेखायें (दक्षिण-पूर्व)-(पच्छिम-उत्तर) तथा (उत्तर-पूर्व)-(दक्षिण-पच्छिम) के बीच खींच कर उन पर भी फाल बना देते हैं। अन्त में पूर्व दिशा के त्रिशूलों को एक चन्द्राकार रेखा (10-20) से घेर कर इस रेखा के दोनों सिरों पर भी फाल बना देते हैं। इसे श्रृंग कहा जाता है। पच्छिम दिशा के बीच वाले फाल पर 1 लिख कर सीधी दिशा में, उत्तर की ओर, बढ़ते हुए क्रम से 2, 3, 4 आदि लिखते चले जाते हैं। इस प्रकार पच्छिम में आखिरी फाल पर 28 लिखा जाएगा। यह तो हुई सूर्य कालानल चक्र की बनावट।

अब इस चक्र का प्रयोग समझते हैं:–मानसागरी में बताया गया है **"श्री सूर्यकालानल चक्रमेतद् गदे च वादे च रण-प्रयाणे। प्रयत्नपूर्व परिचिन्तनीय पुरातनानां वचनं प्रमाणम्।"** अर्थात् पूर्ववर्तीय ऋषियों का वचन हैं कि रोग, विवाद तथा युद्ध के लिए प्रयाण करते समय इस चक्र का प्रयोग सफलता पूर्वक किया ज़ाता है।

मानसागरी में आगे कहा गया है;

सूर्य कालानल चक्र स्वर शास्त्रों दितं महत्।
तदहं विशदं वक्ष्ये चमत्कृतिकरं परम्।।

अर्थात् स्वर शास्त्र में वर्णित यह चक्र नितान्त चमत्कारी है। यही कुछ जातकाभरणम् में भी, सूर्य कालानल चक्र की महिमा में, कहा गया है।

इस महान तथा प्रभावशाली चक्र का प्रयोग जब भी करना हो, उस समय कें सूर्य के नक्षत्र को बीच वाले त्रिशूल के बिलकुल नीचे, जहाँ 1 लिखा है, वहाँ स्थापित करते हैं। इसके बाद के सभी 27 नक्षत्रों को (अभिजित समेत कुल 28) चित्र में दिखाए क्रम से स्थापित करते हैं।

(2) अब जातक के नाम या जन्म नक्षत्र को इस चक्र में यथास्थान बैठाते हैं।

नाम/जन्म नक्षत्र के अतिरिक्त सूर्य के साथ-साथ सभी ग्रहों को भी सूर्य कालानल चक्र में बैठा देते हैं।

अब नाम/जन्म नक्षत्र को देखिए। संभव है कि वह पच्छिम में, त्रिशूलों के मूल के फालों (28, 1, 2) पर, हो। यह तीनों स्थितियाँ अशुभ फल दायक हैं क्योंकि अगर नाम/जन्म नक्षत्र गोचर के सूर्य के नक्षत्र से 28 वें पड़े तो चिन्ता दायक, सूर्य नक्षत्र के साथ हो तो मृत्यु या मृत्यु तुल्य कष्ट तथा वहाँ से 2 सरे हो तो अवरोध या बन्धन होता है। कार्य पूरा तो नहीं ही होता उलटे हानि होने की आशंका रहती है।

अगर नाम/जन्म नक्षत्र श्रृंगों पर पड़ जाए तो भी अशुभ फल होते हैं। यदि नाम/जन्म नक्षत्र वाम श्रृंग (10) पर पड़े तो रोग तथा दाहिने श्रृंग (20) पर पड़े तो अकारण आशंका या बन्दी होने की संभावना बढ़ जाती है।

अगर नाम/जन्म नक्षत्र त्रिशूल के फालों पर (11 से 19 तक कहीं भी) पड़े तो पराजय या मृत्यु तक की संभावना हो जाती है।

उपर्युक्त तीन स्थानों के अतिरिक्त (अर्थात् त्रिशुल के फालों, उनके आधार के फालों तथा शृंगों के कुल 14 स्थानों क्रमशः 28, 1 एवं 2 तथा 10 से 20 तक) को छोड़कर नाम/जन्म नक्षत्र कहीं भी हो तो जातक को जय, लाभ तथा विविध प्रकार की अभिष्ट सिद्धि अवश्य होती है।

सूर्य कालनल चक्र में वेधः सूर्य कालानल चक्र के वर्णन के क्रम में वेध की भी चर्चा है जो चन्द्र कालानल चक्र में नहीं है। इसका एक कारण है। गोचर के सूर्य एक नक्षत्र में 13-14 दिनों तक अवश्य रहते हैं। नाम/जन्म नक्षत्र यदि गोंचर के सूर्य से कष्टकारी स्थान में पड़ गया तो जातक का तो बंटाधार ही हो गया इसलिए ऋषियों ने सूर्यकालानल चक्र में वेध के फल भी बताए हैं। आईए पहले वेध समझते हैं। याद रहें कि सूर्य कालानल चक्र में अन्य कोई नहीं, मात्र नाम/जन्म नक्षत्र का वेध होता है। अगर त्रिशूल के नोक पर कोई ग्रह हो तो वह त्रिशूल के आधार का वेध करेंगे। अर्थात् 11, 12, 13 से 2 का 14, 15, 16 से 1 का तथा 17,18, 19 से 28 का वेध होता है। इसी प्रकार 10 से 20 का तथा 20 से 10 को वेध होता है। अन्य मामले तो सरल रेखा में पड़ने के कारण सीधे ही हैं। मानसागरी में पहले अशुभ तथा बाद में शुभ वेधों के फल बताए गए हैं। उन्हें हमने क्रमवार लिखा है।

वेध के फलः जन्म/नाम नक्षत्र के विभिन्न ग्रहों से वेध होने के फल निम्नांकित हैं।

सूर्य-मानसिक सन्ताप; चन्द्र-पारिवारिक प्रेम; मंगल-आर्थिक हानि; बुध -सुख; बृहस्पति-लाभ; शुक्र-रत्नों की प्राप्ति; शनि - रोग और पीड़ा; राहु/केतु-मृत्यु अथवा कष्ट।

इस प्रकार से हमने देखा कि गोचर के सूर्य के नक्षत्र से नाम/जन्म नक्षत्र का 1, 2, 10, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20 और 28वें नक्षत्र को छोड़कर बाकी नक्षत्रों में होना शुभ है तथा अगर वेध भी शुभ ग्रहों से हो रहा हो तों सोने पे सुहागा। कुल मिलाकर अशुभ तथा शुभ वेध स्थान चौदह-चौदह ही हैं अर्थात् जीवन की भांति वहाँ भी सुख और दुःख की संभावनाएँ बराबर-बराबर हैं।

परिशिष्ट-I

दशावतार तथा नवग्रहों की पौराणिक कथाएँ

बृहत पाराशर होराशास्त्र के अवतारकथनाध्याय में महर्षि पराशर मैत्रेय से कहते हैं,

> "रामोऽवतार सूर्यस्य चन्द्रस्य यदुनायकः।
> नृसिंहो भूमिपुत्रस्य बुद्धः सोमसुतस्य च।।
> वामनो विबुधेज्यक्य भार्गवो भार्गवस्य च।
> कूर्मो भास्कर पुत्रस्य सैहिंकेयस्य सूकरः।।
> केतोर्मीनावतारश्य चे चान्ये तेऽपि खेटजाः।
> परात्मांशोऽधिको येषु ते सर्वे खेचराभिधाः।।"

इन श्लोकों में विभिन्न ग्रहों के पृथ्वी पर अवतार लेने की बात कही गई है। पराशर ऋषि कहते हैं कि सूर्य से भगवान श्रीराम, चन्द्र से भगवान श्रीकृष्ण, मंगल से नृसिंह, बुध से बुद्ध, गुरु से वामन, शुक्र से परशुराम, शनि से कूर्म (कछुआ), राहु से वराह और केतु से मत्स्य अवतार हुए। इससे पहले पराशर बता चुके हैं कि इन अवतारों में राहु, मंगल, सूर्य तथा चन्द्र के अवतारों में पूर्ण परमात्मांश है। अर्थात् वराह, नृसिंह, श्री रामचन्द्र और श्री कृष्ण के अवतार पूर्ण कहे गए बाकी पांच अवतारों में जीवांश भी मिश्रित कहा गया। ज्योतिष शास्त्र में ऐसा मानते हैं कि जीवन में सफलता के लिए पूर्ण परमात्मांश वाले ग्रहों (यानी सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और राहु) का कुण्डली में बलशाली होना आवश्यक है। यदि ये ग्रह ठीक हों तो जातक के इहलोक और परलोक—दोनों ठीक हो जाते हैं। आइए, इन अवतारों को वैज्ञानिक चश्मे से देखा जाए।

विज्ञान का कहना है कि जीवन का प्रारंभ जल में हुआ। हमारे पूर्वज कहते हैं कि पहला अवतार मत्स्य रूप में हुआ अर्थात् जीवन जल में ही प्रारंभ हुआ।

मत्स्य अवतार : प्राचीन काल में सत्यव्रत राजा की अंजलि में तर्पण करते समय एक छोटी मछली आ गई जिसे उन्होंने कमण्डल में रख दिया। पर वह इतनी जल्दी-जल्दी बढ़ने लगी कि उसे कमण्डल से ताल, ताल से गंगाजी और अन्त में गंगाजी से समुद्र में छोड़ना पड़ा। उसी मछली ने (जो श्री भगवान का पहला अवतार हुआ) एक सप्ताह बाद महाप्रलय आने की भविष्यवाणी की और जब पृथ्वी प्रलय के जल में डूबने लगी तो सप्तऋषियों को लिए हुए एक दिव्य नौका आ गई। श्री भगवान के आदेशानुसार सत्यव्रत प्रत्येक जीव-जन्तु के जोड़े के अतिरिक्त उस नौका में सभी फल-फूल आदि के बीज के साथ सवार हुए। मत्स्य भगवान ने इस नौका को अपनी नाक पर उगे सींग में बांध कर प्रलय से बचाया, जिसके बाद सृष्टि फिर से चली। आपको आश्चर्य होगा कि बाईबल में भी इसी कथा का वर्णन आता है कि प्रलय आने पर हज़रत नूह एक नौका में वैसे ही बैठे रहे जैसे सत्यव्रत। मत्स्य अवतार का एक और कारण भी था। हयग्रीव नाम के राक्षस (जिसकी गर्दन घोड़े जैसी थी) ने वेदों को पाताल में छुपा दिया था। श्री भगवान ने मत्स्य अवतार लेकर हयग्रीव को मारा तथा वेदों का उद्धार किया। (**नोट :** पुराणों की अन्य कथा के अनुसार जब मधु-कैटभ नाम के दैत्यों ने श्रुतियों को रसातल में फेंक दिया था तब श्री भगवान ने स्वयं भी हयग्रीव के रूप में अवतार लिया था) जैसा हम अध्याय 4 में कह आए हैं, वेद चार हुए-पहले वेदों शब्द का अर्थ जान लीजिए। 'विद' का शाब्दिक अर्थ है-ज्ञान। चारों वेद में क्या लिखा है, यह भी जान लीजिए। पहला वेद है-ऋग्वेद। ऋक् का अर्थ है स्तोत्र, स्तुति। ऋग्वेद में देवताओं की आराधना के स्तोत्र हैं। हमारा दूसरा वेद है यजुर्वेद जिसमें यज्ञ के कर्मकाण्ड की व्याख्या गद्य और पद्य-दोनों में की गई है। यज का अर्थ है-प्रार्थना। सामवेद हमारा तीसरा वेद है। साम की उत्पत्ति 'सम' से हुई है जिसका अर्थ है-मन में शान्ति! सामवेद में ऋग्वेद के बहुत से क्लिष्ट श्लोकों को लयबद्ध किया गया है। चौथे और आखिरी वेद का नाम है-अथर्ववेद। अथर्व का अर्थ है-पुरोहित। इस वेद में कर्मकाण्ड के अतिरिक्त मोहन-मारण आदि के भी स्तोत्र दिए गए हैं।

प्रत्येक वेद चार भागों में विभक्त है जो जीवन के चार अध्यायों क्रमशः ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और वनवास से सम्बन्धित है। इनके नाम हैं क्रमशः संहिता (दैनिक जीवन से संबंधित, जैसे-जन्म-मरण, ब्याह-शादी, खेती-बाड़ी,

गृह निर्माण आदि), ब्राह्मण (नीति परक– सांसारिक और आध्यात्मिक जीवन में सामंजस्य), अरण्यक (अरण्य का अर्थ है–जंगल। अत: अरण्यक में सांसारिक जिम्मेवारियों से मुक्ति के बाद आध्यात्मिक यात्रा प्रारभ करने के सूत्र हैं) और वेद के अंतिम अंग (वेदांत) हैं–उपनिषद् (इसमें दर्शन, धर्म और जीवन की विस्तृत विवेचना है)।

कूर्मावतार : खैर, हयग्रीव के कारण काफी विषयान्तर हो गया–हम तो अवतारों की वैज्ञानिक व्याख्या के क्रम में मान चुके हैं कि जीवन जल में प्रारंभ हुआ इसलिए मत्स्य अवतार प्रथम अवतार हुए। अब जीवन को जल से भूमि की ओर आना था, ऐसे रूप में जो जल और भूमि दोनों स्थानों पर समान रूप से रह सके। कछुए से अच्छा कौन सा रूप होता जो दोनों स्थानों पर समान रूप से रह सके? इसलिए श्री भगवान का दूसरा अवतार हुआ कछुए के रूप में–इसे कूर्मावतार कहा गया। अमृत निकालने के लिए समुद्र मंथन किया जाना था। राक्षसों के राजा राजा बलि और देवताओं की ओर से इन्द्र के नेतृत्व में वासुकी नाग को रस्सी बनाकर मंदराचल की मथनी बनायी गई लेकिन मंदराचल अपने ही भार से समुद्र में डूबने लगा। तब देवताओं की प्रार्थना से श्री भगवान कच्छप रूप में पधारे और उन्होंने मंदराचल को अपनी पीठ पर संभाल लिया।

जीवन में भी जब हम अपने ही कर्मों के बोझ से डूबने लगते हैं तो श्री भगवान स्वयं आकर हमारा भार उठा लेते हैं। जीवन तो गतिशील है। उसे अब पूरी तरह पृथ्वी पर आना था।

वराह अवतार : हमारे यहाँ माना गया कि श्री भगवान का अगला अवतार वराह (जंगली सूअर) के रूप में हुआ। वराह पूर्णत: जमीन पर रहने वाला जीव है। कहते हैं, मनु की प्रार्थना पर ब्रह्मा जी ने उन्हें धर्मपूर्वक पृथ्वी का पालन करने का आदेश दिया। किन्तु तब पृथ्वी तो प्रलय के जल में डूबी हुई थी। तब ब्रह्माजी की नाक से अंगूठे के आकार का वराह शिशु निकला जो देखते ही देखते पर्वताकार हो गया। इन्हीं वराह रूपी भगवान को देखकर पृथ्वी के हृदय में स्त्री सुलभ कामना हुई कि भगवान उन्हें पति के रूप में प्राप्त हों। वराह अवतार की कथा आगे मंगल ग्रह की चर्चा के क्रम में की गई है।

नृसिंह अवतार : जीवन पृथ्वी पर पशु के रूप में आ चुका था। अब इसे मनुष्य का रूप पाना था। पशु और मनुष्य के बीच की कड़ी के रूप में श्री भगवान अवतरित हुए नृसिंह के रूप में–हिरण्याक्ष के भाई हिरण्यकशिपु का वध करने। हिरण्यकशिपु के ईश्वरभक्त पुत्र का नाम था–प्रह्लाद। हिरण्यकशिपु अपनी

तपस्या के बल पर वरदान प्राप्त कर चुका था कि उसका वध न तो दिन में होगा न रात में, न तो मनुष्य द्वारा ना ही पशु द्वारा–देवता भी उसे मार नहीं सकेंगे। इसलिए प्रह्लाद द्वारा यह कहे जाने पर कि ईश्वर तो कण–कण में विद्यमान है, हिरण्यकशिपु ने खंभे में लात मार कर कहा कि इसमें कहाँ है भगवान? और उसी समय उसी खंभे से श्री भगवान प्रकट हुए जिनका आधा शरीर नर का था और आधा सिंह का–इसलिए कहे गए नृसिंह। अपने उसी रूप में श्री भगवान ने हिरण्यकशिपु का वध किया।

वामन अवतार : जीवन को अब मानव के रूप में आना था। आपको पता होगा कि प्रायः जितनी आदिम जातियाँ हैं, सबका कद बहुत छोटा है। विज्ञान कहता है कि मानव की पहले खेप कद में बौनी रही होगी। श्री भगवान भी मनुष्य के रूप में जब आए तो वामन (बौने) के रूप में ही। अर्थात् नृसिंह के बाद वामनावतार हुआ। दैत्यराज बलि ने शुक्राचार्य की कृपा से इन्द्र को हरा कर स्वर्ग पर अपना आधिपत्य जमा लिया। इन्द्र की माँ अदिति (जो सभी देवताओं की माँ थी) ने अपने पुत्रों के दुःख से दुःखित होकर भगवान की बड़ी कठोर साधना की। भगवान उन्हीं के गर्भ से वामन के रूप में अवतरित हुए और छोटे से ब्राह्मण के रूप में बलि के पास गए। राजा बलि अश्वमेध यज्ञ पूरा कर चुके थे। उनसे वामन ने तीन पग भूमि माँगी। दो पगों में वामन रूपी भगवान ने सारी पृथ्वी और स्वर्ग को माप लिया तथा तीसरा पग बलि के सिर पर रखकर उसे भी भवबाधा से मुक्त कर दिया। आज भी जब हम किसी के हाथों में मौली बाँध कर रक्षास्तोत्र पढ़ते हैं तो कहते हैं–

ये न बद्धो बलि राजा दानवेन्द्र महाबलः,
तेन त्वामनुबध्यामि रक्षे माचल माचलः॥

अर्थात् जैसे राजा बलि अपने वचन से बद्ध हुए वैसे ही मैं आपकी रक्षा का वचन देता हूँ–माता उमा उसकी साक्षी बनें।

परशुराम अवतार : जीवन कब तक एक बौने शरीर में अटका रहता? उसे तो विकसित होना ही था। इसलिए वामन के बाद ऋषि जमदग्नि और उनकी पत्नी रेणुका की सन्तान के रूप में श्री भगवान परशुराम अवतरित हुए। परशुराम के रूप में उन्होंने गौ, ब्राह्मण और साधुओं की रक्षा में असमर्थ हैहेयवंशीय अत्याचारी राजाओं का वध किया। परशुराम थे महाक्रोधी–उनके क्रोध का परिहास जगत–माता सीता के स्वयंवर काल में लक्ष्मण जी ने बहुत मीठे तरीके से किया था। महाभारत काल में भी परशुराम ने अम्बा के कहने से भीष्म पितामह

से युद्ध किया था जो अनिर्णीत रह गया था।

श्री रामावतार : परशुराम पुरुष रूप में तो आए पर श्री भगवान का अवतार पुराषोत्तम श्री राम के रूप में हुआ। रावण को मार कर अत्याचार का नाश करने धर्म की स्थापना हेतु भगवान श्री राम पधारे। राम कथा कहने का यहाँ स्थान नहीं है।

श्री कृष्णावतार : श्री राम के बाद श्री भगवान श्री कृष्ण के रूप में देवकी और वासुदेव की सन्तान बन कर अवतरित हुए और कुरुक्षेत्र में भ्रमित अर्जुन को उन्होंने गीता का उपदेश दिया।

श्री बुद्धावतार : अब तक के सारे अवतार पृथ्वी पर कुछ न कुछ लीला रच कर गए। प्रायः सभी अवतार एक विशेष पापी की मृत्यु और मोक्ष का कारण बने–उनका वध किया। किन्तु हिंसा को अहिंसा से बदलने के लिए श्री भगवान का जो अगला रूप अवतरित हुआ उसे हम कपिलवस्तु के राजा शुद्धोदन एवं उनकी पत्नी माया की सन्तान सिद्धार्थ के नाम से जानते हैं जिन्हें बाद में सारी दुनिया ने भगवान बुद्ध के नाम से जाना–बुद्ध जो अपने आपको जान गया हो।

कल्कि अवतार : कहते हैं, कलियुग में श्री भगवान का कल्कि रूप में अवतार होगा जो धर्म की फिर से स्थापना करेंगे और आगे फिर से सतयुग आएगा। ऐसे ही सुखद आशाओं पर जीवन आगे चलता रहता है।

तो ये हमने आपसे दशावतार की बात कही। आइए, अब इन नौ अवतारों को जो अब तक पृथ्वी पर आ चुके हैं, तथा जो ऋषि पराशर के अनुसार नौ ग्रहों के ही रूप हैं, थोड़ा और करीब से ग्रहों के रूप में देखें।

भारतीय परम्परा में वेदपाठी का मानसिक स्तर उच्चतम रहा होगा। उससे कुछ कम मेधा वालों के लिए ब्राह्मण, अरण्यक, वेदान्त, वेदांग आदि रहे होंगे। सामान्य जनों के लिए तो रामायण और महाभारत जैसे ग्रन्थ और पुराण का पाठ ही यथेष्ट माने गये। आगे के आख्यान पुराणादि पर ही आधारित हैं।

सूर्य : पुराणों में 'आदि सूर्य' की कल्पना की गई है। कहते हैं, परमपिता ब्रह्मा के मुख से 'ऊँ' प्रकट हुआ–यही सूर्य का आदि स्वरूप और सूक्ष्म रूप है। यद्यपि 'ऊँ' से पहले भी ब्रह्मा ने अपने ही मुख से भुः, भुवः तथा स्वः को उत्पन्न किया था किन्तु ये तीनों जब 'ऊँ' से मिले तभी सूर्य को स्थूल रूप मिला। अर्थात् अशरीरी से शरीरी हुए भगवान भुवन भास्कर। तत्पश्चात् 'महः' 'जनः' 'तपः' और 'सत्यम्' से मिल कर इनका दसों दिशाओं को प्रकाशित करने वाला द्युतिमान, कान्तिमय स्वरूप बना। सृष्टि के आरंभ में उत्पन्न होने से इनका नाम आदित्य पड़ा।

एक अन्य, और अधिक लोकप्रिय कथा के अनुसार जब सृष्टि की इच्छा हुई तो परम पिता प्रजापति ने अपने दाहिने अँगूठे से दक्ष तथा बाएँ अँगूठे से उनकी पत्नी को उत्पन्न किया। दक्ष की तेरहवीं कन्या का ब्याह हुआ ब्रह्मा के पुत्र मवीचि (मारीचि) के पुत्र कश्यप से, जो सप्त ऋषियों में एक हैं। अदिति और कश्यप के पुत्र देवता कहलाए।

अदिति के पुत्रों को कश्यप ऋषि की अन्य पत्नियों (दिति, दनु और खस) के पुत्रों क्रमशः दैत्यों, दानवों और राक्षसों से बार-बार पराजय मिली। अदिति ने करुण होकर भगवान सूर्य से प्रार्थना की कि उनके पुत्रों के त्राण के लिए भगवान सूर्य उन्हें कश्यप ऋषि के माध्यम से पुत्र रूप में प्राप्त हों। उनकी प्रार्थना से प्रसन्न होकर सूर्य का हजारवां अंश, जिसे सुषुम्ना भी कहा गया है, उनके गर्भ में आ गया। तत्पश्चात् अदिति ने निराहार रह कर कठोर तप प्रारंभ किया। कश्यप ऋषि इस तप से घबरा गए और उन्होंने कहा **त्वया मारितम् अण्डम्** अर्थात् आपके निराहार रहने से तो यह पिण्ड नष्ट हो जाएगा। अदिति ने उन्हें आश्वस्त किया था कि यह पिण्ड नष्ट हो ही नहीं सकता, शत्रुओं का हन्ता होगा इससे उत्पन्न जीव! इस प्रकार सूर्य का नाम मार्तण्ड पड़ा। अदिति के पुत्र होने के कारण भी आप आदित्य कहलाए। सूर्य ने अपनी माता की इच्छा के अनुरूप शत्रुओं का निर्दयतापूर्वक दमन करके भाइयों को युद्ध में विजय दिलाई। उन्हें राज्य संचालन और राज्य की सुरक्षा के नियमों की विस्तृत शिक्षा दी। ज्योतिष शास्त्र में सूर्य को 'क्रूर' ग्रह कहा गया है, दुष्ट या खल नहीं। यह बात इस कथा से ठीक भी लगती है। ऋषि पत्नी की तपस्या से, देवताओं की रक्षा और त्राण के लिए, जो उत्पन्न हुआ होगा वह दुष्ट तो नहीं हो सकता। दुष्टों का नाश करने में कई बार क्रूरता की हद तक कठोर होना पड़ता है। प्रशासन में भी यही बात सत्य है। यह भी स्मरण रखना होगा कि सूर्य के फल हमें तपस्या से ही प्राप्त हो सकते हैं। सूर्य की कृपा से शत्रुओं पर विजय, राज्य की प्राप्ति आदि सब कुछ संभव है।

ऋग्वेद के मण्डल दो में छह तथा मण्डल नौ में सात आदित्यों की चर्चा है जो अदिति के पुत्र हैं। ये संभवतः छह और सप्ताह के सात दिनों के परिचायक हों। अदिति के पुत्रों के रूप में शतपथ ब्राह्मण तथा विष्णु पुराण के दसवें अध्याय में बारह आदित्यों के नाम कहे गए हैं जो शायद बारह माह पर आधारित हों। यद्यपि अमर कोश में 47 तथा ब्रह्म पुराण में 108 आदित्यों के नाम हैं।

आइए, लगे हाथों भगवान आदित्य के परिवार की चर्चा भी हो जाए। सूर्य भगवान की तीन पत्नियाँ क्रमशः संज्ञा, राज्ञी और प्रभा कही जाती हैं। वैसे ऋग्वेद में त्वष्टा की पुत्री शरायु से भी सूर्य के ब्याह की चर्चा है। एक मतानुसार शरायु और संज्ञा एक ही हैं। दूसरे मत से संज्ञा को विश्वकर्मा की पुत्री बताया गया है। राज्ञी से सूर्य के जो पुत्र हुए उनका नाम है–रैवत तथा प्रभा से उत्पन्न पुत्र का नाम है–प्रभात। कहीं–कहीं सूर्य की पत्नियों के नाम प्रभा, छाया, उषा, प्रत्युषा, निक्षुभा आदि भी मिलते हैं। संज्ञा से उत्पन्न सबसे बड़े पुत्र का नाम है–वैवस्वत जिन्हें हम वैवस्वत मनु के नाम से, मानव संस्कृति के जनक के रूप में जानते हैं। संज्ञा से ही जुड़वां सन्तान यम और यमी (यमुना नदी) उत्पन्न हुए। यम 22वें द्रेष्काण, 64वे नवांश तथा अष्टम भाव और दक्षिण दिशा के स्वामी हैं। यमुना और यम के स्नेह की याद हम आज भी दीपावली के दो दिनों के बाद, भ्रातृ द्वितीया या भाई दूज मना कर, करते हैं। वैवस्वत मनु के दस पुत्र हुए जिनमें प्रसिद्ध हुए इक्ष्वाकु तथा एक पुत्री भी हुई जिसका नाम था–इला। इला पहले पुरुष थी, शापवश स्त्री बनी और बाद में स्त्री से पुरुष बन गई। लिंग परिवर्तन का संभवतः यह पहला मामला रहा होगा।

संज्ञा का अपने पति पर अतुलनीय प्रेम होने के बाद भी वह अपने पति का तेज सहन नहीं कर पायी। वह अपने स्थान पर अपनी 'छाया' से अपने पति और बच्चों की देख–रेख करने को कहकर अपने पिता के पास गई जिनसे अपनी व्यथा कथा सुनाने के बाद वह अज्ञातवास में चली गई। उत्तर में हिमालय की घाटियों में संज्ञा ने एक मनोहर घोड़ी का रूप धारण करके तपस्या करना शुरू किया।

आइए, यहाँ तक की कथा पर एक ज्योतिष दृष्टि डालें। सूर्य को विच्छेद कारक ग्रह कहा गया है। सूर्य का तेज सहन करना सबके लिए संभव नहीं, पंचम भाव का सूर्य गर्भ नष्ट करता है और सप्तम भाव का सूर्य वैवाहिक जीवन में व्यवधान पहुँचाता है।

अब आगे की कहानी देखिए। अपने घर में हुई उथल–पुथल से बेखबर सूर्य छाया को संज्ञा समझ कर उसके साथ जीवन बिताने लगे जिस क्रम में उन्हें दो पुत्र प्राप्त हुए, क्रमंशः मनु और शनिश्चर। छाया का अनुराग अपने इन दो बच्चों के प्रति विशेष था। कालान्तर में विमाता के व्यवहार का अन्तर यम से सहा नहीं गया और उसने बड़ा विरोध किया। इससे छाया को क्रोध आ गया और छाया ने यम को शाप दे दिया। यम अपने पिता के शरणागत हुए सूर्य ने उन्हें शाप से मुक्ति तो अविलम्ब दे दी पर स्वयं चिन्ता में पड़ गए कि आखिर कोई माता

अंपनी ही सन्तान को शाप कैसे दे सकती है। कुपित सूर्य ने छाया के केश पकड़ कर खींचे तो छाया ने सब कुछ सच-सच बता दिया कि संज्ञा सूर्य का तेज सहन न कर सकने के कारण चली गई है। सूर्य पछताते हुए अपने श्वसुर विश्वकर्मा की शरण में गए। तब विश्वकर्मा ने इनका तेज कम करने के लिए उससे विष्णु का चक्र, शिवजी का त्रिशूल, यम का दण्ड और देवताओं के सेनापति कार्तिकेय के पाश की रचना की। सुन्दर, तपे-तपाए सूर्य स्वयं घोड़े के वेश में वहाँ गए जहाँ संज्ञा तपस्यारत थी। इस अलौकिक मिलन से भी उन्हें जुड़वाँ सन्तान की प्राप्ति हुई जो अश्विनी कुमार कहे गए (देवताओं के चिकित्सक ऋषि च्यवन के नेत्रों की ज्योति लौटाने वाले)।

सूर्य के वाहन रथ में एक ही पहिया है जो संवत्सर कहलाता है। इस पहिए में बारह डंडे लगे हैं जो बारह मासों के प्रतीक हैं। सूर्य के मुख्य अस्त्र हैं—चक्र, शक्ति, पाश और अकुंश। सूर्य को 'मार्कण्डेय पुराण' में भगवान भास्कर कहा गया अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र बन कर क्रमशः सृष्टि, पोषण और संहार करने वाला।

अब सूर्य पर एक बात गौर की जाए। सूर्य को ज्योतिष शास्त्र में कालदर्शी भी कहा जाता है। समय का बोध कराने वाला, दिन-रात का कारक, ऋतुओं की सृष्टि करने वाला आदि-क्योंकि सूर्य का नाम सविता भी है जिसका अर्थ है—सृष्टि करने वाला। **सविता सर्वस्य प्रसविता** अर्थात् सबको जन्म देने वाले हैं—सूर्य। सूर्य के पहले पुत्र हुए वैवस्वत मनु जिन्होंने सृष्टि की गतिविधियां आगे बढ़ायी—दूसरे हुए यम, जो काल के अवधारक हैं, हमारे जन्म-जन्मान्तरों का चोला बदलवाने वाले, तथा आध्यात्मिक रूप से जो परिपूर्ण होकर अपने कर्तव्यों से निवृत्त हो चुके, उनके लिए मोक्ष का द्वार खोलने वाले। सूर्य के एक और पुत्र हुए मनु, जिन्होंने हमें मनुस्मृति दी—जीवन चर्या तय की। और एक पुत्र हुए शनैश्चर महाराज जो आयुष्कारक कहे गए—हमारे जीवन के श्वासों की गिनती रखने वाले। अब और देखिए, सूर्य पुत्रों को यानी अश्विनी कुमारों को जो अलौकिक चिकित्सक कहे जाते हैं, देवताओं के स्वास्थ्य की रक्षा करने वाले—अर्थात् सूर्य का सारा परिवार शरीर और स्वास्थ्य तथा जीवन से जुड़ा हुआ है।

कुण्डली में सूर्य की शक्ति से जातक के शारीरिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य का अन्दाज लगता है। सूर्य ने तो अपनी पत्नी छाया तक के केश खींचे

तो हम मानवों की बिसात ही क्या? लग्न का सूर्य केशों में कमी लाता है। सूर्य का ताप उसकी पत्नी तक से सहन नहीं हो सका, तो अन्य ग्रहों की बात ही क्या कोई भी ग्रह उसके समीप आ जाए तो उसे हम अस्तगत कह कर मानते हैं कि उस ग्रह की शक्ति कम हो गई।

यह तो हुई ज्योतिष चर्चा। अब सूर्य के बारे में उपलब्ध पौराणिक आख्यानों में से एक हम आपको बताते हैं। सूर्य को अक्सर राहु भक्षण करने दौड़ता है–(यह कहानी विस्तार से हमने आगे बताई है) सूर्य ने सभी देवताओं की रक्षा के लिए राहु का वैर मोल ले लिया था। अमृत का पान तो सभी देवताओं ने किया था पर राहु के कोप का भाजन बने मात्र सूर्य और चन्द्रमा। इसलिए क्षुब्ध होकर सूर्य ने समस्त सृष्टि को तपाना प्रारंभ कर दिया–लगा जैसे चारों ओर अग्नि वर्षा हो रही हो। तब ब्रह्मा के पास दौड़े गए देवताओं ने ब्रह्माजी की सलाह पर अरुण को सूर्य का सारथी नियुक्त किया। अरुण भी कश्यप के पुत्र हैं परन्तु पांव नहीं हैं उनके। कहते हैं अरूण स्वभाव से मृदु हैं। अरुण के दो पुत्र हुए जिनके नाम हैं क्रमशः सम्पाति तथा जटायु। यही जटायु रावण द्वारा सीता के हरण के समय मारे गए। अरुण सूर्य के रथ को ऐसे हांकते गए कि पृथ्वी पर सूर्य के कोप का प्रभाव कम पड़ा–सृष्टि बच गई। इसलिए ज्योतिष शास्त्र में कहा गया है कि सूर्य के साथ यदि कोई शुभ ग्रह हो तो वह सूर्य की क्रूरता में कमी लाता है।

अब हम सूर्य के आयुधों को देखें। वे हैं क्रमशः चक्र, जो जीवन का प्रतीक है, शक्ति–जो शौर्य का प्रतीक है तथा अकुश और पाश जो जीवन को उच्छृंखल होने से रोकते हैं। सूर्य की वंशावली बड़ी समृद्ध है। वैवस्वत मनु की श्रृंखला में ही भगवान राम हुए हैं।

सूर्य के मेष राशि में प्रवेश के दिन का स्वामी (वारेश) उस वर्ष का मंत्री, कर्क में प्रवेश के दिन का स्वामी सस्येश सिंह में प्रवेश का स्वामी दुर्गेश, कन्या में प्रवेश का स्वामी धनेश, तुला में प्रवेश का स्वामी रसेश, धनु में प्रवेश का स्वामी धान्येश, मकर मे प्रवेश का स्वामी नीरसेश, मीन में प्रवेश का स्वामी फलेश तथा आरिद्रा नक्षत्र में प्रवेश का स्वामी मेघेश कहलाता है। इस प्रकार चैत्र शुक्ल प्रतिपदा जिस दिन पड़े उस दिन का स्वामी राजा या वर्षेश कहलाता है। वृषभ, मिथुन, वृश्चिक और कुंभ में सूर्य के प्रवेश को कोई नाम नहीं दिए गए हैं। इन राशियों के स्वामियों की दूसरी राशि में सूर्य के प्रवेश का महत्व पहले ही बता दिया गया है।

चन्द्रमा : भगवान शंकर के द्वादश ज्योतिर्लिंगों की चर्चा में सबसे पहले कहा जाता है **सौराष्ट्रे सोमनाथं च** अर्थात् सौराष्ट्र (आज के गुजरात का पश्चिमी तट) में शंकर जी सोमनाथ (चन्द्रमा के नाथ) के नाम से प्रतिष्ठित हैं। और भी भगवान भोले शंकर का नाम है–चन्द्रशेखर अर्थात् जिसने चन्द्रमा को सर पर रखकर प्रतिष्ठा दी–किन्तु भगवान शंकर से चन्द्रमा के सम्बन्धों की चर्चा से पहले आवश्यक है कि हम चन्द्रमा के जन्म की कथा भी समझ लें।

'हरिवंश पुराण' में कथा आती है–ब्रह्मा ने सृष्टि के आरंभ में 7 मानस पुत्रों को अवतरित किया जो पूर्णतः वैराग्य की ओर उन्मुख थे। उनमें एक थे ऋषि अत्रि, जिनकी पत्नी अनुसूया के पतिव्रत धर्म की चर्चा बहुत बार आती है। उन्होंने चन्द्रमा को पुत्र के रूप मे कामना की और अत्यन्त श्रद्धाभाव से उनका ध्यान किया। इस ध्यान स्वरूप उनके नेत्रों से ऐसी द्युति निकली जो चन्द्रमा के समान कान्तिमान थी। दसों दिशाएँ, क्रमशः पूर्व, अग्नि, दक्षिण, नैऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान, उर्ध्व और पाताल इस ज्योति को अपने गर्भ में लेकर पोषण करने लगीं। किन्तु वह तेज उन दसों दिशाओं से भी पल न सका और पृथ्वी पर गिर पड़ा। यही कान्तियुक्त परन्तु शक्तिहीन चन्द्रमा हुए, जिन्हें ब्रह्मा जी ने उठाकर अपने रथ पर बैठा लिया। इस शक्तिहीन चन्द्रमा को उन्होंने पृथ्वी की 21 बार परिक्रमा करवाई तथा वेद मन्त्रोच्चारण के द्वारा दसों दिशाओं को शक्ति दिलवायी–इस प्रकार चन्द्रमा को जीवन मिला। चन्द्रमा को बीज, औषधि, जल तथा ब्राह्मणों का स्वामित्व दिया। पृथ्वी की परिक्रमा के दौरान चन्द्रमा पृथ्वी पर औषधि तथा अन्य प्रकार के बीजों की वृष्टि करते रहे जिनसे सभी देवताओं, पितरों, तथा मनुष्य, भूत-प्रेत, पशु-पक्षी और वृक्षादि के प्राणों का आप्यायन (पोषण) होता है।

एक बात अब ज्योतिषीय सन्दर्भ में देखने की है। यदि कुण्डली में चन्द्रमा कमजोर भी हो तो उचित मन्त्रोच्चारण के द्वारा उसे शक्तिशाली बनाया जा सकता है। चन्द्रमा मनस है–मन, जिसके द्वारा हम निर्णय लेते हैं। उद्वेलित मन को, चंचल मन को शान्त करने का सर्वसम्मत उपाय प्रार्थना ही है। मन की चंचलता और उसके विस्तार की सीमा दसों दिशाएं हैं। अर्थात् मन के विचरण का क्षेत्र असीमित है। इसलिए मन की चंचलता का भी ओर-छोर नहीं है। मन कब कहां से भटक कर कहाँ पहुँच जाए, कोई नहीं जानता। उसे दृढ़ता और ठोस रूप प्रदान करने के लिए ब्रह्मा के मानस पुत्रों ने तपस क्रिया–वेदपाठ किया। मन की शान्ति के लिए यही दो बातें अर्थात् तप और धर्मग्रन्थों का पाठ आवश्यक हैं। एक बात

और देखिए। चन्द्रमा बीज और जन्म–दोनों के स्वामी हैं। अर्थात् सृजन का, सृष्टि का पूरा भार उन पर है। माता–पिता तथा सन्तान के बीच के सम्बन्ध का कारण है–चन्द्रमा।

श्रीमद्भागवत के अनुसार अत्रि और अनुसूया की सन्तान है–चन्द्रमा! ब्रह्मा, विष्णु और महेश–तीनों अनुसूया के पातिव्रत्य की परीक्षा लेने भिक्षुओं का वेश धर कर उनके पास गए। उनसे भिक्षा लेने की बड़ी विचित्र शर्त रखी इन त्रिदेवों ने कि माता अनुसूया को निर्वस्त्र होकर इन्हें भोजन कराना होगा। माता अनुसूया इनकी लीला समझ गई और उन्होंने अपने पतिव्रत के बल से तीनों को नवजात शिशु में परिवर्तित करके, उन्हें निर्वस्त्र होकर, भोजन कराया। किन्तु इस प्रक्रिया में उनका मातृत्व जाग गया और उन्होंने सन्तान की कामना की। उन्हें तीन पुत्र क्रमशः दत्तात्रेय, चन्द्रमा और दुर्वासा प्राप्त हुए। देखिये, यहाँ चन्द्रमा एक छल से जुड़ गए हैं। मन तो छली होता ही है।

'हरिवंश पुराण' के एक आख्यान के अनुसार दक्ष की सत्ताईस कन्याओं, क्रमशः अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी आदि से चन्द्रमा का विवाह हुआ। महाभारत के वन पर्व के अनुसार चन्द्रमा की ये सभी पत्नियाँ पतिव्रत धर्म का पालन करने वाली सुशीला और सुन्दर थीं फिर भी चन्द्रमा रोहिणी के प्रति अधिक आसक्त हुए–परिणामस्वरूप इनके श्वसुर दक्ष ने इन्हें गलित क्षय हो जाने का शाप दिया। भयभीत चन्द्रमा ने तभी सोमनाथ मन्दिर बनाकर भगवान शंकर की आराधना समुद्र तट पर की। शंकर जी ने चन्द्रमा की पूजा से प्रसन्न होकर कहा कि यद्यपि दक्ष के शाप से चन्द्रमा की मुक्ति संभव नहीं फिर भी शंकर जी की दया से चन्द्रमा क्षय होने के बाद फिर से पूरा शरीर धारण करेंगे–इस प्रकार चन्द्रमा गलते और बनते रहते हैं। पूर्णिमा से अमावस्या तक दक्ष के शाप के कारण चन्द्रमा के शरीर का क्षय होता है तथा अमावस्या से पूर्णिमा तक शंकर जी के आशीर्वाद से शरीर पुष्ट होता जाता है। हाँ, इसी क्रम में चन्द्रमा ने वायदा भी किया कि वे प्रत्येक पत्नी के साथ बराबर बराबर, अर्थात् एक दिन का समय व्यतीत करेंगे।

आज भी चन्द्रमा एक नक्षत्र में एक दिन ही रहते हैं। क्षय रोग को हम टी०बी० के नाम से जानते हैं। क्षय रोग का सम्बन्ध फेफंड़े से है, छाती से है। इस प्रकार चन्द्रमा के कमजोर होने से छाती और फेफड़े सम्बन्धी रोग होते हैं।

चन्द्र देव का वाहन दस बलवान, दिव्य, अनुपम, शंख के समान सफेद और मन के समान वेगवान घोड़ों से जुता रथ है। चन्द्रमा को श्वेत वस्तुओं का कारक

कहा गया है। 'मत्स्य पुराण' के अनुसार, इन घोड़ों के कान और नेत्र भी सफेद हैं। 'श्रीमद्भागवत' के अनुसार इनके सात घोड़े हैं।

एक और अपवाद चन्द्रमा की चंचलता से जुड़ा हुआ है। चन्द्रमा कभी अपने मन की गिरी हुई अवस्था के कारण देवगुरु बृहस्पति की पत्नी तारा को बलपूर्वक भगा कर ले गए। यह तो अत्यन्त कुत्सित कृत्य था किन्तु यदि किसी का मन ही गिरा हुआ हो तो उसके पतन की सीमा क्या होगी? चन्द्रमा ने यह कुकृत्य भाद्रपद के शुक्ल पक्ष की चतुर्थी को किया इसलिए उस तिथि के चन्द्रमा को देखना भी वर्जित है। कहते हैं, भाद्र मास के शुक्ल पक्ष की चौथ के चन्द्र के दर्शन से मन में कुविचार ही आते है। चन्द्रमा को तारा से एक सन्तान प्राप्त हुई–पुत्र रत्न–यह पुत्र बड़ा मेधावी हुआ जिसे हम 'बुध' के नाम से जानते हैं। बुध की कथा बाद में! देवताओं के हस्तक्षेप के कारण ही बुध और तारा बृहस्पति को वापस दिए गए। किन्तु चन्द्रमा के इस दुष्कृत्य ने उसे कहीं का न छोड़ा। चन्द्रमा को भी पश्चात्ताप हुआ और उसकी प्रार्थना सुनकर भगवान शंकर तथा ब्रह्माजी ने उसके पाप को समुद्र में धोया। (शायद इसी कारण चन्द्रमा ने पश्चात्ताप सौराष्ट्र में सागर के तीर पर पर किया था।) शंकर जी ने चन्द्रमा के दो हिस्से किए। जो प्रांजल, शुभ्र तथा शुभ था, उसे शंकर जी ने सर पर धारण करके चन्द्रशेखर का नाम पाया–जो अशुद्ध था, ग्राह्य नहीं था, पतित था, चन्द्रमा का वह हिस्सा देवताओं के बीच उपहास का पात्र बना ग्लानि और पश्चात्ताप में डूबता रहा। अन्त में चन्द्रमा ने निश्चय किया कि वह समुद्र में डूबकर प्राण त्याग देगा। ब्रह्मा जी ने समुद्र स्नान कराके चन्द्रमा को शुद्ध किया–अत्रि ऋषि, जो उसके पिता थे, ने उसे शक्ति प्रदान की। इस प्रकार अपने पापों से मुक्त तथा शुद्ध चन्द्रमा देवताओं के बीच पुनःप्रतिष्ठित हुए।

चन्द्र लग्न के महत्व के बारे में हम इस पुस्तक के पहले ही अध्याय में चर्चा कर आएं हैं। फिर भी, एक पुरानी कहावत का प्रसंगवश जिक्र करना उचित होगा–'मन के हारे–हार है मन के जीते–जीत'। मन अगर निश्चय कर ले तो असंभव भी संभव हो जाता है। ज्योतिष शास्त्र में चन्द्रमा के सबल होने से ही जीवन सग्राम में सफलता अवश्यम्भावी कही गई है।

'तैतिर्य संहिता' में एक मनोरंजक प्रश्नोत्तर है। 'कौन है जो अकेला चलता है'? और 'वह कौन है जो बार–बार जन्म लेता है'? उत्तर भी वहीं मिलते हैं–सूर्य है जो अकेला चलता है और चन्द्रमा है जो बार–बार जन्म लेता है। कितनी सुन्दर बात निहित है इस आख्यान में!

सूर्य अर्थात् राजसत्ता, अधिकार, गांभीर्य, निर्णय लेना आदि। वहाँ अकेला ही चलना पड़ता है। सारे निर्णय स्वयं लेने होते हैं–वहाँ भागीदारी नहीं चलती–वहीं दूसरी ओर देखिए चन्द्रमा की अवस्था। एक जैसा, एक दिशा में सोचना सभव नहीं रहने देता है मन! बार–बार नये भाव जन्म लेते हैं और नष्ट होते रहते हैं।

महाभारत के वनपर्व में ही यक्ष प्रश्न की चर्चा आई है। यक्ष पूछते हैं ''वायु से भी वेगवान कौन है तथा तृणों से भी अधिक क्या है?'' युधिष्ठिर उत्तर देते हैं ''मन वायु से भी अधिक वेगवान तथा विचार तृणों से भी अधिक संख्या में हैं।'' मन की अस्थिरता तथा विचारों में तारतम्य का अभाव कितनी सुन्दरता से समझाया गया है। इस प्रश्न के उत्तर के माध्यम से कि उस काल के ऋषियों की मेधा पर आश्चर्य होता है। सच में पवन से भी तेज मन–चंचलता की पराकाष्ठा है और विचारों का क्या–वे तो अन्तहीन होते ही हैं–किसी प्रकार विचारों को दिशा दे दी जाए और मन को भटकने से रोका जाए तो आकाश मुट्ठी में आ जाए–इसके लिए कुण्डली के चन्द्रमा को तप से शक्तिशाली बनाना होगा।

चलते–चलते यक्ष का एक और प्रश्न–**किं विचित्रम्** विचित्र बात क्या है? और युधिष्ठिर कहते हैं, हम अपने चारों ओर मृत्यु देखते हैं–हर पल जो वर्तमान है, भूतकाल हो जाता है। फिर भी, हम अपनी नश्वरता के बारे में सचेत नहीं है। हमारा मन मानता ही नहीं कि एक दिन हम भी नष्ट हो जाएँगे। यही बात सबसे आश्चर्यजनक है। यहाँ भी मन का सहयोग आवश्यक है। यदि मन नश्वरता, क्षणभगुरता के प्रति सचेत हो जाए तो आवागमन से ही मुक्ति मिल जाए–पर मन तो मोह–माया के वश में है–उसे छुड़ाने के लिए आवश्यक है तपस्या। सोलह कलाओं से युक्त, अन्नमय, मनोमय, अमृतमय स्वरूप भगवान चन्द्रमा की।

चन्द्रवंश आगे कैसे चला, इसकी कथा भी बड़ी मनोरंजक है। एक अन्य कथा के अनुसार, प्रजापति कर्दम के पुत्र का नाम था–इला (इला के बारे में हम सूर्य की कथा के दौरान चर्चा कर चुके हैं और उसे वैवस्वत मनु की कन्या इला के रूप में बताया है।) यह इला एक प्रतापी राजा हुआ जिसने दैवयोग से देवाधिदेव महादेव तथा माता पार्वती को आनन्द मनाते हुए देख लिया। उस समय महादेव रमण के क्षेत्र में सभी प्राणियों, जीव–जन्तुओं, वृक्षों आदि को स्त्री लिंग में परिवर्तित करके स्वयं भी नारी रूप में माता उमा के साथ परिहास कर रहे थे। जड़, चेतन आदि समस्त भावनाएँ भी स्त्री–स्वरूपा हो गई थीं। उस मातृ–क्षेत्र

में प्रवेश करते ही इला अपने सैनिकों समेत अत्यन्त रूपवती स्त्री के रूप में परिवर्तित हो गए। राजा इला भगवान के श्री चरणों में गिर कर अपने पुरुष स्वरूप में पुनः वापस आने की प्रार्थना करने लगे। भगवान तो टस से मस नहीं हुए पर माता को दया आ ग़ई। उन्होंने इला को आशीर्वाद दिया कि वह एक माह क़ी अवधि तक तो पुरुष रहेगा, तब उसे अपने स्त्री स्वरूप की याद भी नहीं रहेगी और दूसरे माह वह स्त्री रूप में आ जाएगी तब उसे अपना राज्य आदि का कुछ भी स्मरण नहीं रहेगा। इसी रूपवती इला पर बुध रीझे। बुध ने इला को अंगीकार किया और एक माह बाद जब पुनः इला राजा बन गया तो उसे बुध ने समझा–बुझा कर योग ध्यान की ओर प्रवृत्त किया। माह बीतने पर इला का पुनः रची रूप वापस हो गया। इस प्रकार सहवास के नवें माह में, जब इला का रची स्वरूप था, उसे एक कान्तिमान पुत्र को प्राप्ति हुई जिसका नाम रखा गया पुरुरुवा–हम उसकी कहानी भी जानते हैं। पुरुरुवा ही चन्द्र वश को लेकर आगे बढ़े। हाँ, इला का क्या हुआ यह बात आप अवश्य जानना चाहेंगे। इला के पिता ने देवाधिदेव महादेव की तुष्टि के लिए अश्वमेध यज्ञ किया और भगवान भोलेनाथ प्रकट हुए। उन्होंने आशीर्वाद दिया और इला पुनः सदा के लिए पुरुष हो गए। इधर चन्द्रवंश आगे बढ़ा उधर इला की सन्तति आगे बढ़ी।

मंगल : मंगल को प्रायः 'भूमिपुत्र' – 'भूमिसुत' आदि के नाम से याद किया जाता है। प्रत्येक कल्प में मंगल के जन्म की अलग–अलग कथाएं हैं–प्रायः प्रत्येक कथा में मंगल की जननी पृथ्वी को ही कहा गया है।

'ब्रह्मवैवर्तपुराण' के अनुसार वाराह कल्प की बात है जब हिरण्यकश्यपु के बड़े भाई हिरण्याक्ष ने पृथ्वी को चुरा कर अनन्तदत् सागर की गहराइयों में छुपा दिया। तब भगवान स्वयं वराह के रूप में अवतरित हुए और उन्होंने हिरण्याक्ष का वध करके पृथ्वी का उद्धार किया। वराह अवतार के बारे में इसी अध्याय मे पहले ही कहा जा चुका है। वराहावतार के समय भगवान् का रूप और तेज करोड़ों सूर्य के समान असह्य था अतः पृथ्वी की कामना पूरी करने के लिए भगवान अपने मनोरम रूप में उपस्थित हुए तथा उन्होंने पृथ्वी के साथ एक दिव्य वर्ष तक एकान्तवास किया जिससे मंगल की उत्पत्ति हुई। मंगल के शरीर के रोयें लाल हैं, लाल मालाएं और लाल वस्त्र इन्होंने धारण किया है।

एक अन्य कथा के अनुसार, सती की मृत्यु से विकल शकर कैलास पर्वत पर घनघोर तपस्या करके अपनी विकलता, से, चित्त की चंचलता से मुक्ति पा सके। ध्यान पूरा होने के बाद जब भोले नाथ जी जगे तो उनके दिव्य पसीने की

एक बूँद पृथ्वी पर आ गिरी जिससे एक सुन्दर बालक उत्पन्न हो गया। पृथ्वी ने यह दैविक उपहार स्वीकार किया– "बच्चा मंगलकारी होगा–यह सबों को पार्थिव सुख और समृद्धि देगा। यह शक्ति, ऊर्जा और क्रियाशीलता का कारक होगा"–ऐसे आशीर्वाद भगवान शंकर ने उस बालक को दिये जिसका नामकरण मंगल हुआ। मंगल अर्थात् शुभकारी!

मंगल महाराज भूमिपुत्र हैं। अतः जगह, जमीन, जायदाद, मकान के कारक हैं और इन्हें प्राप्त करने के बाद इन्हें बनाए रखने में सहायक। मंगल का मतलब है–उपयोगी कार्यशीलता, कर्मठता, आत्म विश्वास और कभी–कभी घमंड भी। मंगल और शुक्र क्रमशः पुरुष और स्त्री के द्योतक हैं। मंगल ही स्त्री–पुरुष के आकर्षण, मेल और उसके परिणाम का कारक हैं। मंगल को सेनाध्यक्ष भी कहा गया है। पौरुष, वीरता, शत्रु पर विजय आदि, मंगल के कारकत्व हैं।

बुध : चन्द्रमा की कथा में चन्द्रमा की उच्छ्रृंखलता की चर्चा के दौरान देवगुरु बृहस्पति की पत्नी तारा के बारे में बताया गया है। अथर्ववेद के अनुसार, बुध की माता का नाम तारा तथा पिता का नाम चन्द्रमा है। ब्रह्माजी ने इनका नाम इनकी बुद्धि की गंभीरता को देखते हुए ही बुध रखा। 'श्रीमद्भागवत' के अनुसार, ये सभी शास्त्रों में पारगत तथा चन्द्रमा के समान ही कान्तिमान हैं। 'मत्स्य पुराण' के अनुसार इनको सर्वाधिक योग्य देखकर ही ब्रह्माजी ने इन्हें भूतल का स्वामी तथा ग्रह बना दिया। इन्हें सर्वाधिक योग्य क्यों न कहा जाए? देवगुरु और चन्द्रमा का जिसे सम्बल मिले, वह तो योग्य होगा ही! चन्द्रमा और गुरु किसी भी कुण्डली में परस्पर केन्द्र में आकर गज केसरी योग बनाते है जो शत्रुंजयी होता है। इन दोनों के वरदहस्त के कारण बुध की प्रतिभा का क्या कहना! बुध का रथ तो श्वेत है पर उसमें विभिन्न रंगों के दस घोड़े जुते हैं जो वायु के समान वेगवान हैं। बुध कान्तिमान है चन्द्रमा के समान। जब चन्द्रमा तारा का अपहरण कर ले गए थे तब उन्होंने राक्षसों के आचार्य शुक्राचार्य के यहाँ शरण ली थी तभी बुध को गर्भ में सुरक्षा मिली। इसलिए यह समझना मुश्किल नहीं कि बुध चन्द्रमा को शत्रु शुक्र को मित्र तथा गुरु को सम क्यों समझते हैं? बुध को मीमांसक भी कहते हैं अर्थात् जो गूढ़ से गूढ़ बात त्वरित गति से समझ कर अच्छी तरह समझा सके–

बुध चिन्तन, बुद्धि, तर्क शक्ति, वाक चातुर्य, मेधा और त्वरित निर्णय का परिचायक है। चन्द्रमा है–चंचलता मानस। मन और बुद्धि में सामंजस्य हो जाए तो सबसे अच्छे परिणाम मिलते हैं। चन्द्रमा, बुध को अपना मित्र मानता है।

भावुकता को बुद्धि का सहयोग मिले तो क्या बात है, परन्तु गुरु, बुध को शत्रु समझते हैं–विवेक का बुद्धि और तर्क से सीधा सम्बन्ध हो भी नहीं सकता क्योंकि बुध आनन–फानन में निर्णय ले लेते हैं। 'महाभारत' की एक कथा के अनुसार उनकी विद्या, बुद्धि से प्रभावित होक़र महाराज मनु ने अपनी कन्या इला का विवाह बुध से किया जिसके परिणाम स्वरूप महाराज पुरुरवा की उत्पति हुई। इस प्रकार चन्द्रवंश का विस्तार हुआ। बुध को पुरुष नपुंसक भी कहा जाता है, साथ ही ऐसा ग्रह भी जो साधारणयता शुभ होते हुए भी सहचर्य से फल देता है।

देवगुरु बृहस्पति : ऋषि अंगिरस के पुत्र हुए–अथर्वन। अथर्वन के एक पुत्र हुए–उशिज और उशिज के तीन पुत्रों के नाम हैं क्रमशः उचथ्य, बृहस्पति और संवर्त। एक आख्यान के अनुसार उचथ्य की पत्नी का नाम ममता था जो जब गर्भवती थीं तभी बृहस्पति ने उनसे व्यभिचार की चेष्टा की जिसका गर्भस्थ शिशु के विरोध करने पर उसे ही बृहस्पति ने श्राप दे दिया कि वह जन्मांध पैदा हो। यह बालक दीर्घतमा, षड्ग वेदों का ज्ञाता, जन्मान्ध पैदा हुआ किन्तु अखण्ड प्रार्थना के बल पर इसने भी दृष्टि वापस पायी। आगे की कहानी विचित्र है, सभवतः अपनी माता के साथ हुए अत्याचार के कारण इन्होंने भी अपने अनुज की स्त्री के साथ व्यभिचार करना चाहा और शरद्वात ऋषि के श्राप से पुनः दृष्टिहीन होकर पानी में फेंक दिए गए जहाँ से उन्हें राजा बलि ने निकलवाया। बलि की स्त्री सुदेष्णा को दीर्घतमा के आशीर्वाद से क्रमशः अंग, बंग कलिंग, पौण्ड्र और ब्रह्म नाम के पुत्रं हुए जिनके नाम पर ये पाँच प्रदेश बनाए गए। एक अन्य आख्यान महाभारत के आदि पर्व में मिलता है। बृहस्पति ऋषि अंगिरा के पुत्र हुए। अंगिरा की पत्नी ने सन्तकुमारों के बताए व्रतों का पालन करके बृहस्पति को पुत्र रूप मे पाया। 'स्कन्द पुराण' के अनुसार, प्रभास तीर्थ में जाकर बृहस्पति ने भगवान शंकर की कठोर तपस्या की जिसके कारण भगवान शंकर ने उन्हें देवगुरु का पद प्रदान किया और ग्रहों में एक बना कर प्रतिष्ठा दी। इनकी तीन पत्नियाँ क्रमशः शुभा, तारा और ममता कही गई। शुभा से इन्हें सात कन्याएँ उत्पन्न हुईं जिनके नाम हैं क्रमशः भानुमती (जिसके पिटारे की बात आपने पढ़ी होगी), राका, अर्चिकाती, महामती, महिष्मती, सिनीवाली और हविष्मती। तारा से हुए सात पुत्र और एक कन्या तथा ममता से हुए दो पुत्र जो क्रमशः भरद्वाज तथा कच कहलाए। भरद्वाज सप्तऋषियों में एक होकर चूमके (अन्य छह हैं कश्यप, अत्रि, विश्वामित्र, वशिष्ठ, गौतम और जमदग्नि)। भरद्वाज वाल्मीकि के पट्ट शिष्य रहे। कच की कहानी आगे बतायी जाएगी।

'ऋग्वेद' के अनुसार, बृहस्पति का वाहन सोने का रथ है जिसमें वायु के समान वेग वाले आठ घोड़े जुते हैं। प्रकारान्तर से बृहस्पति के रथ का नाम नीतिघोष है। श्रीमद्भागवत के अनुसार बृहस्पति प्रत्येक राशि पर एक-एक वर्ष रहते हैं। वक्रगति होने से इसमें अन्तर आ जाता है। बृहस्पति द्वारा रचित 'बृहस्पति संहिता' में धर्म और दान की विशेष चर्चा की गई है। कहते हैं, देवगुरु ने बृहस्पति संहिता देवताओं के राजा इन्द्र को प्रदान की थी।

देवताओं के गुरु होने के कारण स्वाभाविक था कि बृहस्पति देवासुर संग्राम में देवताओं की क्षति न होने देते। किन्तु राक्षसों के गुरु थे शुक्राचार्य, जिन्हें मृतसंजीवनी विद्या प्राप्त थी। असुरों के राजा वृषपर्वा के गुरु शुक्राचार्य किसी भी युद्ध में मृत हुए असुरों को जीवित कर देते थे। देवताओं की क्षतिपूर्ति नहीं करवाने का क्षोभ बृहस्पति को तो था ही। बृहस्पति ने अपने पुत्र कच को शुक्राचार्य के पास मृतसंजीवनी विद्या सीखने के लिए भेजा जहाँ शुक्राचार्य की एकमात्र सन्तान, देवयानी नाम की कन्या ने कच के प्रति बड़ा स्नेह दिखाया और उसकी जिद के कारण शुक्राचार्य जी ने कच को अपने शिष्यत्व में ले लिया। दो बार जब असुरों ने कच का वध कर दिया था तब शुक्राचार्य ने उसे जला दिया था पर तीसरी बार असुरों ने कच का वध करके उसे जला दिया तथा उसकी राख को मदिरा में घोल कर शुक्राचार्य को ही पिला दिया। कच को लौटने में विलम्ब होता देखकर देवयानी ने शुक्राचार्य से उसे वापस बुलाने की प्रार्थना की। शुक्राचार्य के आवाज देने पर जब पता चला कि कच तो उन्हीं के उदर में था तब देवयानी की प्रार्थना और उसी के आग्रह पर कच को शुक्राचार्य ने मृत संजीवनी विद्या सिखायी-कच शुक्राचार्य का पेट फाड़कर बाहर निकला और उसने मृत संजीविनी विद्या का प्रयोग करके शुक्राचार्य को भी जीवित कर दिया। गुरु के शुक्र से विचित्र सम्बध हैं। गुरु शुक्र को अपना शत्रु मानते हैं-फिर भी अपने पुत्र को शिक्षा प्राप्ति के लिए वहीं भेजते हैं। शुक्र के लिए गुरु सम हैं तथा शुक्र गुरु की राशि मीन मे उच्च के होते हैं। गुरु का ज्योतिषशास्त्र पर पूर्ण प्रभाव है-स्थूलता के लिए भी गुरु कारक हैं। साथ ही ज्ञान, धन, पुत्र और रची के लिए तो हैं ही। कहते हैं, लग्न में बैठा बृहस्पति कुण्डली के सवा लाख दोषों को दूर करता है। क्यों न हो, लग्न में बैठे बृहस्पति लग्न के अलावा पंचम, सप्तम और नवम भाव पर दृष्टि डाल कर इहलोक और परलोक-दोनों को सुपुष्ट करते है।

शुक्र : आइए, अब असुरों के गुरु शुक्राचार्य की चर्चा की जाए। शुक्राचार्य को एक नेत्र से काम चलाना पड़ता है। कहते हैं, राजा बलि ने जब वामनावतार रूप प्रभु को तीन पग भूमि देने के लिए संकल्प के लिए कमण्डल से जल निकालना चाहा तो उसकी टोंटी में शुक्राचार्य घुस गए ताकि कमण्ड़ल से जल निकल ही न सके। वामन ने कुश से कमण्डल के टोंटी की सफाई करनी चाही। कुशाग्र शुक्राचार्य की बाईं आँख में घुसकर उसे फोड़ गया। ऋषि भृगु के पुत्र हुए उषान्, जो स्वय बड़े सिद्ध ऋषि हुए। इन्हें ही हम शुक्राचार्य के नाम से जानते हैं।

महाभारत के आदि पर्व के अनुसार शुक्राचार्य दानवों के पुरोहित तथा योगों के आचार्य हैं। 'महाभारत' और 'मत्स्य पुराण' के अनुसार शुक्राचार्य ने शिवलिंग की स्थापना करके इतनी कड़ी तपस्या की कि भगवान शंकर स्वयं प्रकट हुए। शुक्राचार्य ने उनका स्वागत 'अष्ट मूर्त्तयाष्टक स्तोत्र' से किया। शुक्राचार्य ने अपने शिष्यों दानवों के लिए भगवान शंकर की जैसी आराधना की थी, वैसी किसी ने कभी नहीं की। इसलिए भगवान शंकर ने एकमात्र उन्हें ही मृत संजीवनी विद्या का वरदान दिया। साथ ही; अन्य वरदान भी दिए यथा वे ग्रहों में सर्वोपरि रहेंगे, उनकी कान्ति सूर्य और अग्नि से भी अधिक होगी तथा वे जब सम्मुख होंगे तो रत्नी या पुरुष द्वारा कोई भी प्रारभ किया गया कार्य पूर्ण नहीं होगा। शुक्र पूर्व दिशा में कृतिका से लेकर अश्लेषा तक सात नक्षत्रों से गोचर करते हुए सम्मुख कहे जाते हैं। अगले सात नक्षत्रों से शुक्र का गोचर दक्षिण सम्मुख कहलाता है अर्थात् मघा से विशाखा तक। अनुराधा से श्रवण तक अभिजित को लेकर जो सात नक्षत्र हैं, उनसे शुक्र का गोचर पश्चिम सम्मुख और अगले सात नक्षत्रों अर्थात् धनिष्ठा से लेकर भरणी तक शुक्र का गोचर उत्तर सम्मुख कहा जाता है। भगवान शंकर ने शुक्राचार्य को यह भी वर दिया कि ब्याह आदि धार्मिक कृत्य शुक्र के आकाश में उदित होने के बाद (अर्थात् सूर्य से अस्तगत होने के बाद जब उससे शुक्र छूट जाएं) ही होंगे। नन्दा तिथियाँ अर्थात् प्रतिपदा, षष्ठी और एकादशी शुक्र से सम्बन्ध होने के कारण ही शुभ कही जाएँगी। शुक्र की आराधना करने वाले पुंसकत्व को प्राप्त करके सन्तान सुख भोगेंगे। शुक्र ने जिस लिंग की स्थापना करके पूजा की थी, उसको शुक्रेश कहा जाएगा तथा वे शंकर जी के उदर में वास करने के उपरान्त, उनके शुक्र (वीर्य) के साथ बाहर आएँगे।

कालान्तर में दानवों के राजा अन्धक ने देवताओं को बड़ा सताया। उसकी सेना में हत हुए लोग शुक्राचार्य द्वारा मृत संगीवनी विद्या के प्रयोग के कारण

जीवित हो जाते थे। अन्धक एव उसकी सेना से पीड़ित देवगण भगवान शंकर के पास अपनी व्यथा कहने गये क्योंकि उन्हीं के आशीर्वाद के कारण शुक्राचार्य ने दानवों को अजेय बना दिया था। भगवान शंकर ने अपने बैल नन्दी को भेज कर शुक्राचार्य को बुलाया और उन्हें जीवित ही उदरस्थ कर गये। दानव शक्तिहीन होकर हार गए। तब भगवान शंकर के वीर्य के साथ शुक्राचार्य प्रकट हुए जिन्हें भगवान शंकर तथा माता गौरी ने पुत्र के रूप में स्वीकार कर लिया और अमरत्व का वरदान दिया। 'मत्स्य पुराण' के अनुसार, शिव के वरदान के कारण शुक्र इहलोक और परलोक की सारी सम्पति के स्वामी बना दिए गए। महाभारत के आदि पर्व के अनुसार तो केवल सम्पति ही नहीं शुक्राचार्य औषधियों, मंत्रों तथा रसों के भी स्वामी हैं। इनका सामर्थ्य अद्भुत है किन्तु इन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति अपने शिष्यों, असुरों को दे दी और स्वयं तपस्वी जीवन ही स्वीकार किया। ब्रह्मा की प्रेरणा से शुक्राचार्य ग्रह बन कर तीनों लोको के प्राण रक्षा करते हैं।

शुक्र महा शुभफलदायक हैं। अभिजात्य, परिष्कृत रुचि, कला के प्रति अभिरुचि आदि इनके गुण तो हैं ही, इनके कारत्व की विस्तृत चर्चा पहले ही की जा चुकी है।

शनि : शनि के जन्म की कथा हम सूर्य के अंश में पढ़ चुके हैं। छाया (सवर्ण) तथा सूर्य कें पुत्र शनैश्चर बचपन से भगवान श्री कृष्ण के परम भक्त थे। 'ब्रह्मपुराण' मे यह कथा आती है कि वयस्क होने पर शनि का ब्याह इनके पिता ने चित्ररथ की कन्या से कर दिया। शनि जहाँ एक ओर श्री कृष्ण के अनुराग में डूबे रहते थे वहीं उनकी पत्नी भी साध्वी और ईश्वर पथानुगामिनी थी। एक रात पुत्र प्राप्ति की इच्छा से स्नान के बाद वह अपने पति के पास गई जो कृष्ण के ध्यान में डूबे हुए थे। लाख प्रयास के बाद भी शनि महाराज का ध्यान नहीं टूटा-उनकी पत्नी का शृंगार तो व्यर्थ गया ही उसका ऋतुकाल भी निष्फल हो गया जब वह गर्भवती ही सकती थी। क्षुब्ध होकर पत्नी ने उन्हें शाप दे दिया कि अगर वे अपनी पत्नी को भी नहीं देख सके तो अब उनकी दृष्टि विच्छेद कारक हो जाएगी-अर्थात् उनकी दृष्टि जहाँ पड़ेगी वहाँ अवश्य विनाश होगा। ध्यान टूटने पर शनि ने अपनी पत्नी को मनाया जिससे उसे भी बड़ा पश्चात्ताप हुआ किन्तु होनी को कौन टालता? शनि, जो पहले से ही अन्तर्मुखी थे, तब से अपना सर नीचे ही करके रहने लगे ताकि न तो उनकी दृष्टि कहीं पड़ेगी न ही कहीं विच्छेद होगा। यह कथा आगे और करुण हो जाती है-

भगवान श्रीकृष्ण प्रत्येक मन्वन्तर के आरभ में मनु के साथ प्रकट होते हैं। श्री कृष्ण का जन्म विघ्ननाशक गणेश के रूप में माता पार्वती की कोख से होता रहा है। नये मन्वन्तर के प्रारभ मे कैलास पर्वत पर आनन्दमय वातावरण था। माता पार्वती की कोख से भगवान श्री गणेश धरा पर पधारे–देवी देवताओं के दमकते मुखड़ों के बीच बेचारे शनि दृष्टि नीची किए बैठे हैं। शनि महाराज सर झुकाए हुए ही नवजात की मंगल कामना और उसे दीर्घायु होने का आशीर्वाद देते हैं। आखिर नवजात हैं तो उनके आराध्य कृष्ण के ही रूप! किन्तु विधि का विधान, माता पार्वती शनि से पूछती हैं कि उन्होंने नवजात शिशु को बिना देखे आशीर्वाद क्यों दिया? शनि नि:संकोच अपनी पत्नी के शाप की कथा बताते हुए कहते हैं कि पूरी सृष्टि कर्मफल से बँधी हुई है। उसी कर्मफल के परिणाम स्वरूप भगवान श्री कृष्ण गणेश के रूप में अवतरित हुए हैं। शनि महाराज आगे कहते हैं ''मैं तो अपने कर्मों के फल से शापित हुआ जो मुझे ही वहन करना होगा किन्तु मैं नहीं चाहता कि मेरी दृष्टि किसी जीव पर पड़कर उसे कष्ट दे।''

उस सभा में उपस्थित समस्त स्त्रियां संभवत: एक पत्नी पीड़ित नर की व्यथा कथा पर हँस पड़ी होंगी जिससे माता पार्वती के अंहकार को ठेस पहुंची होगी। माता शनि से कहती है कि मेरे पुत्र को तो तुम्हारी दृष्टि से कोई अहित हो ही नहीं सकता–विश्व की कोई शक्ति विघ्नेश्वर विघ्ननाशक का बाल तक बाँका नहीं कर सकती–मैं तुम्हें आदेश देती हूँ कि गणेश पर अपनी दृष्टि डालो। बेचारे शनिश्चर माता के कोप के भय से नवजात गणेश पर दृष्टिपात करते हैं और दृष्टि पड़ते ही उस शिशु का सर धड़ से अलग होकर ब्रह्माण्ड में विलीन हो जाता है। सरहीन धड़ अपनी गोद में पाकर माता पार्वती मूर्च्छित होकर गिर पड़ी और सारा कैलास शोक मग्न हो गया। तभी भगवान विष्णु गरुड़ पर आरूढ़ होकर निकले और उन्हें पुष्प भद्र नदी के तीर पर हाथियों का एक झुण्ड दिखा। अविलम्ब उस झुण्ड के स्वामी का सर काट कर अपने रथ लिए हुए गरुड़ पर सवार श्री विष्णु कैलास पहुँचे जहाँ आनन–फानन में यह सर नवजात के धड़ से जोड़कर उसे जीवित कर दिया गया। माता पार्वती की मूर्च्छा टूटी और गज के सर वाला पुत्र उन्होंने स्वीकार कर लिया। किन्तु जैसे ही उनकी दृष्टि सामने हाथ बांधे, सर झुकाए, नीची दृष्टि किए खड़े शनि पर पड़ी, उनका क्रोध भभक उठा। खीज कर उन्होंने शनि को तुरंत अपंग होने का शाप दे दिया। बेचारे शनि को अकारण दो स्त्रियों के क्रोध के कारण शापित होना पड़ा। तब वहाँ उपस्थित देवताओं ने माता से शनि की ओर से प्रार्थना की और उन्हें स्मरण दिलाया कि

शनि ने मात्र उनके आदेश का, वह भी अनिच्छा से, पालन किया था इसलिए माता का शाप अकारण ही था। माता पार्वती ने भी समझा कि यह शाप अनावश्यक था इसलिए उन्होंने शनि को बहुत आशीर्वाद दिए। उसे अनासक्ति ईश्वर भक्ति, तपस्वी दीर्घायु होने का तथा ग्रहों में पूजनीय होने का आशीर्वाद दिया। शाप तो पड़ ही चुका था किन्तु उसे भी माता ने लँगड़ा कर चलने तक सीमित कर दिया। तब से शनि नीची दृष्टि किए, लँगडा कर धीमे-धीमे चलते हैं। यह तो हुई शनि के दुर्भाग्य की कथा।

अब हम रोहिणी शकट की चर्चा करेंगे। शकट गाड़ी को कहते है। रोहिणी नक्षत्र में तारे उसे गाड़ी का रूप देते हैं। ज्योतिष शास्त्र में कहा गया है कि रोहिणी में शनि का प्रवेश प्रजा के लिए कष्टकारक होता है जिसे रोहिणी शकट कहते हैं। इसके कारण पृथ्वी पर बारह वर्षों का दुर्भिक्ष पड़ जाता है। रघुकुल के प्रतापी राजा दशरथ के शासन काल में यह योग आने वाला था। इस सूचना से विचलित होकर दशरथ ने अपने दरबार में मंत्रणा की। वशिष्ठ ऋषि ने कहा कि रोहिणी के स्वामी हैं ब्रह्मा जो प्रजा के पालक हैं। यदि शनि रोहिणी भेद करते हैं तो प्रजा को कष्ट अवश्यंभावी है। किन्तु महाप्रतापी दशरथ इस सूचना से विचलित न होकर आगे की सोचने लगे। वे क्षत्रिय धर्म निबाहते हुए अपने रथ पर सवार होकर नक्षत्र मण्डल में पहुँचे और नित्य की भांति शनि महाराज को प्रणाम करके उनसे युद्ध करने लगे। शनि दशरथ की कर्तव्यनिष्ठा से प्रसन्न हुए और उन्हें वर माँगने को कहा। प्रजापालक दशरथ ने शनि से वर माँगा कि जब तक सूर्यादि ग्रह तथा अन्य नक्षत्र हैं तब तक शनि के रोहिणी संचार से प्रजा को कष्ट न हो। उन्होंने शनि की आराधना जिस मंत्र से की, वह आज तक शनि को प्रसन्न करने हेतु प्रयोग में लाया जाता है।

ज्योतिष शास्त्र की उपादेयता इसी बात में है कि पीड़ा से उपर उठकर उसे ही शक्ति का माध्यम बना लिया जाए जैसे शनि महाराज ने किया। कर्म फल तो भोगने ही पड़ते हैं-अच्छे ज्योतिषी और ज्योतिष शास्त्र मे विश्वास रखने वाले लोग उस भोग काल को समदर्शी भाव से देखने की तैयारी करा देते हैं। अर्थात् जब अच्छा काल चल रहा हो तो प्रभु का विस्मरण न हों, ग्रहों की शान्ति के पाठ चलते रहें और अगर काल विपरीत हों तो अच्छा है कि प्रभु के नाम सुमिरन से वह काल भी शान्तिपूर्वक कट जाए।

राहु-केतु : राहु-केतु की कथा भी विचित्र हैं। पुराणादि के पढ़ने से प्रतीत होता है कि पृथ्वी पर जीवन को तीन मुख्य भागों में बांटा जाता था-मानव, असुर

और दैत्य अथवा दानव। इनके अतिरिक्त देवता थे जिनकी माता अदिति से हम पहले ही परिचित हो चुके हैं। असुर, दैत्य अथवा दानवों के पिता तो एक ही थे अर्थात् ऋषि कश्यप पर अलग-अलग माताओं से जन्म लेने के कारण इनके नाम अलग-अलग हुए। राक्षसों की माता का नाम था-खस वहीं दैत्यों की माता का नाम दिति था। पुराणों के अनुसार, मानव तो जम्बूद्वीप में रहते थे -जो संभवतः आज का एशिया या पूर्वी यूरोप या उसका मिला-जुला हिस्सा होगा दानवों को मिले भू-भाग को पाताल मानते हैं। राक्षसों की नगरी जम्बूद्वीप के दक्षिण में कहीं रही होगी। कहते हैं, देवताओं का वास स्वर्ग में था जो शायद आज का कैलास मानसरोवर क्षेत्र है। वहीं से देवतागण पृथ्वी के साम्राज्य का संचालन करते थे। कश्यप ऋषि के पुत्र हिरण्यकशिपु नामक असुर की कथा आप जानते ही हैं। इन्हीं की बहन थी-होलिका जो हिरण्यकशिपु के पुत्र और भगवान के भक्त प्रह्लाद को गोद में लेकर जलती अग्नि में बैठ कर मृत्यु को प्राप्त हुई थी। हिरण्यकशिपु की एक बेटी भी थी जिसका नाम था-सिंहिका। सिंहिका का ब्याह विप्रचिति से हुआ था-जैसा कि नाम से स्पष्ट है विप्रचिति का चित्त आसुरी नहीं था। इन्हीं माता-पिता से स्वरभानु नामक सन्तान की प्राप्ति हुई। स्वरभानु ने घोर तपस्या की। वह देवताओं की तरह पूजा जाना चाहता था-चाहता था, उसे भी अमरत्व प्राप्त हो जाए। भगवान उसकी तपस्या से प्रकट हुए और कहा तुम्हें देवत्व तो प्राप्त नहीं हो सकता क्योंकि तुम्हारा जन्म असुर कुल में हुआ है। फिर भी, तुम देवताओं के साथ पूजे जाओगे। यह वरदान तुम्हें मिलता है। यह स्वरभानु की साधना थी कि असुर से वह सुर में गिनने योग्य बनने का प्रयास कर रहा था। 'श्रीमद्भागवत्' के अनुसार समुद्र मंथन से चौदह रत्न निकले वे क्रमशः कामधेनु गाय, उच्चैश्रवा घोड़ा, ऐरावत हाथी, कौस्तुभ मणि, कल्पदुम, रम्भा नाम की अप्सरा, वारुणी नाम की कन्या, पारिजात वृक्ष, चन्द्रमा, लक्ष्मी, विष, मदिरा, अमृत और शंख थे।

इनमें प्रायः सारे के सारे रत्न, विष समेत देवताओं के हिस्से आए क्योंकि असुरों की रुचि उनमें थी भी नहीं। हाँ, जब अमृत के बांटने का समय आया तो देवताओं के साथ-साथ असुरों में भी उसे पीने का होड़ लगी। स्वरभानु ने देखा कि यही अमरत्व पाने का सबसे अच्छा अवसर है। इस बीच भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप धारण करके अमृत पिलाने का काम अपने जिम्मे ले लिया। वह महामाया, मोह माया, जिसके प्रभाव से त्रिभुवन मोहित है, उसी मोहिनी के आगे असुरों की क्या बिसात थी? मोहिनी ने देवताओं और असुरों को एक क्रम में

बिठाया और अमृत पिलाने का काम उस छोर से प्रारंभ किया जहाँ देवता बैठे थे। स्वरभानु जो न जाने कब से तृषित इस घड़ी की प्रतीक्षा कर रहा था, ताड़ गया कि माजरा क्या था। फिर क्या था, वह भी देवता के वेश में सूर्य और चन्द्रमा के बीच जा बैठा। मोहनी, जो जगत् मोहती थी, ने भी काल के वश स्वरभानु के मुँह में अमृत डालना प्रारंभ किया। सूर्य और चन्द्रमा को जैसे सच का पता चला, तत्क्षण उन्होंने स्वर-भानु का भेद खोल दिया और मोहनी रूपी भगवान विष्णु ने अमृत पिलाते-पिलाते ही उसका सर काट दिया-अमृत का संसर्ग होने से उसका सर और उसका धड़-दोनों अमर हो गए-ब्रह्मा जी ने उन्हें ग्रह बना दिया। असूया (सिंहिका) स्वरभानु का सर अपने साथ ले गई और प्यार से उसका पालन-पोषण किया। कालान्तर में उस सर से सांप का धड़ निकल आया। इसी का नाम राहु पड़ा। उधर मिनी नामक ब्राह्मण धड़ ले गया था जिसको वह पुत्रवत सेवता रहा। इस धड़ को भगवान विष्णु ने सर्प का सर दे दिया। इस हिस्से का नाम केतु हो गया जो अपने प्रयासों और पूर्व जन्म के कर्मफल के कारण ईश्वर भक्त होकर श्रद्धा का पात्र बना। ऋग्वेद के अनुसार, असूया का पुत्र राहु सूर्य और चन्द्रमा को जब तम से आच्छन्न कर लेता है तब इतना अंधकार छा जाता है कि लोग अपने स्थान को भी पहचान नहीं पाते। महाभारत, भीष्म पर्व, के अनुसार अन्य ग्रहों के साथ राहु भी ब्रह्मा की सभा में बैठता है। ग्रह बनने के बाद भी राहु वैर भाव से पूर्णिमा को चन्द्रमा और अमावस्या को सूर्य पर आक्रमण करते हैं। इसे हम ग्रहण या राहु पराग कहते हैं। 'मत्स्य पुराण' के अनुसार राहु का रथ अन्धकार स्वरूप है जिसे कवच आदि से सजाए हुए काले रंग के आठ घोड़े खींचते हैं। ग्रहण के अलावा भी चन्द्रमा के आकार में राहु के कारण परिवर्तन होते हैं। राहु को इसलिए नित्य राहु भी कहा गया-वह राहु जो प्रतिदिन चन्द्रमा पर प्रहार करके उसके आकार में परिवर्तन करता रहता है। पर्व राहु चन्द्रमा को ग्रस कर ग्रहण का कारण बनता है।

केतु राहु का ही कबन्ध है जो राहु के साथ ग्रह बन गया। 'मत्स्यपुराण' के अनुसार, केतु बहुत से हैं जिनमें प्रधान धूमकेतु हैं। जहा राहु का स्वरूप महाभारत में भीष्म पर्व के अनुसार मण्डलाकार है वहीं केतु का मण्डल ध्वजाकार माना गया है। शायद यही कारण है कि इसकी कल्पना झण्डे की तरह की गई है। कहा जाता है, केतु की ध्वजा सूर्य की ध्वजा से भी ऊंची लहराती है। केतु के कारण सूर्य ग्रहण होते हैं-यद्यपि केतु का माप मात्र छह अंगुल बताया गया है। राहु-केतु पहले तो एक ही शरीर में स्वरभानु के नाम से जाने जाते थे किन्तु ग्रह

बनने के बाद उनका पुनर्जन्म माना गया। उन्हें क्रमशः पैठीनस और जैमिनी गोत्रों का सदस्य माना–गया।

एक बात याद रखने की है। राहु और केतु अपवादों को छोड़ कर प्रायः क्लेशकारी होते हैं। इनमें यह भी कहा जाता है क़ि केतु अपेक्षाकृत कम कष्टदायक है और जातक को धर्मोन्मुख करता है। द्वादश भाव का केतु मोक्षकारी कहा गया है। भारतीय विद्या भवन में ज्योतिषशास्त्र के वरिष्ठ अवैतनिक अध्यापक श्री शिवराज शर्मा ने राहु पर बहुत सुन्दर शोधपरक पुस्तक लिखी है। उसक अध्ययन से एक बात स्पष्ट होती है कि राहु तथा केतु हमेशा बुरे फल नहीं देते जैसे शनि और मंगल हमेशा बुरे फल नहीं देते।

जैसा हम पहले कह चुके हैं, पराशर ऋषि सभी अवतारों को ग्रहों के अवतार कहते हैं इसलिए हर ग्रह ईश्वर का स्वरूप है। बुरी दशाएँ हमें मांजने के लिए आती हैं। हमारा तमस शेष हो जाए, पूर्व जन्म के पाप कटें और हम ईश्वर को ग्राह्य हों–यही कार्य है ग्रहों का। पाठकों की सुविधा के लिए इस अध्याय के अन्त में नवग्रहों की शांति के बारे में कुछ अनूभूत बातें कही गई हैं। यहाँ हमने महर्षि पराशर द्वारा ग्रहशान्त्यध्याय को ही आधार बनाया है। हाँ, पराशरी में शान्ति हेतु रत्न की चर्चा नहीं की गई है। फिर भी आज के देश, काल और स्वभाव को देखते हुए उनका भी वर्णन कर दिया गया है किन्तु सत्य तो यह है कि जगत जननी की कृपा से शान्ति के मन्त्र ग्रहों को सुफल देने में अवश्य प्रेरित करेंगे। पराशर ऋषि का वचन है,

''यस्य चश्च सदा दुःस्थः स तं यत्नेन पूजयेत्।
एषां धात्रा वरो दत्तः पूजिता पूजयिष्यथ।
मानवाना ग्रहाधीनां उच्छ्रायाः पतनानि च।
भावाऽभावौ च जंगतां तस्मात् पूज्यतमा ग्रहाः।।।''

अर्थात् जिस व्यक्ति के लिए जिस समय जो ग्रह अशुभ फल देने वाले हों उस समय वह व्यक्ति उस ग्रह की भक्तिपूर्वक पूजा करे क्योंकि श्री ब्रह्माजी ने ग्रहों को वरदान दिया है कि जो तुम्हारी पूजा करे तुम उसका कल्याण करो। ग्रहों को पूज्यतम (सबसे अधिक पूजने योग्य) मानना चाहिये क्योंकि संसार की उत्पत्ति तथा विनाश के साथ ही मानवों के जीवन का उत्थान और पतन भी ग्रहों के ही अधीन है।

भारतीय विद्या भवन की ज्योतिष कक्षाओं में हम ऐसा ही मानते हैं।

नवग्रह सारिणी परिशिष्ट–1

1.	नवग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	राहु	केतु
2.	स्वरूप	दो भुजायें, कमल पर आसीन, दोनों हाथों में कमल, सात घोड़ों के रथ पर सवार।	वस्त्र, रथ, अश्व, तीनों श्वेत, कमल पर आसीन, दस घोड़ों के रथ पर सवार। एक हाथ में गदा दूसरा वरमुद्रा में।	शरीर के रोयें लाल, लाल मालायें, लाल वस्त्र। चार भुजायें। क्रम से शक्ति, त्रिशूल, गदा एवं वरमुद्रा। मेंढ पर सवार।	पीला वस्त्र, चार हाथों में क्रमशः तलवार, ढाल, गदा एवं वरमुद्रा। वाहन सिंह।	पीत वर्ण, पीत वस्त्र, कमल का आसन। चार हाथों में क्रमशः दण्ड, रुद्राक्ष की माला, कमण्डल एवं वरमुद्रा।	श्वेत वर्ण, श्वेत कमल का आसन। चार हाथों में क्रमशः दण्ड, रुद्राक्ष की माला, कमण्डल एवं वरमुद्रा।	शरीर कांति इंद्रनील मणि के समान। नीला वस्त्र, गिद्ध पर सवार। हाथों में क्रमशः धनुष, बाण, त्रिशूल एवं वरमुद्रा।	भयंकर मुख, नील वर्ण, काले रंग का वस्त्र। हाथ में तलवार, ढाल, त्रिशूल, और वरमुद्रा। वाहन- सिंह	विकृत मुख, काला वस्त्र, धूम्रवर्ण, दो भुजायें, एक हाथ में गदा दूसरा वरमुद्रा में गिद्ध पर सवार।
3.	जप की कुल संख्या	7,000	11,000	10,000	9,000	19,000	16,000	23,000	18,000	17,000
4.	समय	प्रातःकाल	सन्ध्या काल	प्रातः 8 बजे	दोपहर	संध्याकाल	सूर्योदयकाल	संध्याकाल	रात्रि	रात्रि
5.	शांति हेतु रत्न	माणिक्य	मोती	प्रवाल (मूंगा)	पन्ना	पीला पुखराज	हीरा	नीलम	फिरोजा	लहसुनिया

वैदिक मंत्र (छोटे मंत्र कोष्ठक में दिये गये हैं)

सूर्य–ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्। (ॐ घृणि सूर्याय नमः)
चन्द्र–ॐ इमं देवा असपत्नं सुवध्वं। महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय इमममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश एषवोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानां राजा।। (ॐ सों सोमाय नमः)
मंगल–ॐ अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् अपां रेतांसि जिन्वति। (ॐ अं अंगारकाय नमः)
बुध–ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सं सृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत।(ॐ बुं बुधाय नमः)
बृहस्पति–ॐ बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्। (ॐ बृं बृहस्पतये नमः)
शुक्र–ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत् क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानं, शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु।। (ॐ शुं शुक्राय नमः)
शनि–ॐ शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शं योरभि स्रवन्तु नः। (ॐ शं शनैश्चराय नमः)
राहु–ॐ कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता।। (ॐ रां राहवे नमः)
केतु–ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे समुषद्भिरजायथाः। (ॐ कें केतवे नमः)

पूजन विधि

जब नयी महादशा आरंभ हो, अध्याय 7 में दी गयी सारिणी 7.23 की तरह अपनी सारिणी बना कर सबसे शुभ दिन निकाल लीजिये। शुद्ध तन, मन और वसन से उस दिन बताये गये समय पर एक स्वच्छ आसन पर पूर्व या उत्तर मुंह बैठकर पहले अपने माता–पिता, फिर गुरु फिर नवग्रहों का ध्यान कीजिये। उनकी पंचोपचार से अर्चना करने के बाद महादशा नाथ के ऊपर की सारिणी में दिये गये स्वरूप (विग्रह) का ध्यान कीजिये। महादशा के मन्त्रों की संख्या का दैनिक जाप इतनी संख्या में कीजिये कि उनकी प्रत्यन्तर दशा में ही जाप पूरे हो जायें। अगली अन्तर दशा प्रारंभ होने पर अन्तर दशानाथ के मन्त्रों की संख्या का दैनिक जाप इतनी संख्या में कीजिये कि उनकी प्रत्यन्तर महादशा में ही जाप पूरे हो जायें। इसी प्रकार अगली अन्तरदशा प्रारंभ होने पर अन्तरदशा नाथ के लिये भी उपर्युक्त प्रकार से पूजन करें।

परिशिष्ट-II

जन्म काल शुद्धिकरण

ज्योतिषीय गणना में जन्मकाल के शुद्ध होने का महत्व किसी से भी छिपा नहीं है। सारी भविष्यवाणियों की सत्यता लग्न और ग्रह स्पष्ट की शुद्धता पर पूरी तरह निर्भर करती है। यही हाल दशा क्रम का भी है। यदि जन्म काल में 4 मिनट का अन्तर हो तो लग्न की डिग्रियों में प्रायः 1^0 का अन्तर आ जाएगा। अर्थात् षष्ठांश तो पूरी तरह बदल जाएगा ही, कोई ताज्जुब नहीं कि नवांश जैसे महत्वपूर्ण वर्ग में भी अन्तर आ जाए। इसलिए जन्मकाल का शुद्ध होना परम आवश्यक है। दुर्भाग्यवश व्यवहार में जन्मकाल लिखने या जानने में लापरवाही अवश्यम्भावी है क्योंकि किसी भी प्रसव के समय सबकी प्राथमिकता जच्चा और बच्चे के स्वास्थ्य की होती है। उनके सकुशल होने की सूचना के बाद ही जन्मकाल का ध्यान आता है। इसलिए अधिकांश ज्योतिषी 10 से 15 मिनटों की त्रुटि को त्रुटि मानते ही नहीं किन्तु इसके कारण गणना में होने वाली भूल कई बार भयंकर हो जाती है। जन्मकाल शुद्धि के कई पुराने सिद्धान्त हैं जिनकी अपनी सीमाएँ हैं। वर्तमान काल में श्री. के. एन. राव एकमात्र ज्योतिषी हैं जो जातक के जीवन के पूर्वकाल की घटनाओं को आधार मानकर दशा तथा वर्ग कुण्डलियों के आधार पर जन्मकाल में संशोधन कर देते हैं। किन्तु यह विधि गुरुओं की है, जो विश्वसनीय तो है पर साथ-साथ दुरूह भी। आचार्य वराहमिहिर की पुस्तक 'बृहज्जातक' के निषेकाध्याय के श्लोक 20 में जन्म का इष्टकाल निकालने की विधि बताई गई है किन्तु उसके लिए वराहमिहिर अपेक्षा करते हैं कि ज्योतिषाचार्य महोदय को गर्भाधान के सही समय का लग्न तथा उस समय के चन्द्रमा का रेखांश पता होगा! ये सूचनाएँ कहाँ मिलेंगी?

एक दूंसरा मान्य तरीका है—पंचतत्व सिद्धान्त का। इस सिद्धान्त के अनुसार लड़के का जन्म पृथ्वी, अग्नि और आकाश तत्व के दौरान ही सम्भव है वहीं लड़की के जन्म के लिए जल अथवा वायुतत्व होना आवश्यक है। तत्वों की गणना का सिद्धान्त सीधा है। दिनमान (सूर्योदय से सूर्यास्त तक का समय) अथवा रात्रिमान (सूर्यास्त से सूर्योदय तक का समय) 120 बराबर भागों में बाँट दें। प्रत्येक भाग को हम सुविधा के लिए 'a' कहेंगे। अर्थात् कुल दिनमान या रात्रिमान 120'a' हो गया। रविवार के दिनमान अथवा रात्रिमान की शुरुआत अग्नि तत्व से, सोमवार की जल तत्व से, मंगलवार की पुनः अग्नि तत्व से, बुधवार की पृथ्वी तत्व से, गुरुवार की आकाश तत्व से, शुक्रवार की पुनः जल तत्व से तथा शनिवार की वायु तत्व से मानते हैं। इस 120 'a' को आठ बराबर हिस्सों में बाँटेंगे। प्रत्येक हिस्सा 15 a हुआ। पृथ्वी तत्व को जहाँ 15 a हिस्से में 'a' हिस्सा दिया गया है, वहीं जल, अग्नि, आकाश तथा वायु तत्वों को क्रमशः 2a, 3a, 4a, तथा 5a हिस्से दिए गए हैं। मान लीजिए, किसी व्यक्ति का जन्म मंगल को दिन में हुआ है। मंगलवार के दिन की शुरुआत अग्नि तत्व से होगी जिसका काल 3a है। उसके बाद आकाश तत्व 4a काल तक, फिर वायु तत्व 5a काल तक, तत्पश्चात् पृथ्वी तत्व a काल के लिए और जल तत्व का काल 2a तक रहेगा। उसके बाद यही क्रम विपरीत दिशा में चलेगा। अर्थात् अगला काल 2a तक जल तत्व, a काल के लिए पृथ्वी तत्व, फिर '5a' के लिए वायु, अगले 4a के लिए आकाश तत्व और 3a के लिए अग्नि तत्व। इस प्रकार हम 30a काल पूरा कर चुके हैं। यही क्रम अर्थात् 3a, 4a, 5a, a तथा 2a और वापस 2a, a, 5a, 4a तथा 3a का एक चक्र पूरा होता है। इस प्रकार 120a चार चक्रों में पूरा हो जाता है। इष्टकाल में अग्नि, पृथ्वी या आकाश तत्व का होना आवश्यक है तभी लड़के का जन्म होगा। इसी प्रकार कन्या के जन्म के लिए इष्टकाल में जल या वायु तत्व होना आवश्यक है।

आपने देखा कि यह पूरा तरीका कितना कष्टदायी है। इसलिए हम एक सीधा-साधा तरीका बताते हैं जिससे जन्मकाल की शुद्धि काफी हद तक सुनिश्चित की जा सकती है। हम इसे 'सदाशिव गिरि विधि' कहेंगे। स्वामी सदाशिव गिरि ने अंग्रेजी में एक पुस्तक लिखी है जिसका नाम है The Correct value of Ayanamsha. जैसा कि नाम से स्पष्ट है, इस पुस्तक में स्वामीजी ने एक नए अयनांश की वकालत की है जिसे वे देवदत्त (देवताओं द्वारा दिया गया) अयनांश कहते हैं। यह अयनांश चित्रपक्ष अयनांश या लाहिड़ी अयनांश से

$0^{o}22'27''$ पीछे है। देवदत्त अयनांश पर आधारित ग्रह स्फुट या लग्न स्फुट लाहिड़ी पद्धति से निकाले गए मूल्यों से $0^{o}22'37''$ अधिक होंगे अर्थात् जन्मकाल की दशा/अन्तर्दशा/प्रत्यन्तर्दशा जानने के लिए चन्द्रमा चित्रपक्षीय रेखांश में $22'37''$ जोड़ कर संशोधन करना पड़ेगा। स्वामी जी इस अयनांश के आधार पर सही जन्मकाल के निर्धारण की एक सहज विधि बताते हैं जिसे श्री राव ने भी आकर्षक और वैज्ञानिक पाया है।

सदाशिव गिरि विधि—स्वामी जी बताते हैं कि किसी भाव के फल मिलने की सबसे ज्यादा सम्भावना उस ग्रह की प्रत्यन्तर्दशा में होती है जो उस भाव से सबसे करीब से जुड़ा हुआ है। अर्थात् प्रत्यन्तर्दशा नाथ या तो उस भाव का स्वामी हो या वहाँ बैठा हो या उस भाव को देखता हो अथवा उस भाव के स्वामी के साथ बैठा हो जिस भाव के फल मिलते हैं। जब हम जन्म की बात करते हैं तो निश्चित रूप से लग्न भाव की बात करते हैं। स्वामी जी यद्यपि इस सूत्र का श्रेय स्वर्गीय श्री एच. आर. शंकर को देते हैं। फिर भी, यह बात प्रायः प्रत्येक गम्भीर विद्यार्थी जानता है कि श्री शंकर के प्रत्यन्तर्दशा सिद्धान्त के प्रतिपादन से भी पाँच वर्ष पूर्व से श्री के एन. राव प्रत्यन्तर्दशा नाथ की महत्ता पर विशेष बल देते रहे हैं। इस प्रकार श्री शंकर तथा स्वामी जी के प्रयासों से श्री राव के कार्यों की पुष्टि ही होती है। अनुभव से भी पाया गया है कि प्रत्यन्तर्दशा नाथ फलादेश में सबसे प्रभावी सिद्ध होते हैं। यदि कोई व्यक्ति आपके पास अपनी कुण्डली लेकर आता हैं तो आप पाएँगे कि प्रायः 90% मामलों में उसकी चिन्ता/समस्या या जिज्ञासा उस समय चल रहे प्रत्यन्तर्दशानाथ से जुड़ी होगी अर्थात् उन भावों के कारकत्व की समस्या होंगी जहाँ के स्वामी प्रत्यन्तर्दशानाथ हैं या उस भाव की समस्या जहाँ प्रत्यन्तर्दशानाथ बैठे हैं या फिर जिन वस्तुओं का कारक प्रत्यन्तर्दशानाथ हो उसके बारे में समस्या होती है। यह तो थोड़ा विषयान्तर हो गया, वापस मूलधारा में चलते हैं, स्वामी सदाशिव गिरि के सप्त सूत्री सिद्धान्त की ओर। स्वामी सदाशिवजी के अनुसार, ये सप्तसूत्र प्रायः 65% मामलों पर सही पाए गए। बाकी 35% मामलों में जन्मकाल सही-सही ज्ञात न होना भी प्रमुख कारण पाया गया था। स्वामीजी के अनुसार, शल्य चिकित्सा या ऑपरेशन के द्वारा जो संतान पैदा होती है, उसके जन्म का समय सही नहीं माना जाना चाहिए क्योंकि यह तो अस्वाभाविक जन्म हुआ।

सप्तसूत्री सिद्धान्त

1. "जन्मकाल के समय लग्नेश प्रत्यन्तर्दशानाथ होते हैं।" यह सिद्धान्त सबसे अधिक मामलों में सही सिद्ध हुआ है इसलिए सबसे पहले इसी की चर्चा करते हैं। स्वामी जी कहते हैं कि जों 65% मामले उनके सिद्धान्त पर खरे उतरे, उनमें से भी 50 से 55% मामले ऐसे थे जहाँ जातक के जन्म के समय लग्नेश की प्रत्यन्तर दशा चल रही थी।
2. अगर जन्मकाल में लग्नेश की प्रत्यन्तर्दशा न हो और चन्द्र लग्न अधिक बलशाली हो तो प्रायः 10 से 15% मामलों में जातक के जन्मकाल की प्रत्यन्तर्दशा चन्द्र लग्न के स्वामी की होती है।
3. ऐसा भी हो सकता है कि जन्म लग्न या चन्द्र-लग्न की तुलना में नवांश लग्न अधिक प्रभावशाली हो। ऐसे मामले प्रायः 10% तक पाए गए हैं। ऐसी स्थिति में जन्मकाल में प्रत्यन्तर्दशा नवांश कुण्डली के लग्नेश की होती है।
4. कभी ऐसा भी हो सकता है कि लग्नेश छठे, आठवें या बारहवें भाव अथवा अपोक्लीम भावों में चला गया हो तो जन्मकाल की प्रत्यन्तर्दशा लग्न जीव (अर्थात् लग्नेश जिस नक्षत्र में हो उसका स्वामी) की होती है। ऐसा प्राय 10% मामलों में पाया गया है।
5. कुछ मामलों में लग्नेश यदि राहु या केतु के बहुत पास आकर प्रगाढ़ सम्बन्ध बना ले तो सम्भव है कि प्रत्यन्तर्दशानाथ राहु या केतु हो। ऐसे मामले 10% से अधिक नहीं पाए गए हैं। बहुत पास आकर इनमें भी राहु के मामले अधिक पाए गए हैं।
6. कभी-कभी यदि राजयोग कारक ग्रह (अर्थात् जो ग्रह एक साथ केन्द्र तथा त्रिकोण के स्वामी हो जाएँ, जैसे कर्क या सिंह लग्न के लिए मंगल) लग्न में बैठा हो तो उसकी प्रत्यन्तर्दशा में भी जातक का जन्म हो सकता है। ये मामले यदा-कदा ही देखे गए हैं।
7. और अन्त में, यदि किसी बेहद शक्तिशाली ग्रह की दृष्टि लग्न पर पड़ रही हो तो उसकी प्रत्यन्तर्दशा में भी जातक का जन्म हो सकता है। ऐसा भी विरले ही देखा गया है।

आइए, इस सात सूत्री विधा को व्यवहार में लाने का प्रयास करें। इसके लिए हम सदाशिव गिरि पद्धति के प्रयोग को चरणबद्ध करेंगे।

(i) कुण्डली में चन्द्रमा का रेखांश देखें। याद रखें, यह रेखांश देवदत्त अयनांश का होना चाहिए। उसके आधार पर इस अध्याय के अन्त में दी गई सारणी से जन्मकाल की प्रत्यन्तर्दशा निकाल लें।

(ii) अब देखें कि लग्न की राशि दिवाबली है या रात्रिबली? यदि जन्म दिन में हुआ हो और लग्न की राशि दिवाबली है तो प्रायः निश्चित जानिए कि प्रत्यन्तर्दशानाथ लग्नेश ही होंगे। इसी प्रकार रात्रि में हुए जन्म के लिए लग्न की राशि रात्रिबली हो तो लग्नेश का जन्मकाल का प्रत्यन्तर्दशानाथ होना प्रायः निश्चित होता है। दिवाबली राशियाँ हैं–सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ तथा मीन। मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, धनु तथा मकर रात्रिबली माने गए हैं।

(iii) यदि लग्नेश लग्न भाव से सिदृयु (PAC) द्वारा सम्बन्ध बनाएँ तब भी लग्नेश के जन्मकाल के प्रत्यन्तर्दशानाथ होने की सम्भावना बहुत अधिक हो जाती है। यह हमें भाव कुण्डली में देखना चाहिए।

(iv) लग्न या लग्नेश पुष्कर नवांश में पड़ें–अर्थात् सूर्य, चन्द्र, शुक्र या गुरु के नवांश में हो तो भी बली समझे जाते हैं।

(v) बली लग्नेश यदि षड्बल में भी बली हो तो जन्मकाल की प्रत्यन्तर्दशा लग्नेश की होनी चाहिए। लग्नेश कब बली कहा जाएगा, इस पर चर्चा पहले ही की जा चुकी है।

स्वामीजी के सिद्धान्त को हम दो उदाहरणों के द्वारा समझेंगे। सबसे पहले तो ऐसी कुण्डली पर यह सिद्धान्त लगा कर देखना चाहिए जहाँ जन्म के समय को लेकर विवाद न हो। स्वामीजी इसके लिए स्वतंत्र भारत की कुण्डली पर अपने सूत्रों का प्रयोग करके बताते हैं। यह तो निर्विवाद सत्य है कि गुलामी की ज़ंजीरें भारत माता के पैरों से 14/15 अगस्त, सन् 1947 की मध्यरात्रि को काटी गईं। उस समय लग्न था वृषभ और चन्द्रमा कर्क में थे।

उदाहरण 1. अब हम पूर्व लिखित सिद्धान्तों की परीक्षा करेंगे। अध्याय 6 में दी गई कुण्डली 6.4 देखिए।

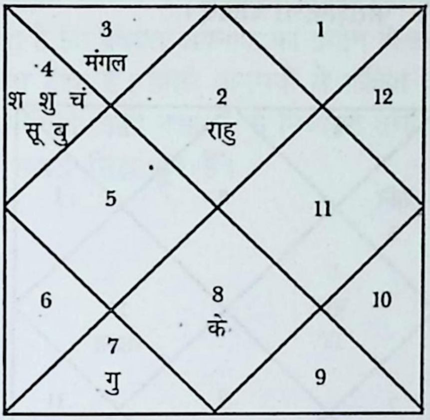

स्वतन्त्र भारत की कुण्डली-6.4

(i) चन्द्रमा का रेखांश चित्रपक्ष अयनांश के अनुसार $3^s3^0 58' 47''$ है। इसमें $22' 37''$ ज़ोड़कर हम देवदत्त रेखांश निकालते हैं। अर्थात् देवदत्त रेखांश हुआ $3^s4^0 21' 24''$ अब इस अध्याय के अन्त में सारिणी के अनुसार चन्द्रमा कर्क, वृश्चिक या मीन राशियों में $4^0 05' 23.33''$ से लेकर $4^0 26' 30''$ तक हो तो शनि की महादशा में शनि की अन्तर्दशा तथा शुक्र की प्रत्यन्तर्दशा होगी। अर्थात् प्रत्यन्तर्दशा नाथ हुए–शुक्र।

(ii) लग्न की राशि है–वृषभ। वृषभ रात्रिबली राशि है। स्वतंत्र भारत का जन्म मध्यरात्रि में हुआ। अतः लग्नेश के प्रत्यन्तर्दशानाथ होने की सम्भावना सर्वाधिक हो जाती है।

(iii) यदि भारतवर्ष की भाव कुण्डली देखें तो बड़ा आश्चर्य लगेगा कि गुरु सप्तम भाव तथा शुक्र चतुर्थ भाव में पड़ जाते हैं। गुरु की दृष्टि लग्न पर पड़ती है तथा लग्नेश चतुर्थ भाव में दिग्बली हो जाते हैं।

(iv) लग्न पुष्कर नवांश में है क्योंकि नवांश लग्न मीन राशि है।

इस प्रकार लग्न और लग्नेश–दोनों बली हैं। अब हम चन्द्र लग्न की विवेचना करते हैं। चन्द्रमा कर्क राशि में बैठा है जो रात्रिबली तथा चन्द्रमा की स्वराशि है। नवांश में भी चन्द्रलग्न पुष्कर नवांश में, सिंह राशि में आ जाता है। इसलिए चन्द्र-लग्न भी महत्वपूर्ण है किन्तु उसका महत्व जन्म लग्न के बाद ही आता है। सम्यक् विवेचना से हम देखते हैं कि भारतवर्ष की कुण्डली में जन्म काल के प्रत्यन्तर्दशानाथ लग्नेश ही हैं। इस प्रकार इस सिद्धान्त की सत्यता सिद्ध होती है।

अब लगे हाथों जन्मकाल शुद्धि का भी एक उदाहरण देख लेते हैं। नीचे दी

गई कुण्डली संख्या–1. परिशिष्ट-II देखिए।

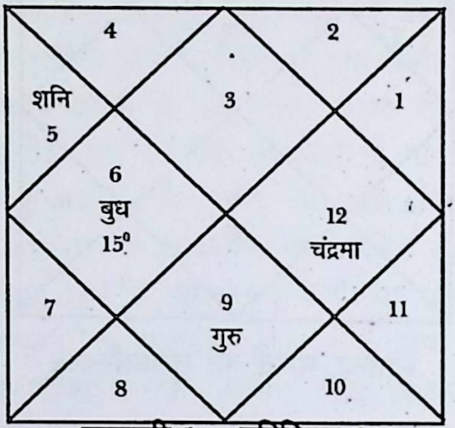

कुण्डली-1 : परिशिष्ट-2

उदाहरण-2

जातक का जन्म रात्रि 9.30 बजे बताया गया। तब चन्द्रमा का चित्रपक्षीय रेखांश था $11^{s}26^{0}12'$। इसे हम देवदत्त रेखांश में बदल देते हैं। अर्थात् चन्द्रमा का रेखांश हुआ ($11^{s}26^{0}12'+37'22''$) $11^{s}26^{0}49'22''$। अब देखिए सारिणी के आधार पर जन्मकालीन दशा बुध/गुरु/शनि की आती है। लेकिन कुण्डली में विशेष बातें ये हैं कि जन्म रात्रि में हुआ। लग्न की राशि मिथुन रात्रि-बली राशि है। लग्नेश स्वयं उच्च का है तथा पुष्कर नवांश में है। अतः प्रत्यन्तर्दशा लग्नेश बुध की ही होनी चाहिए। बुध का प्रत्यन्तर शुरू होता है–चन्द्रमा के रेखांश $11^{s}26^{0}52'53.33''$ आने पर। अर्थात् बताया गया रेखांश $11^{s}26^{0}49'22''$ सही रेखांश से ($11^{s}26^{0}52'53.33''$- $11^{s}26^{0}49'22''$ = $3'31.33''$) पीछे है। अब पंचांग या एफिमेरी से उस दिन का चन्द्र चार देखिए। उस दिन चन्द्रमा का दैनिक चार था $11^{\circ}48'$ अर्थात् 24 घन्टों में चन्द्रमा $11^{0}48'=378'$ चलें। अतः $3'37.33''$ चलने के लिए समय लगेगा $24 \times 60 \times 3'37.33''\ 3 \div 378' = 13.799$ मिनट = 13 मिनट 48 सेकेंड की वृद्धि हुई अर्थात् सही जन्मकाल हुआ 9:30 + 0:13:48 = 9:43:48 रात्रि।

इस प्रकार सदाशिव गिरि द्वारा बताए गए सिद्धान्त से जन्मकाल शुद्धि

सम्भव है। यद्यपि उन्होंने फलित के लिए भी देवदत्त अयनांश की संस्तुति की है, फिर भी हमारा मत है कि देवदत्त अयनांश का प्रयोग फिलहाल जन्मकाल शुद्धि तक ही सीमित रखना ठीक है। हमारे अनुभवों से फलित के लिए तो चित्रपक्ष अयनांश विंशोत्तरी, योगिनी आदि दशाओं के निर्धारण तथा अन्य योग आदि के निरूपण में अधिक सफल सिद्ध हुए हैं।

❑

सारिणी परिशिष्ट II-1

चन्द्रमा के रेखांशों पर आधारित जन्मकालीन महा/अन्तर/प्रत्यन्तर दशायें

केतु महादशा दशा

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
00°00'00" से 00°46'40" तक
केतु अन्तरदशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
00 00 00	00 02 43.33	केतु
00 02 43.33	00 02 43.33	शुक्र
00 10 30	00 12 50	सूर्य
00 12 50	00 16 43.33	चंद
00 16 43.33	00 19 26.67	मंगल
00 19 26.67	00 26 26.67	राहु
00 26 26.67	00 32 40	गुरू
00 32 40	00 40 03.33	शनि
00 40 03.33	00 46 40	बुध

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
00°46'40" से 03°00'00" तक
शुक्र अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
00 46 40	01 08 53.33	शुक्र
01 08 53.33	01 15 33.33	सूर्ग
01 15 33.33	01 26 40	चंद्र
01 26 40	01 34 26.67	मंगल
01 32 26.67	00 54 26.67	राहु
01 54 26.67	02 12 13.33	गुरू
02 13 33	02 33 20	शनि
02 33 20	02 52 13.33	बुध
02 52 13.33	03 00 00	केतु

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
03°00'00" से 03°40'00" तक
सूर्य अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
03 00 00	03 02 00	सूर्य
03 02 00	03 05 00	चंद्र
03 05 20	03 07 40	मंगल
03 07 40	03 13 40	राहु
03 13 40	03 19 00	गुरू
03 19 00	03 25 20	शनि
03 25 20	03 31 00	बुध
03 31 00	03 33 20	केतु
03 33 20	03 40 00	शुक्र

केतु महादशा दशा

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
03°40'00" से 04°46'40" तक
चन्द्र अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
03 40 00	03 45 33.33	चन्द्र
03 45 33.33	03 49 26.67	मंगल
03 49 26.67	03 59 26.67	राहु
03 59 26.67	04 08 20	गुरु
04 08 20	04 18 53.33	शनि
04 18 53.53	04 28 20	बुध
04 28 20	04 32 13.33	केतु
04 32 13.33	04 43 20	शुक्र
04 43 20	04 46 40	सूर्य

चन्द्र मेष, सिंह एव धनु मे
04°46'40" से 05°33'20" तक
मंगल अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
04 46 40	04 49 23.33	मंगल
04 49 23.33	04 56 23.33	राहु
04 56 23.33	05 02 36.67	गुरु
05 02 36.67	05 10 00	शनि
05 10 00	05 16 36.67	बुध
05 16 36.67	05 19 20	केतु
05 19 20	05 27 06.67	शुक्र
05 27 06.67	05 29 26.67	सूर्य
05 29 26.67	05 33 20	चंद्र

चन्द्र मेष, सिंह एव धनु मे
05°33'20" से 07°33'20" तक
राहु अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
05 33 20	05 51 20	राहु
05 51 20	06 07 20	गुरु
06 07 20	06 26 20	शनि
06 26 20	06 43 20	बुध
06 43 20	06 50 20	केतु
06 50 20	07 10 20	शुक्र
07 10 20	04 46 40	सूर्य
07 16 20	07 26 20	चन्द्र
07 26 20	07 33 20	मंगल

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
07°33'20" रो 09°20'00" तक
गुरु अन्तर दशा में

स	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
07 33. 20	07 47 33.33	गुरु
07 47 33.33	08 04 26.67	शनि
08 04 26.67	08 19 33.33	बुध
08 19 33.33	08 25 46.67	केतु
08 25 46.67	08 43 33.33	शुक्र
08 43 33.33	08 48 53.33	सूर्य
08 48 53.33	08 57 46.67	चन्द्र
08 57 46.67	09 04 00	मंगल
09 04 00	09 20 00	राहु

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
09°20'00" से 11°26'40" तक
शनि अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
09 20 00	09 40 03.33	शनि
09 40 03.33	09 58 00	बुध
09 58 00	10 05 23.33	केतु
10 05 23.33	10 26 30	शुक्र
10 26 30	10 32 50	सूर्य
10 32 50	10 43 23.33	चन्द्र
10 43 23.33	10 50 46.67	मंगल
10 50 46.67	11 09 46.67	राहु
11 09 46.67	11 26 40	गुरु

चन्द्र मेष, सिंह एव धनु मे
11°26'40" से 13°20'00" तक
बुध अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
11 26 40	11 42 43.33	बुध
11 42 43.33	11 49 20	केतु
11 49 20	12 08 13.33	शुक्र
12 08 13.33	12 13 53.33	सूर्य
12 13 53.33	12 23 20	चन्द्र
12 23 20	12 29 56.67	मगल
12 29 56.67	12 46 56.67	राहु
12 46 56.67	13 02 03.33	गुरु
13 02 03.33	13 20 00	शनि

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
13°20'00" से 15°33'20" तक
शुक्र अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
13 20 00	13 42 13.33	शुक्र
13 42 13.33	13 48 53.33	सूर्य
13 48 53.33	14 00 00	चन्द्र
14 00 00	14 07 46.67	मंगल
14 07 46.67	14 27 46.67	राहु
14 27 46.67	14 45 33.33	गुरु
14 45 33.33	15 06 40	शनि
15 06 40	15 25 33.33	बुध
15 25 33.33	15 33 20	केतु

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
15°33'20" से 16°13'20" तक
सूर्य अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
15 33 20	15 35 20	सूर्य
15 35 20	15 38 40	चन्द्र
15 38 40	15 41 00	मंगल
15 41 00	15 47 00	राहु
15 47 00	15 52 20	गुरु
15 52 20	15 58 40	शनि
15 58 40	16 04 20	बुध
16 04 20	16 06 40	केतु
16 06 40	16 13 20	शुक्र

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
16°13'20" से 17°20'00" तक
चन्द्र अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
16 13 20	16 18 53.33	चन्द्र
16 18 53.33	16 22 46.67	मंगल
16 22 46.67	16 32 46.67	राहु
16 32 46.67	16 41 40	गुरु
16 41 40	16 52 13.33	शनि
16 52 13.33	17 01 40	बुध
17 01 40	17 05 33.33	केतु
17 05 33.33	17 16 40	शुक्र
17 16 40	17 20 00	सूर्य

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
17°20'00" से 18°06'40" तक
मंगल अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
17 20. 00	17 22 43.33	मंगल
17 22 43.33	17 29 43.33	राहु
17 29 43.33	17 35 56.67	गुरु
17 35 56.67	17 43 20	शनि
17 43 20	17 49 56.67	बुध
17 49 56.67	17 52 40	केतु
17 52 40	18 00 26.67	शुक्र
18 00 26.67	18 02 46.67	सूर्य
18 02 46.67	18 06 40	चन्द्र

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
18°06'40" से 20°06'40" तक
राहु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
18 06 40	18 24 40	राहु
18 24 40	18 40 40	गुरु
18 40 40	18 59 40	शनि
18 59 40	19 16 40	बुध
19 16 40	19 23 40	केतु
19 23 40	19 43 40	शुक्र
19 43 40	19 49 40	सूर्य
19 49 40	19 59 40	चन्द्र
19 59 40	20 06 40	मंगल

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में
20°06'40" से 21°53'20" तक
गुरु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
20 06 40	20 20 53.33	गुरु
20 20 53.33	20 37 46.67	शनि
20 37 46.67	20 52 53.33	बुध
20 52 53.33	20 59 06.67	केतु
20 59 06.67	21 16 53.33	शुक्र
21 16 53.33	21 22 13.33	सूर्य
21 22 13.33	21 31 06.67	चन्द्र
21 31 06.67	21 37 20	मंगल
21 37 20	21 53 20	राहु

शुक्र महादशा

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में

21°53'20" से 24°00'00" तक

शनि अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	अन्तर
21 53 20	22 13 23.33	शनि
22 13 23.33	23 31 20	बुध
23 31 20	22 38 43.33	केतु
22 38 43.33	23 59 50	शुक्र
23 59 50	23 06 10	सूर्य
23 06 10	23 16 43.33	चन्द्र
23 16 43.33	23 24 06.67	मंगल
23 24 06.67	23 43 06.67	राहु
23 43 06.67	24 00 00	गुरु

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में

24°00'00" से 25°53'20" तक

बुध अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	अन्तर
24 00 00	24 16 03.33	बुध
24 16 03.33	24 22 40	केतु
24 22 40	24 41 33.33	शुक्र
24 41 33.33	24 47 13.33	सूर्य
24 47 13.33	24 56 40	चन्द्र
24 56 40	25 03 16.67	मंगल
25 03 16.67	25 20 16.67	राहु
25 20 16.67	25 35 23.33	गुरु
25 35 23.33	25 53 20	शनि

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में

25°53'20" से 26°40'00" तक

केतु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
25 53 20	26 56 03.33	केतु
26 56 03.33	26 03 50	शुक्र
26 03 50	26 06 10	सूर्य
26 06 10	26 10 03.33	चन्द्र
26 10 03.33	26 12 46.67	मंगल
26 12 46.67	26 19 46.67	राहु
26 19 46.67	26 26 00	गुरु
26 26 00	26 33 23.33	शनि
26 33 23.33	26 40 00	बुध

सूर्य महादशा

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में

26°40'00" से 27°20'00" तक

सूर्य अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
26 40. 00	26 42 00.	सूर्य
26 42 00	26 45 20	चन्द्र
26 45 20	26 47 40	मंगल
26 47 40	26 53 40	राहु
26 53 40	26 59 00	गुरु
26 59 00	27 05 20	शनि
27 05 20	27 11 00	बुध
27 11 00	27 13 20	केतु
27 13 20	27 20 00	शुक्र

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में

27°20'00" से 28°26'40" तक

चन्द्र अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
27 20 00	27 25 33.33	चन्द्र
27 25 33.33	27 29 26.67	मंगल
27 29 26.67.	27 39 26.67	राहु
27 39 26.67	27 48 20	गुरु
27 48 20	27 58 53.33	शनि
27 58 53.33	28 08 20	बुध
28 08 20	28 12 13.33	केतु
28 12 13.33	28 23 20	शुक्र
28 23 20	28 26 40	सूर्य

चन्द्र मेष, सिंह एवं धनु में

28°26'40" से 29°13'20" तक

मंगल अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
28 26 40	28 29 23.33	मंगल
28 29 23.33	28 36 23.33	राहु
28 36 23.33	28 42 36.67	गुरु
28 42 36.67	28 50 00	शनि
28 50 00	28 56 36.67	बुध
28 56 36.67	28 59 20	केतु
28 59 20	29 07 06.67	शुक्र
29 07 06.67	29 09 26.67	सूर्य
29 09 26.67	29 13 20	चन्द्र

सूर्य महादशा

मेष, सिंह एवं धनु में 29°13'20" से
वृषभ, कन्या और मकर में 01°13'20" तक
राहु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
29 13 20	29 31 20	राहु
29 31 20	29 47 20	गुरु
29 47 20	30 00 00	शनि
	चन्द्र वृषभ, कन्या और मकर में	
00 00 00	00 06 20	शनि
00 06 20	00 23 20	बुध
00 23 20	00 30 20	केतु
00 30 20	00 50 20	शुक्र
00 50 20	00 56 20	सूर्य
00 56 20	01 06 20	चन्द्र
01 06 20	01 13 20	मंगल

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर में
01°13'20" से 03°00'00" तक
गुरु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
01 13 20	01 27 23.33	गुरु
01 27 23.33	01 44 26.67	शनि
01 44 26.67	01 59 33.33	बुध
01 59 33.33	02 05 46.67	केतु
02 05 46.67	02 23 33.33	शुक्र
02 23 33.33	02 28 53.33	सूर्य
02 28 53.33	02 37 46.67	चन्द्र
02 37 46.67	02 44 00	मंगल
02 44 00	03 00 00	राहु

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर में
03°00'00" से 05°06'40" तक
शनि अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
03 00 00	03 20 03.33	शनि
03 20 03.33	03 38 00	बुध
03 38 00	03 45 23.33	केतु
03 45 23.33	04 06 30	शुक्र
04 06 30	04 12 50	सूर्य
04 12 50	04 23 23.33	चन्द्र
04 23 23.33	04 30 46.67	मंगल
04 30 46.67	04 49 46.67	राहु
04 49 46.67	05 06 40	गुरु

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर में
05°06'40" से 07°00'00" तक
बुध अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
05 06. 40	05 22 43.33	बुध
05 22 43.33	05 29 20	केतु
05 29 20	05 48 13.33	शुक्र
05 48 13.33	05 53 53.33	सूर्य
05 53 53.33	06 03 20	चन्द्र
06 03 20	06 09 56.67	मंगल
06 09 56.67	06 26 56.67	राहु
06 26 56.67	06 42 03.33	गुरु
06 42 03.33	07 00 00	शनि

चन्द्र वृषभ, कन्या एव मकर मे
07°00'00" से 07°46'40" तक
केतु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
07 00 00	07 02 43.33	केतु
07 02 43.33	07 10 30	शुक्र
27 29 26.67	07 12 50	सूर्य
07 12 50	07 16 43.33	चन्द्र
07 16 43.33	07 19 26.67	मंगल
07 19 26.67	07 26 26.67	राहु
07 26 26.67	07 32 40	गुरु
07 32 40	07 40 03.33	शनि
07 40 03.33	07 46 40	बुध

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर में
07°46'40" से 10°00'00" तक
शुक्र अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
07 46 40	08 08 53.33	शुक्र
08 08 53.33	08 15 33.33	सूर्य
08 15 33.33	08 26 40	चन्द्र
08 26 40	08 34 26.67	मंगल
08 34 26.67	08 54 26.67	राहु
08 54 26.67	09 12 13.33	गुरु
09 12 13.33	09 32 20	शनि
09 32 20	09 52 13.33	बुध
09 52 13.33	10 00 00	केतु

चंद्रमा वृषभ, कन्या एवं मकर में
10°00'00" से 11°06'40" तक
चन्द्र अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
10 00 00	10 05 33.33	चन्द्र
10 05 33.33	10 09 26.67	मंगल
10 09 26.67	10 19 26.67	राहु
10 19 26.67	10 28 20	गुरु
10 28 20	10 38 53.33	शनि
10 38 53.33	10 48 20	बुध
10 48 20	10 52 13.33	केतु
10 52 13.33	11 03 20	शुक्र
11 03 20	11 06 40	सूर्य

चंद्रमा वृषभ, कन्या एवं मकर में
11°06'40" से 11°53'20" तक
मंगल अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
11 06 40	11 09 23.33	मंगल
11 09 23.33	11 16 23.33	राहु
11 16 23.33	11 22 36.67	गुरु
11 22 36.67	11 30 00	शनि
11 30 00	11 36 36.67	बुध
11 36 36.67	11 39 20	केतु
11 39 20	11 47 06.67	शुक्र
11 47 06.67	11 49 26.67	सूर्य
11 49 26.67	11 53 20	चन्द्र

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर में
11°53'20" से 13°53'20" तक
राहु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
11 53 20	12 11 20	राहु
12 11 20	12 27 20	गुरु
12 27 20	12 46 20	शनि
12 46 20	13 03 20	बुध
13 03 20	13 10 20	केतु
13 10 20	13 30 20	शुक्र
13 30 20	13 36 20	सूर्य
13 36 20	13 46 20	चन्द्र
13 46 20	13 53 20	मंगल

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर में
13°53'20" से 15°40'00" तक
गुरु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
13 53 20	14 07 33.33	गुरु
14 07 33.33	14 24 26.67	शनि
14 24 26.67	14 39 33.33	बुध
14 39 33.33	14 45 46.67	केतु
14 45 46.67	15 03 33.33	शुक्र
15 03 33.33	15 08 53.33	सूर्य
15 08 53.33	15 17 46.67	चंन्द्र
15 17 46.67	15 24 00	मंगल
15 24 00	15 40 00	राहु

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर मे
15°40'00" से 17°46'40" तक
शनि अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
15 40 00	16 00 03.33	शनि
16 00 03.33	16 18 00	बुध
16 18 00	16 25 23.33	केतु
16 25 23.33	16 46 30	शुक्र
16 46 30	16 52 50	सूर्य
16 52 50	17 03 23.33	चन्द्र
17 03 23.33	17 10 46.67	मंगल
17 10 46.67	17 29 46.67	राहु
17 29 46.67	17 46 40	गुरु

चन्द्र वृषभ, सिंह एवं धनु में
17°46'40" से 19°40'00" तक
बुध अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
17 46 40	18 02 43.33	बुध
18 02 43.33	18 09 20	केतु
18 09 20	18 28 13.33	शुक्र
18 28 13.33	18 33 53.33	सूर्य
18 33 53.33	18 43 20	चन्द्र
18 43 20	18 49 56.67	मंगल
18 49 56.67	19 06 56.67	राहु
19 06 56.67	19 22 03.33	गुरु
19 22 03.33	19 40 00	शनि

चन्द्र महादशा

चंद्रमा वृषभ, कन्या एवं मकर में
19°40'00" से 20°26'40" तक
केतु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
19 40 00	19 42 43.33	केतु
19 42 43.33	19 50 30	शुक्र
19 50 30	19 52 50	सूर्य
19 52 50	19 56 43.33	चन्द्र
19 56 43.33	19 59 26.67	मंगल
19 59 26.67	20 06 26.67	राहु
20 06 26.67	20 12 40	गुरु
20 12 40	20 20 03.33	शनि
20 20 03.33	20 26 40	बुध

चंद्रमा वृषभ, कन्या एवं मकर में
20°26'40" से 22°40'00" तक
शुक्र अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
20 26 40	20 48 53.33	शुक्र
20 48 53.33	20 55 33.33	सूर्य
20 55 33.33	21 06 40	चन्द्र
21 06 40	21 14 26.67	मंगल
21 14 26.67	21 34 26.67	राहु
21 34 26.67	21 52 13.33	गुरु
21 52 13.33	22 13 20	शनि
22 13 20	22 32 13.33	बुध
22 32 13.33	22 40 00	केतु

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर में
22°40'00" से 23°20'00" तक
सूर्य अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
22 40 00	22 42 00	सूर्य
22 42 00	22 45 20	चन्द्र
22 45 20	22 47 40	मंगल
22 47 40	22 53 40	राहु
22 53 40	22 59 00	गुरु
22 59 00	23 05 20	शनि
23 05 20	23 11 00	बुध
23 11 00	23 13 20	केतु
23 13 20	23 20 00	शुक्र

मंगल महादशा

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर में
23°20'00" से 24°06'40" तक
मंगल अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
23 20 00	23 22 43.33	मंगल
23 22 43.33	23 29 43.33	राहु
23 29 43.33	23 35 56.67	गुरु
23 35 56.67	23 43 20	शनि
23 43 20	23 49 59.67	बुध
23 49 59.67	23 52 40	केतु
23 52 40	24 00 26.67	शुक्र
24 00 26.67	24 02 46.67	सूर्य
24 02 46.67	24 06 40	चन्द्र

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर में
24°06'40" से 26°06'40" तक
राहु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
24 06 40	24 24 40	राहु
24 24 40	24 40 40	गुरु
24 40 40	24 59 40	शनि
24 59 40	25 16 40	बुध
25 16 40	25 23 40	केतु
25 23 40	25 43 40	शुक्र
25 43 40	25 49 40	सूर्य
25 49 40	25 59 40	चन्द्र
25 59 40	26 06 40	मंगल

चन्द्र वृषभ, कन्या एवं मकर में
26°06'40" से 27°53'20" तक
गुरु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
26 06 40	26 20 53.33	गुरु
26 20 53.33	26 37 46.67	शनि
26 37 46.67	26 52 53.33	बुध
26 52 53.33	26 59 06.67	केतु
26 59 06.67	27 16 53.33	शुक्र
27 16 53.33	27 22 13.33	सूर्य
27 22 13.33	27 31 06.67	चन्द्र
27 31 06.67	27 37 20	मंगल
27 37 20	27 53 20	राहु

मंगल महा दशा

चंद्रमा वृषभ, कन्या एवं मकर में
27°53'20" से 30°00'00" तक
शनि अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
27 53 20	28 13 23.33	शनि
28 13 23.33	28 31 20	बुध
28 31 20	28 38 43.33	केतु
28 38 43.33	28 59 50	शुक्र
28 59 50	29 06 10	सूर्य
29 06 10	29 16 43.33	चन्द्र
29 16 43.33	29 24 06.67	मंगल
29 24 06.67	29 43 06.67	राहु
29 43 06.67	30 00 00	गुरु

चंद्रमा मिथुन, तुला एवं कुंभ में
00°00'00" से 01°53'20" तक
बुध अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
00 00 00	00 16 03.33	बुध
00 16 03.33	00 22 40	केतु
00 22 40	00 41 33.33	शुक्र
00 41 33.33	00 47 13.33	सूर्य
00 47 13.33	00 56 40	चन्द्र
00 56 40	01 03 16.67	मंगल
01 03 16.67	01 20 16.67	राहु
01 20 16.67	01 35 23.33	गुरु
01 35 23.33	01 53 20	शनि

चन्द्र मिथुन, तुला एवं कुंभ में
01°53'20" से 02°40'00" तक
केतु अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
01 53 20	01 56 03.33	केतु
01 56 03.33	02 03 50	शुक्र
02 03 50	02 06 10	सूर्य
02 06 10	02 10 03.33	चन्द्र
02 10 03.33	02 12 46.67	मंगल
02 12 46.67	02 19 46.67	राहु
02 19 46.67	02 26 00	गुरु
02 26 00	02 33 23.33	शनि
02 33 23.33	02 40 00	बुध

चन्द्र मिथुन, तुला एवं कुंभ में
02°40'00" से 04°53'20" तक
शुक्र अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
02 40 00	03 02 13.33	शुक्र
03 02 13.33	03 08 53.33	सूर्य
03 08 53.33	03 20 00	चन्द्र
03 20 00	03 27 46.67	मंगल
03 27 46.67	03 47 46.67	राहु
03 47 46.67	04 05 33.33	गुरु
04 05 33.33	04 26 40	शनि
04 26 40	04 45 33.33	बुध
04 45 33.33	04 53 20	केतु

चंद्रमा मिथुन, तुला एवं कुंभ में
04°53'20" से 05°33'20" तक
सूर्य अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
04 53 20	04 55 20	सूर्य
04 55 20	04 58 40	चन्द्र
04 58 40	05 01 00	मंगल
05 01 00	05 07 00	राहु
05 07 40	05 12 20	गुरु
05 12 20	05 18 40	शनि
05 18 40	05 24 20	बुध
05 24 20	05 26 40	केतु
05 26 40	05 33 20	शुक्र

चन्द्र मिथुन, तुला एवं कुंभ में
05°33'20" से 06°40'00" तक
चन्द्र अन्तर दशा में

से	तक	प्रत्यन्तर
° ' "	° ' "	
05 33 20	05 38 53.33	चन्द्र
05 38 53.33	05 42 46.67	मंगल
05 42 46.67	05 52 46.67	राहु
05 52 46.67	06 01 40	गुरु
05 52 46.67	06 12 13.33	शनि
06 12 13.33	06 21 40	बुध
06 21 40	06 25 33.33	केतु
06 25 33.33	06 36 40	शुक्र
06 36 40	06 40 00	सूर्य

राहु महा दशा

चंद्रमा मिथुन, तुला एवं कुंभ में
06°40'00" से 08°40'00" तक
राहु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
06 40 00	06 58 00	राहु
06 58 00	07 14 00	गुरु
07 14 00	07 33 00	शनि
07 33 00	07 50 00	बुध
07 50 00	07 57 00	केतु
07 57 00	08 17 00	शुक्र
08 17 00	08 23 00	सूर्य
08 23 00	08 33 00	चन्द्र
08 33 00	08 40 00	मंगल

चंद्रमा मिथुन, तुला एवं कुंभ में
08°40'00" से 10°26'40" तक
गुरु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
08 40 00	08 54 13.33	गुरु
08 54 13.33	09 11 06.67	शनि
09 11 06.67	09 26 13.33	बुध
09 26 13.33	09 32 26.67	केतु
09 32 26.67	09 50 13.33	शुक्र
09 50 13.33	09 55 33.33	सूर्य
09 55 33.33	10 04 26.67	चन्द्र
10 04 26.67	10 10 40	मंगल
10 10 40	10 26 40	राहु

चंद्रमा मिथुन, तुला एवं कुंभ में
10°26'40" से 12°33'20" तक
शनि अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
10 26 40	10 46 43.33	शनि
10.46 43.33	11 04 40	बुध
11 04 40	11 12 03.33	केतु
11 12 03.33	11 33 10	शुक्र
11 33 10	11 39 30	सूर्य
11 39 30	11 50 03.33	चन्द्र
11 50 03.33	11 57 26.67	मंगल
11 57 26.67	12 16 26.67	राहु
12 16 26 67	12 33 20	गुरु

चंद्रमा मिथुन, तुला एवं कुंभ में
12°33'20" से 14°26'40" तक
बुध अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
12 33 20	12 49 22.33	बुध
12 49 22.33	12 56 00	केतु
12 56 00	13 14 53.33	शुक्र
13 14 53.33	13 20 33.33	सूर्य
13 20 33.33	13 30 00	चन्द्र
13 30 00	13 36 36.67	मंगल
13 36 36.67	13 53 36.67	राहु
13 53 36.67	14 08 43.33	गुरु
14 08 43.33	14 26 40	शनि

चंद्रमा मिथुन, तुला एवं कुंभ में
14°26'40" से 15°13'20" तक
केतु अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
14 26 40	14 29 23.33	केतु
14 29 23.33	14 37 10	शुक्र
14 37 10	14 39 30	सूर्य
14 39 30	14 43 23.33	चन्द्र
14 43 23.33	14 46 06.67	मंगल
14 46 06.67	14 53 06.67	राहु
14 53 06.67	14 59 20	गुरु
14 59 20	15 06 43	शनि
15 06 43	15 13 20	बुध

चन्द्र मिथुन, तुला एवं कुंभ में
15°13'20" से 17°26'40" तक
शुक्र अन्तर दशा में

से ° ' "	तक ° ' "	प्रत्यन्तर
15 13 20	15 35 33.33	शुक्र
15 35 33.33	15 42 13.33	सूर्य
15 42 13.33	15 53 20	चन्द्र
15 53 20	16 01 06.67	मंगल
16 01 06.67	16 21 06.67	राहु
16 21 06.67	16 38 53.33	गुरु
16 38 53.33	17 00 00	शनि
17 00 00	17 18 53.33	बुध
17 18 53.33	17 26 40	केतु

पुस्तक के बारे में

- ज्योतिष शास्त्र में गोचर विषय पर लिखी गयी पहली पुस्तक जिसमें लेखक के वर्षों पढ़ाने के अनुभव का निचोड़ है।
- क्रमवार ढंग तथा उदाहरणों के माध्यम से गोचर की अनूठी और सही व्याख्या।
- प्राचीन सिद्धान्तों को आधार मान कर वर्तमान काल में गोचर की अचूक उपयोगिता।
- गोचर का वर्गों में प्रयोग—एक अद्वितीय विधि।
- समुदाय अष्टक वर्ग और सर्वाष्टक वर्ग के सूक्ष्म भेद तथा गोचर के अभिनव प्रयोग।
- अष्टक वर्ग में गोचर देखकर 'दिन कैसा बीतेगा' बताने में प्रवीणता आदि–आदि अनेक व्यावहारिक उपयोगों पर मौलिक पुस्तक।

कर्नल अशोक कुमार गौड़

अवकाश प्राप्त भारतीय सेना के अधिकारी। भारतीय विद्या भवन के ज्योतिष संकाय के अवैतनिक अध्यापक पिछले नौ वर्षों से। प्रोफेशन (व्यवसाय) विषय पर अनूठी शोधपरक पुस्तक के रचयिता।

ALPHA

एल्फा पब्लिकेशन

दिल्ली